सुधार
★
मन्मथनाथ गुप्त

८४६

मनोवैज्ञानिक उपन्यास

सुधार

लेखक
मन्मथनाथ गुप्त

कि ता ब म ह ल

इलाहाबाद

—१—

अरिन्दम एक भाग्यान्वेषी की भाँति इस शहर में आया था। बिलकुल अकेला। हाँ, उसके साथ उसका नाम था, यह नाम एक प्रतिष्ठित साहित्यिक तथा पर्यटक का नाम था। उसकी लिखी हुई चीज़ों को लोग या तो खूब पसन्द करते थे या ख़ूब नापसन्द, उसके व्यक्ति का भी यही हाल था, अरिन्दम के सम्बन्ध में बीच का पथ या मत कोई नहीं ले सकता था। एशियाई देशों में सुदीर्घ प्रवास के बाद अरिन्दम ने काशी को क्यों पसन्द किया था यह समझना मुश्किल था, अरिन्दम के मन में कोई धार्मिक भाव भी अब नहीं थे, न तो काशी उसकी जन्मभूमि थी, और न उसका कोई परिचित ही वहाँ पर था। शायद इन्हीं प्रतिकूल कारणों से काशी ने उसे आकर्षित किया। जब उसने यह तय किया कि काशी में वह रहेगा तो उसके लिये एक समस्या यह हुई कि वह कहाँ पर रहेगा। होटलों का उसे ख़ूब तजर्बा था, वहाँ के प्राणहीन वातावरण के लिये उसके दिल में घृणा थी। वह किसी परिवार में रहना चाहता था, किन्तु उसकी तरह उग्र सामाजिक विचारवाले व्यक्ति के लिये किसी मामूली दकियानूसी परिवार में खपने का अवकाश न था, फिर कोई परिवार भी तो परिचित न था। अन्त में जाकर उसकी जान-पहिचान में ढङ्ग का एक व्यक्ति निकल आया नरेन्द्र।

नरेन्द्र एक बड़े परिवार का सदस्य था, किन्तु रोज़गार के कारण काशी में रहता था। क़रीब-क़रीब निर्बान्धव था। बनारस में उसकी जान-पहिचान कुछ कम नहीं थी, किन्तु फिर भी उसकी किसी से घनिष्ठता

नहीं थी। उसके साथ उसका बड़ा भाई वीरेन्द्र भी था। दोनों मिलकर होज़री की दूकान का काम चलाते थे। दोनों भाई में से कोई अवसर पाकर खाना पका लेता था, जब यह संभव नहीं होता था तो होटल से खाना आ जाता था, या हलवाई की दूकान से पूड़ियाँ आ जाती थीं। दोनों भाई भद्रता की प्रतिमूर्ति थे, शराफत उनके लिये वैसी ही थी जैसे बत्तख के लिये पानी। इनके जीवन में कोई जल्दी नहीं थी। इसी कारण उनके लिये नियम तथा समय कोई मूल्य नहीं रखता था, न तो उसकी उन्हें चाह थी, न ज़रूरत। यह बात अरिन्दम के लिये बड़ी असुविधाजनक थी, किन्तु वह इस अनिवार्य दिक्कत की परवाह नहीं करता था।

इसी स्त्रीहीन दो भाइयों के परिवार में आकर अरिन्दम शामिल हो गया। अरिन्दम के पास क़रीब-क़रीब कोई गृहस्थी के लिये ज़रूरी सामान नहीं था। हाँ, उसके पास कौतूहलजनक चीज़ों का एक अजायबघर ज़रूर था। इन दोनों भाइयों ने अरिन्दम को किसी चीज़ की कमी कभी महसूस नहीं होने दी। अरिन्दम इन दोनों भाइयों का विशेषकर छोटे भाई नरेन्द्र का बहुत ही जल्दी प्रियपात्र हो गया। अरिन्दम की सुन्दर तथा आन्तरिकतापूर्ण बातचीत ने, जो हमेशा एक नयापन लिये होती थी इनका मन मोह लिया। यह बात नहीं, उसके मधुर चरित्र ने ही उन पर जादू का काम किया।

नरेन्द्र तो अरिन्दम पर लट्टू हो गया, नरेन्द्र के साथ-साथ अरिन्दम ने बनारस की सड़कों, गलियों तथा आदमियों के साथ परिचय प्राप्त किया; किंतु जैसे माँ की गोद से तथा माँ के ज़रिये से ही बच्चा सारे जगत से परिचित होता है, फिर भी माँ तक ही अपने परिचय को सीमित नहीं रखता, उसी प्रकार अरिन्दम के परिचय का क्षेत्र नरेन्द्र तथा वीरेन्द्र से शुरू होकर उन्हीं के ही ज़रिये बढ़ता गया। नरेन्द्र को अरिन्दम बहुत अच्छा लगा था, इसलिये जब अरिन्दम के परिचय की धारा नरेन्द्र के ज़रिये से प्रवाहित न होकर बिलकुल स्वतंत्र

रूप से बहने लगी, यहाँ तक कि अरिन्दम अब बनारस की सड़कों को पहिचानकर उनपर अकेले तथा दूसरे साथियों के साथ घूमने लगा तब उसे कुछ बुरा लगा। यहाँ तक कि वह कुछ-कुछ यह अनुभव करने लगा कि अरिन्दम उसके साथ कुछ कृतघ्नता-सा कर रहा है।... इस बात को नरेन्द्र ने मन ही मन रक्खा, किंतु अरिन्दम इस बचपन भरे असन्तोष को जभी ताड़ पाता था तभी उसे पुचकार देता था। बस इतने से ही नरेन्द्र खिल जाता था और अपने अरिन्दम भैया के लिये सब कुछ करने को तैयार हो जाता था। वीरेन्द्र ज़रा दूर-दूर रहता था किंतु अरिन्दम के लिये उसके दिल में अगाध श्रद्धा थी।

अरिन्दम के परिचय का क्षेत्र धीरे-धीरे बढ़ने लगा। साहित्यिक,कवि, कवयित्री सभी तरह के लोगों से उसका परिचय होने लगा। अरिन्दम का बैठका धीरे-धीरे शहर की एक साहित्यगोष्ठी ही नहीं बल्कि जीवन-केन्द्र में परिणत हो गया। कुछ तो अरिन्दम के व्यक्तित्व, कुछ उसकी बात-चीत तथा क़िस्से, तथा कुछ उसकी अजीब-अजीब शोहरत तथा भ्रमण की कहानी से आकृष्ट होकर उसके पास आते थे जैसे मिठाई के पास चींटी आती हैं। इन आगन्तुकों में कुछ तरुणियाँ भी होती थीं। अरिन्दम के पास आनेवाले सब उसके पास टिक ही जाते थे यह बात नहीं, कुछ तो बिलकुल उससे निराश होकर चले जाते थे। ये लौटनेवाले आगन्तुक यह समझ नहीं पाते थे कि इस अरिन्दम में कौन-सी ऐसी बात है कि इतने व्यक्ति इसके इर्दगिर्द मँडराते हैं, आते-जाते हैं, क़द्र करते हैं। यह कोई बड़ा भारी साहित्यिक नहीं, धनी नहीं, नेता नहीं; फिर इसके पास इतने लोग क्यों आते-जाते हैं यह इन लोगों की समझ में नहीं आता था। अरिन्दम कोई सुन्दर व्यक्ति भी नहीं, वह उस उम्र को पार कर चुका था या कर ही रहा था जब यह समझा जाता है कि पुरुष की आकर्षण शक्ति पराकाष्ठा पर होती है, फिर भी कुछ तरुणियाँ और सुन्दरी तरुणियाँ उसके यहाँ आती-जाती थीं, यह बात क्यों यह लोगों को समझ में नहीं आती थी।

अरिन्दम को लोग दूर से एक रहस्यमय व्यक्ति समझते थे। कोई कहता था पामीर नाँघते समय उसने दो पठानों के ख़ून किये हैं, कोई कहता था उसने रोटी से कहीं अधिक मेंढक चीन में रहते समय खाये हैं, कोई कहता था उसने बर्मा में एक डाकिये को मारकर उसका थैला छीन लिया था, साथ ही साथ जीवन के विभिन्न समय में रवीन्द्रनाथ से लेकर बर्नार्ड शा तक, गांधी से लेकर भगतसिंह तक सबसे उसका परिचय या पत्रव्यवहार होने की ख़बर थी। कहना न होगा कि ऐसे अद्भुत व्यक्ति की यह भी शोहरत थी कि वह असल में क्रान्तिकारी है, और रात को छिपकर बम बनाता है। वह कहाँ बम बनाता है, तथा किसे मारने के लिये बम बनाता है यह न तो कोई जानने की चेष्टा करता था, न पूछता था। क्रान्तिकारी ही जो ठहरा। लोग जहाँ उसके सम्बन्ध में तथ्यों की कमी अनुभव करते थे वहाँ उसे कल्पना की रंगीनी से रँग भर देते थे। बहुत से लोग ऐसे थे जो उसे रास्ते में देखते थे तो बड़ा घूरकर, यहाँ तक कि पीछे मुड़-मुड़कर देखते थे। शायद वे हैरान होते थे कि इस आदमी के चेहरे में वे बातें नहीं टपकती हैं जो लोग उसके बारे में कहा करते हैं, ख़ासकर तरुण और तरुणियाँ उसमें बहुत दिलचस्पी रखती थीं।

यह था अरिन्दम।

शरीर से अरिन्दम इतना पुष्ट था, तथा उसका बदन इतना गठीला था, कि उसके सम्बन्ध में प्रचलित डाके और ख़ून के क़िस्से से उसका असामंजस्य नहीं होता था; साथ ही सुन्दर न होने पर भी उसके चेहरे पर संस्कृति तथा बौद्धिकता की ऐसी असन्दिग्ध छाप थी कि रवीन्द्रनाथ के साथ उसके पत्र-विनिमय की बात भी झूठी नहीं मालूम होती थी। रहा क्रान्तिकारी होने की बात, सो यह परिपाटी चल गई है कि जब एक आदमी के बारे में सब बातें समझ में नहीं आती तो लोग उसे क्रान्तिकारी समझते हैं, जैसे जब किसी व्याकरण-

शुद्ध वाक्य लोगों की समझ में नहीं आता तो लोग कह देते हैं यह आध्यात्मिक बात है।

अरिन्दम क्रान्तिकारी तो नहीं था, याने बम बनानेवाला क्रान्तिकारी नहीं था, किन्तु इसमें भी संदेह नहीं कि वह उसी धातु से बना था जिससे सच्चे क्रान्तिकारी बने होते हैं। वह निडर था, इतना कि कुछ लोग उसे डींग मारनेवाला समझते थे, यद्यपि स्वयं वह कभी अपनी तारीफ़ नहीं करता था। रुपयों की उसे कभी परवाह नहीं थी, बात की बात में दूसरों के लिये वह बीसियों रुपये खर्च कर डालता था। उसकी आमदनी थोड़ी थी, इसलिये वह कभी-कभी अपनी उदारता पर पछताता था, किन्तु इससे उसको कभी सबक़ न हुआ। वैसा मौक़ा आने पर वह वैसी ही उदारता कर बैठता था। हाँ, एक बात यहाँ साफ़ कर देना ज़रूरी है कि उसकी यह उदारता किसी तरुणी को चाकलेट के पैकेट पहुँचाने की या क़ीमती उपहार देने की श्रेणी की नहीं थी। अरिन्दम की यह उदारता इस प्रकार की थी कि किसी के पैर में जूता नहीं है उसे जूता ख़रीद दिया, कोई जाड़े से ठिठुर रहा है उसे ऊनी पूलोवर ख़रीद दिया, बस।

अरिन्दम के मित्र तथा बान्धवियाँ प्रायः यह शिकायत करती थीं कि अरिन्दम कभी दावत नहीं देता। इसके साथ ही सभी जानते थे अरिन्दम कंजूसी के पास से भी नहीं जाता। यह एक अजीब बात थी, किंतु सच थी कि अरिन्दम के मित्र जो अक्सर और बहुत कुछ हद तक उसके शिष्य या शिष्या होती थीं, उसके लिये अक्सर मिठाइयाँ तथा फल लाया करती थीं। यह फल, फूल, मिठाई लाने का काम अक्सर गुप्त रीति से होता था, याने जो लाते थे वे आत्मतृप्ति के लिये या अधिक से अधिक अरिन्दम के चेहरे पर लज्जाभरी तृप्ति की हँसी लाने तथा देखने के लिये लाते थे। अरिन्दम के ये भक्त तथा भक्तिनें (लोग ऐसा ही इन्हें कहते थे) उससे उम्र में कम थीं, फिर भी जब उसका कोई भक्त या भक्तिन उसे चोरी से लाकर उसे मिठाई या फल-

फूल देती थी तो वह एक पन्द्रह वर्ष की लड़की की तरह जिससे कोई प्रेम-निवेदन कर रहा हो, झेंप जाता था। वह जानता था इन लोगों से तक़रार करना बेकार है, "क्यों? इसकी क्या ज़रूरत थी" कहकर वह जल्दी से निगलकर इन चीजों को खा जाता था या ज़्यादा होता था तो छिपाकर रख देता था, जैसे किसी की चीज़ चुराकर खा रहा हो तथा पकड़ जाने का डर है।

अरिन्दम की उम्र २८ साल की थी, किंतु उसका हृदय २० साल के नौजवान का ही था, मानो इन आठ सालों में जो उसने एशिया के बीहड़ वीरानों में बिताये थे उसके हृदय की उम्र बढ़ना ही रुक गया था। वह अपनी उम्रवालों के बनिस्बत अपने से छोटों तथा छोटियों से ही मिलने में अधिक दिल के हल्कापन का अनुभव करता था। मजे की बात है ये लोग भी उसे सहज ही अपना लेते थे। उसके पास आने वाले कुछ नौजवान उससे इसलिये बिदककर हट गये थे और अब उसके बारे में तरह-तरह की अफ़वाहें उड़ाते थे कि अरिन्दम की गोष्ठी के कुछ तरुण और तरुणियाँ जिनसे ये स्वयं घनिष्टता स्थापित करना चाहते थे, उम्र का व्यवधान होते हुए भी अरिन्दम को ही इन पर तरजीह देते थे। इस प्रकार बनारस के समाज में अरिन्दम के कुछ समालोचक भी पैदा होते जाते थे। अरिन्दम अधिक दिन तक इस बात से अपरिचित नहीं रह सका, किंतु वह करता तो क्या करता। जिन लोगों से उसने दुश्मनी नहीं की, हमेशा जिनका हार्दिक स्वागत किया, वे यदि ऐसे कारणों से जिन पर उसका कोई हाथ न था, उस पर नाराज़ हो जाते, तो वह कर ही क्या सकता था? फिर भी वह उन्हें शान्त करने की चेष्टायें करता, किन्तु सब व्यर्थ। इस बात से अरिन्दम का दिल कभी-कभी खट्टा हो जाता, उसके चेहरे पर क्षोभ और अशांति दीख पड़ती, किंतु जब वह यह सोच लेता कि इन असन्तोषों के पीछे उसका कोई न दोष है, न हाथ, तो चुप हो जाता।

अरिन्दम के अंतरंगों में कुछ उसके हमउम्र लोग भी थे, किंतु वे लोग कर्मव्यस्त थे, उनको अपने-अपने पेट पालने की तथा बीबी-बच्चों की फ़िक्र थी, वे आकर घंटों अरिन्दम के दरबार में बैठ तो रह सकते नहीं थे। नतीजा यह होता था कि अरिन्दम धीरे-धीरे दूर होता जाता था यह एक आकस्मिक घटना-सी ही थी, किंतु इसका परिणाम दूर तक गया हुआ होता था। इससे लोगों को यह कहने का मौक़ा मिलता था कि अरिन्दम लोगों पर शासन करना चाहता है, मित्रता करना नहीं; तभी वह अपने समकक्ष लोगों से दोस्ती या घनिष्ठता करना पसंद करता है, किंतु यह कहना सच नहीं था। शासन करने के तरीके होते हैं, अरिन्दम इन तरीक़ों में से एक का भी इस्तेमाल नहीं करता था। न जान कर, न अनजान में। यहाँ तक कि वह कभी अपने लेखों को छपने के पहले या बाद को लोगों को पढ़कर भी नहीं सुनाता था। कोई ऐसा करने भी कहता तो वह टाल जाता था। इसके साथ ही यदि उसका कोई साथी कोई लेख लिखकर लाता तो वह बड़े प्रेम से उसे शुद्ध करता, और यह जानते हुए भी कि उसका साहित्यिक मूल्य कुछ नहीं है उस लेख को छपाने की चेष्टा करता, जिसमें वह अक्सर असफल रहता।

अरिन्दम की जो कुछ आमदनी थी, वह लेखों, भ्रमण की पुस्तकों तथा एक नाटक से थी। इन पुस्तकों की बिक्री अच्छी थी, इस बिक्री के एक से अधिक कारण थे।

अरिन्दम इन दिनों बहुत कम लिखता था, याने सामयिक पत्रों में लेख लिखता भर था। हाँ, पुराने अप्रकाशित लेखों को शुद्ध करता जाता था। वह कहता था ७, ८ वर्ष तक उसने पामीर, तिब्बत तथा मध्य एशिया में व्यतीत किये, प्रकृति को उसने विविध उग्र रूप में देखा, किंतु अब उसे मालूम हुआ था प्रकृति में सबसे सुन्दर और दिलचस्प चीज़ आदमी है। इसलिये आदमी से मिलने के आगे वह ग्रन्थकार के यश को तुच्छ समझकर उतना ही लिखता जिससे था

रोटी चले। अरिन्दम को वर्षों बौद्ध-धर्म का बुख़ार सवार था। २० वर्ष की उम्र में घर से भागकर वह बौद्ध-धर्म की खोज में ही तिब्बत आदि गया था, वहाँ उसने विहारों की बन्द कोठरियों में महीनों तपश्चरण और कृच्छ्र में बिताया था। पता नहीं इनका क्या असर उसपर उस ज़माने में हुआ था, किंतु अब वह सब धर्मों के विरुद्ध हो गया था। वह कहता था देवता होने से मानव होना कहीं अच्छा है, और वह अपने ख़्यालात के अनुसार मानव बनने की ही चेष्टा करता था। जो उसके नाम या परस्परविरोधी बदनाम से आकृष्ट होकर उसके पास आते थे वे जल्दी ही आविष्कार कर लेते थे कि अरिन्दम कोई देवता नहीं है, किंतु साथ ही साथ वे यह बात भी निःसन्देह रूप से हृदयंगम कर लेते थे कि अरिन्दम की एक-एक बोटी मनुष्यता से फड़कती हुई है।

अरिन्दम के जो थोड़े से मित्र तथा बान्धवियाँ थीं वे अरिन्दम को यह बदनामी देती थीं कि अरिन्दम बहुत जल्दी अपना भेद दूसरों पर खोल देता है, तथा उसके पेट में कोई बात नहीं रहती। यह बात एक हद तक सच थी, किन्तु ये बातें अरिन्दम कमज़ोरी के कारण नहीं कह डालता था, बल्कि उसका मनुष्य चरित्र में इतना अगाध विश्वास था कि वह कह ही डालता था। कई बार उसको इसके लिये पछताना पड़ा, किन्तु फिर भी वह लोगों से जरूरत से अधिक अंतरंगता स्थापित करने का प्रयत्न करता रहा। यह भूल वह पुरुष और स्त्री दोनों तरह के आगन्तुकों के साथ कर बैठता था, यदि वह यह ग़लती केवल अपनी मिलनेवालियों से ही करता तो उसे समझना आसान हो जाता, किन्तु वह तो पुरुष, स्त्री, कम उम्र तथा वयस्क सभी लोगों के साथ यह रवैया रखता था। उसके मित्र जिनमें नरेन्द्र और वीरेन्द्र भी थे उसे समझाते-समझाते हार गये थे, किन्तु वह मानता न था। उसके मित्र सब मामले में अरिन्दम को अपना गुरु मानते थे, किन्तु केवल इस मामले में वे अरिन्दम को अपना शिष्य मानते थे, केवल

यही नहीं, हर समय कोशिश करते थे कि उनका कहा हुआ अरिन्दम माने।

किन्तु अरिन्दम नहीं मानता था।

फिर भी उसके मित्र उस पर नाराज नहीं होते थे। इस मामले में वे उसे बच्चा समझते थे; तभी वे उसके हठ को आसानी से क्षमा कर देते थे।

अरिन्दम की एक नई पुस्तक छपी थी। यह उसकी पहली ही पुस्तक थी जिसको किसी बड़े प्रकाशक ने प्रकाशित किया था। पुस्तक बड़ी सजधज से निकली थी। पुस्तक की काफ़ी धूम थी। कुछ समालोचकों ने अरिन्दम को गालियों से याद किया, तथा साहित्य-क्षेत्र को दूषित करनेवाला पाप का प्रचारक बताया। कुछ ने उसे नवयुग का अग्रदूत तथा उसकी कृति को कला से ओत-प्रोत बतलाया। पुस्तक का नाम था "पाप का पैसा" यह एक उपन्यास था। इसमें लेखक ने एक वेश्या के जीवन का विकास दिखलाकर यह साबित किया था कि वेश्या के लिये जिम्मेदार समाज है न कि व्यक्ति। साथ ही उसने एक भद्र पूँजीपति का जीवन चित्रित कर दिखला दिया था कि समाज का असली रोग पूँजीवाद है, और समाज में जो कुछ भी ऐब है वह पैसे के ग़लत विभाजन से है। पुस्तक में पूंजीपति के जीवन को वेश्या के जीवन के साथ बड़ी ख़ूबी से तुलना की गई थी, और साथ ही सामंजस्य दिखलाया गया था कि पढ़ते ही वह हृदय पर एक गहरा घाव करती थी। पाठक पढ़कर हक्काबक्का रह जाता था, वह अपने इर्दगिर्द बहने वाले जीवन के विषय में सोचने के लिये विवश होता था, और उसके मुँह से एक अरे निकल जाता था, जैसे उसे एकाएक आत्मज्ञान हो गया हो।

पुस्तक की बिक्री अच्छी हो रही थी। लेखक के नाम से कई चिट्ठियाँ रोज़ आती थीं, किसी में तीव्र निन्दा रहती थी, तो किसी में प्रशंसा। अरिन्दम के इन पत्रों को उसके सभी मित्र पढ़ते, और उन

पर टीका करते, अरिन्दम चुपचाप इनको सुना करता। पुस्तक में कोई भूमिका नहीं थी, इसलिये जब कोई अरिन्दम से पुस्तक के विषय में लड़ने के लिये भी तैयार होता तो वह कह देता—भई, इस पुस्तक पर मुझे कुछ कहना होता तो भूमिका ही न लिख डालता। भूमिका मैंने इसीलिये नहीं लिखी कि मैं आप लोगों की टीका की स्वतंत्रता पर कुठाराघात नहीं करना चाहता था।......

अरिन्दम की एक मुँह चढ़ी हुई स्त्री मित्र रूपकुमारी ने इस पर कहा—मैं यदि अखिल विश्व की सम्राज्ञी होती तो मैं आपकी इस जहरीली पुस्तक की एक-एक प्रति जलवा डालती, फिर उसकी राख को पानी में घोल डालती, फिर उस पानी को......

रूपकुमारी कुछ कविता लिखती थी, वह अपने को एक प्रमुख कवयित्री समझती थी। न मालूम वह आवेश में इस समय क्या-क्या कह जाती, किन्तु अरिन्दम ने उसकी उद्दीप्त वाक्धारा के बीच ही में बाधा देकर कहा—आप सब कुछ करतीं, किन्तु फिर भी सत्य नहीं मरता।

—जी हाँ, आप बड़े भारी सत्यद्रष्टा हैं और आपका यह मौलिक सत्य क्या है कि स्त्रियाँ वेश्यावृत्ति पसन्द करती हैं...? इसी ढंग से वह लेखक के भावों को विकृत करती हुई न मालूम क्या क्या कह गई किन्तु अरिन्दम ने एक बार जो मुँह बन्द किया सो फिर न खोला। वह इस प्रकार प्रतिकूल टीका का अभ्यस्त हो गया था।

रूपकुमारी कहती जा रही थी—माफ़ करियेगा अरिन्दमजी, लड़कपन से ही आपकी रुचि विपरीत है। लोग भाग कर जाते हैं यूरोप, अमेरिका और आप भाग कर गये तिब्बत। यह एक अजीब सनक है। साहित्य में भी आप उसी विपरीत रुचि को लेकर आये हैं, आपको मौलिकता का मर्ज है, इस मर्ज के आवेश में आप न मालूम क्या-क्या लिख जाते हैं। आपकी मौलिकता ऐसी है जैसे सिर के बल चलना या नाक से पानी पीना। आप एक ख़तरनाक

आदमी हैं। टालस्टाय ने अपनी 'क्रायत्सार सोनाटा' नामक पुस्तक के पात्र के मुँह से कहलवाया है कि संगीत एक सरकारी विषय होना चाहिये, क्योंकि इसकी मोहनी शक्ति का यदि कोई भी बिगड़ेदिल तथा बिगड़े दिमाग़ उपयोग कर सके तो यह बात समाज के लिये बड़ी ख़तरनाक होगी। मैं इसी प्रकार कहती हूँ कि जिस किसी ने कलम उठाई तथा ज़रा सिलसिलेवार और लच्छेदार भाषा लिखने लगा वही लिख सकेगा, यह बात समाज के लिये हानिकारक है। रूस में जो हरेक बिगड़ेदिल को लिखने नहीं दिया जाता इसका मैं अब तक तो समर्थन नहीं करती थी, किंतु अब करती हूँ। ठीक तो है, लिखने की आज़ादी के नाम पर लोगों को अतिसामाजिक चीजें लिखने न दिया जाय यह ठीक ही है......

एक महाशय जो मन ही मन अब तक एक वाक्य बना रहे थे, तथा उस वाक्य को अपनी जीभ रूपी धनुष पर चढ़ाये हुए प्रतीक्षा कर रहे थे कि रूपकुमारीजी चुप हों तो वे अपना वाक्य छोड़ें, अब प्रतीक्षा करते-करते धैर्य खोकर बोल उठे—पुस्तक को पढ़ जाना और बात है और समझना और बात। क्या आपने "पाप के पैसे" के उस अंश को पढ़ा है जहाँ वेश्यालयों का आम वर्णन है, कितना वीभत्स इनका जीवन है? ऐसी बातों के पढ़ने से वेश्यावृत्ति को प्रोत्साहन होता है या निरुत्साह! न मालूम कैसी औंधी खोपड़ी आप लोगों ने पाई है?

अरिन्दम घंटों लोगों की ऐसी बातें सुना करता था, कुछ मित्र उठकर चल देते, दूसरे आते। इस प्रकार जैसे बायलर में नये कोयलों से गर्मी कायम रहती है उसी प्रकार आगन्तुकों के इस कमरे में तर्क की आग क़ायम रहती। कभी-कभी स्वयं अरिन्दम भी खिसक जाता; लोगों को बड़ी देर बाद पता लगता कि वह ग़ायब है तो वे भी चल देते। कई बार क्या अक्सर ये बहसें राजनीतिक रूप धारण करतीं तब तो अरिन्दम भी इसमें शामिल होता। तिब्बत में रहते समय एक

मठाधीश के विरुद्ध मठवासियों ने सशस्त्र विद्रोह किया था, उसमें अरिन्दम शामिल था। अरिन्दम की व्यावहारिक राजनीति यहीं तक थी, यदि उपरोक्त घटना को राजनीति कहा जा सके।

इसके अतिरिक्त उसके क्रान्तिकारी होने की शोहरत तो थी ही। ज्ञान उसका हर विषय में निःसन्देह विशद था। यह राजनीतिक बहस जो अनिवार्य रूप से तू-तू मैं-मैं का रूप धारण करती थी कई बार झगड़े का रूप धारण कर लेती। यदि अरिन्दम बीच में न पड़े तो ये झगड़े दूर तक जाते, किन्तु अरिन्दम के बीच में पड़ते ही सब झगड़े मिट जाते रहे। अस्तु।

और सभी बहसों में तो अरिन्दम सरपट कूद पड़ता था, किन्तु ज्योंही बहस उसकी पुस्तकों पर आ जाती वह चुप हो जाता। एक दिन फिर भी वह अपनी ताजी पुस्तक के सम्बन्ध में बहस में खिंच ही गया। बात यह है कि नरेन्द्र ने बहस छेड़ी, नरेन्द्र को चाहे अरिन्दम कितना ही बच्चा समझे, उसकी उम्र मुश्किल से १८ ही थी, किन्तु वह उसकी बात की अवज्ञा नहीं कर सकता था। नरेन्द्र ने कहा—अच्छा अरिन्दम भैया, आपने "पाप के पैसे" में वेश्याओं के मन की बात इतनी ख़ूबी से लिखी है, आपने उन्हें कैसे जाना? क्या आप कभी किसी वेश्या के यहाँ गये हैं?

प्रश्न सुनकर सबके कान खड़े हो गये। उस समय दो स्त्रियाँ बैठी थीं, और कई पुरुष मित्र थे। केवल एक व्यक्ति डरा, यह था किशोर। वह डर रहा था अरिन्दम न मालूम क्या जवाब दे, फिर उसका क्या मान लगाया जाय और फिर चारों तरफ़ बदनामी हो, और लेने के देने पड़ जायँ। अरिन्दम तो कहकर अलग हो जायगा, किन्तु किशोर को जवाब देते-देते आफ़त पड़ जायगी। किशोर अरिन्दम को अपना मित्र, दार्शनिक, पथ-प्रदर्शक के अलावा भी कुछ समझता था। यदि अरिन्दम को कोई ग़लत समझता तो उसे मार्मिक चोट लगती। उसने सोचा न मालूम अरिन्दम को मौका देने पर वह क्या कहे, इस-

लिये जल्दी से बीच में पड़ते हुए उसने कहा—जो लोग चन्द्रमा के अन्दर कौन-कौन धातु है बतला देते हैं, क्या वे चन्द्रमा में गये हुए होते हैं, यदि हर बात को जाकर ही पता लगाना पड़े तो फिर विज्ञान या कला की करामात ही क्या रही ? वैज्ञानिकों ने हमारी इस पृथिवी को माशे रत्ती तक तौल डाला है, क्या उन लोगों को इसके लिये पृथिवी को एक तराजू पर रखने की ज़रूरत पड़ी ?

जवाब उचित था, नरेन्द्र को सन्तोष भी हो गया था, इतने में किशोर के मना करते-करते अरिन्दम ने कह डाला—हाँ, मैं वेश्या के घर गया था...

इस बात से सारे कमरे में इतना आश्चर्य क्या आतंक छा गया, जैसे कोई बम कमरे में गिरा हो। किशोर का चेहरा सफेद पड़ गया, मानो उसका सर्वनाश हो गया हो, उसने घूमकर देखा कमरे में राम-नारायण था। अभी यह घूमकर सारे शहर में यह बात फैलायेगा। रूप-कुमारी ने मुँह बिचकाकर सिर नीचा कर लिया, रामानारायण उसकी ओर देखकर हँसा मानों कह रहा था—क्यों ? दूसरे सब अचम्भे में थे। नरेन्द्र प्रश्न के उत्तर को ठीक समझ न सका। उसने कहा—क्यों ?

किशोर कुछ कहना ही चाहता था कि रामनारायण ने कहा—कलाकारों के लिये सब जायज़ है। कलाकार मामूली सब नियमों से बरी है, यदि ऐसा न हो और कलाकार केवल कल्पना की उड़ानें भरें तो कला तथ्य से दूर होने के कारण रक्ताल्पता रोग से पीड़ित होकर निर्जीव हो जायगी फिर उसमें अखिल विश्व के तड़पते प्राणों का स्पन्दन न सुन पड़ सकेगा।

किशोर विशेषकर रामनारायण के मुँह से यह व्याख्या सुनने को तैयार नहीं था, वह जानता था रामनारायण सन्दिग्ध चरित्र का व्यक्ति है। वह इस बात से परेशान था कि वह इस गोष्ठी में कहाँ से आ मरा। उसने चिल्लाकर कहा—जी नहीं ! कलाकार मामूली नियमों

से बरी नहीं है—फिर उसने और भी ज़ोर से कहा—और यह जो अरिन्दम जी ने कहा है कि वे वेश्या के घर गये हैं यह केवल उनकी कल्पना है......

किशोर अपने प्रिय मित्र को वेश्यागामी अपवाद से बचाने के लिये इतना उत्सुक था कि उसने यह नहीं देखा कि इस सफ़ाई के आवेश में वह अरिन्दम को झूठी डींग मारनेवाला कह गया। अरिन्दम ने किशोर की ओर न देखकर ही उस बात को अनसुनी करके कहा—हाँ, मैं सशरीर वेश्या के घर गया था, यह मेरी कल्पना नहीं है......

किशोर ने सिर थाम लिया, नरेन्द्र के चेहरे पर आतंक था, किन्तु अरिन्दम कहता ही गया—जब मैं घूमता-घामता भारत लौट रहा था उस समय रंगून में यह घटना हुई थी। मैं एक बर्मी रईस के यहाँ नौकर था। उसने एक दिन मुझे एक चिट्ठी दी, और कहा कि बड़ी सावधानी से इस पत्र को पहुँचाना। यह कहकर उसने मुझे एक प्रसिद्ध बर्मी वेश्या का नाम बताया। मैं चिट्ठी लेकर रवाना हुआ, किन्तु रास्ते में मुझे प्रबल कौतूहल हुआ कि इस पत्र में क्या लिखा है देखें। मेरा मालिक बर्मी समाज में एक प्रतिष्ठित तथा सच्चरित्र व्यक्ति समझा जाता था, मैं जानना चाहता था कि इस पत्र में क्या है। मैं बखूबी समझता था कि इस पत्र को पढ़ने का मुझे कुछ भी अधिकार नहीं है, मैं जानता था कि यह एक नैतिक अपराध तथा क़रीब क़रीब विश्वासघात है। फिर भी मैं पागल-सा हो रहा था कि जानूँ इस पत्र में क्या है....

रूपकुमारी ने बीच में काटकर कहा—आपको डाह तो नहीं हो रही थी?

रामनारायण एक कुटिल हँसी हँसा, केवल किशोर ने यह हँसी देखी, उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में क्रोध झलक गया, उसका चेहरा तमतमा गया, किन्तु अरिन्दम जैसे अपने स्वप्नलोक में विभोर था, वह कहता ही गया—मैंने लिफ़ाफ़ा तो खोल लिया, किन्तु पत्र पढ़ न सका। बात यह थी कि पत्र बर्मी भाषा में था, मैं बर्मी समझ लेता था

किन्तु पढ़ नहीं सकता था, फिर भी कागज़ की सुगन्ध से समझ गया यह प्रेम-पत्र है। इतना जानकर मुझे और जानने की इच्छा हुई। मैंने पत्र को पढ़वाकर ही माना। पत्र की भाषा उच्छ्वासित थी जैसा प्रेम-पत्रों का होता है; उसमें शायद ही कोई ग्रह, जानवर, फूल, पहाड़ ऐसे बचे हों जिनके नाम न आये हों। मैं तो समझता था कि मेरा मालिक केवल रुपये ही पहिचानता है, किन्तु वह तो पूरा कवि था।

किशोर को मौक़ा मिल गया, उसने कहा—हम लोगों के रामनारायण की तरह कवि.......

अरिन्दम के चेहरे पर एक पतली-सी हँसी दौड़ गई, अपने साथियों के अन्दर सतत चलनेवाले नोकझोंक को वह एक कलाकार की तरह उपभोग करता था, उसने हँसकर कहा—रामनारायण की तरह नहीं, बल्कि रूपकुमारी की तरह...।

रूपकुमारी फुफकारकर बोली—मेरी तरह क्यों? मैं क्या कोई...

—अजी यह बात नहीं, आपकी कविता में ज़रा ग्रह, उपग्रह, पहाड़, नदी वगैरह ज़्यादा आते हैं न, रामनारायण की कविता में वास्तविकता ज्यादा होती है यद्यपि वह अपने को छायावादी कहता है।

नरेन्द्र ने सरलता से हँसते हुए कहा—अरिन्दमजी, सब भँगेड़ी छायावादी होते हैं!

नरेन्द्र को उसकी छोटी उम्र के कारण सब स्नेह की दृष्टि से देखते थे, इसके अतिरिक्त वह किसी दलबन्दी में न था, वह हरेक की चुटकी लिया करता था, इसलिये उसकी इस बात पर सब, यहाँ तक कि रामनारायण भी जिस पर कटाक्ष किया गया था हँस पड़ा।

अरिन्दम ने चेहरा गंभीर बना लिया और कहता गया—मैं उस बर्मी वेश्या के यहाँ पत्र लेकर पहुँचा। उसने पत्र मेरे हाथ से ले लिया, और मुझसे सामने की कुर्सी पर बैठने के लिये कहा। पत्र को

उसने सरसरी निगाह से पढ़ा, फिर मुझसे साफ़ हिन्दुस्तानी में बोली—तुम हिन्दुस्तान से आये हो?

मैंने कहा—हाँ, लेकिन आपने हिन्दुस्तानी कैसे सीखी?

प्रश्न का उत्तर न देकर उसने दूसरा प्रश्न किया—तुमने बर्मी कैसे सीखी? आदमी सोहबत से ही सब कुछ सीखता है। उसने गद्दीदार कुर्सी पर सिर का पिछला हिस्सा टेक दिया और कहती गई—मेरी माँ कलकत्ते में पेशा करती थी, वहीं मैं पैदा हुई। मेरे बाप एक बंगाली सज्जन थे। अब तुम समझे मैं कैसे हिन्दुस्तानी जानती हूँ, मैं बङ्गला भी जानती हूँ।

मुझसे उसकी बड़ी देर तक बातचीत होती रही। मेरे ऊपर उसकी स्पष्टवादिता का बड़ा अच्छा असर पड़ा, यदि मुझे कहने दिया जाय तो कहूँगा कि मेरे ऊपर उसका गहरा नैतिक असर पड़ा। वह मुझे अक्सर बुलाया करती थी, कई बार तो मुझे ऐसा शक हुआ कि वह मुझे प्यार करने लगी है, किन्तु एक वेश्या के वास्तविक प्यार में और एक कुलबधू के प्यार में प्रभेद होता है। वेश्यायें जिस व्यक्ति को प्यार करने लग जाती हैं, उससे प्यार ही चाहती हैं। शारीरिक प्यार नहीं, यह तो उन्हें इतना मिल चुका होता है कि उसकी इन्हें ख्वाहिश नहीं होती। मैं आता था, जाता था, वह मुझसे बात करती थी, बस........। मैंने उसी औरत से वेश्या-जीवन की जघन्यता के विषय में जाना। उसने कई बार मुझसे कहा—देखो, मैं बैठी हूँ साफ़-सुथरी निखरी हुई, किन्तु अभी वह रास्ते का गन्दा कुली यदि मेरे पास आवे तो उसके बदबूदार बदन को मुझे चिपटाना पड़े, ओह कितना गन्दा यह पेशा है!

रूपकुमारी के चेहरे पर जो व्यंगात्मक भाव कहानी के शुरू से बना था वह लुप्त हो चुका था। उसने कहा—तो फिर आपने उसका सुधार क्यों नहीं किया उसका तो आप उद्धार कर सकते थे......

—नहीं, मैंने कभी भी उसको सुधारने की चेष्टा नहीं की, न मालूम कैसे यह ख्याल मेरे दिमाग़ में ही नहीं आया। फिर मैं कोई सुधारक नहीं हूँ, सुधार का काम बहुत ही टेढ़ा होता है, कहीं मैं ही गिर जाता। थोड़े दिन बाद मैं बर्मा छोड़कर भारत चला आया।···

वह चुप हो गया जैसे अपने विचारों में आप विलीन हो गया।

रूपकुमारी ने धीरे से कहा—तो आप भाग आये? यही आपकी वीरता है कि एक औरत से भाग आये···

वैसी ही स्वप्नाविष्ट अवस्था में अरिन्दम ने कहा—मैं भाग आया? शायद, ऐसे मौक़ों पर बहादुरी दिखाना बेकार है।—स्पष्ट था कि वह विषय को टालना चाहता था।

रूपकुमारी फिर भी ज़िद पर अड़ी रही, उसने कहा—बेकार हो या न हो, मैं तो आपको अधिक पसन्द करती यदि आप अपना कर्त्तव्य करते चाहे गिर ही जाते।

—तब आप मुझसे बात भी न करतीं। अरिन्दम ने अर्थपूर्ण दृष्टि से रूपकुमारी की ओर देखा।

किशोर ने कहा—यदि आप सुधार के फेर में पड़ते, तो हम लोगों को कब मिलते?—उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में प्रबल व्याकुलता तथा प्रेम था, जो प्रेम-भाषा के ज़रिये से अपने को प्रकाश करने का आदी नहीं था, बल्कि दृष्टि के ज़रिये से ही अपने को व्यक्त करता था। अरिन्दम जानता था किशोर उसे प्यार करता है, एक प्यार जिसकी तुलना नहीं थी। किशोर घंटों आकर अरिन्दम के कमरे में बैठा रहता था, अरिन्दम से वह कई बार कह चुका था उसे इस कमरे में बड़ी शान्ति मिलती है। हर बार जब अरिन्दम अपने तरुण मित्र की यह बात सुनता था तो वह एक लड़की की तरह झेंप जाता था, वह धीरे से किशोर का हाथ दबा देता था। किशोर ने जब इस समय कहा—हम कैसे मिलते?—तो अरिन्दम ने आगे बढ़कर उसका एक

हाथ पकड़कर कहा—ऐसे मिलते—और कोई काम याद आने के कारण कमरे से निकल गया।

थोड़ी देर में बाक़ी मजलिस भी बर्खास्त हो गई। रूपकुमारी और रामनारायण एक साथ निकले। मकान के बाहर क़दम रखते ही रामनारायण ने कहा—तुमने देखा कैसा बना हुआ है?

भौंहें जरा चढ़ाकर रूपकुमारी ने कहा—कौन?

—यही अरिन्दम, और कौन?

—कैसे?

तुम क्या समझती हो इन बातों में से एक भी सच्ची है, यह सब सिर्फ तुम्हें लुभाने के लिए कहा गया है। बात यह है तुम ज़रा ख़ूबसूरत हो न...

रूपकुमारी ख़ूबसूरत शब्द से खुश तो हुई, कौन-सी स्त्री नहीं होती, किन्तु बोली—मैं तो पाँच-छै बार यहाँ आ चुकी, वे तो हमसे भद्रता के तक़ाजे से ज्यादा कभी बोले नहीं।

—यही तो हज़रत की टेकनिक है। पहिले न बोलना फिर अपना रूप खोलना। मालूम होता है तुम पर इनका जादू चल गया।

—नहीं तो, लेकिन मैं इस आदमी को झूठा नहीं समझती। मुझे डर है तुमने इनको क़रीब से जानने की चेष्टा नहीं की

झुँझलाकर रामनारायण बोला—मैं यहाँ उस दिन से आ रहा हूँ जिस दिन से यह हज़रत यहाँ आये हैं। मैंने इनमें कोई ऐसी बात नहीं देखी जिससे इनको विशेषता दी जाय।

—यदि ऐसी बात नहीं देखी तो वैसी भी तो न देखी होगी।

दोनों के घर जाने का रास्ता अलग होने के कारण वे नमस्ते के बाद अलग हो गये। रामनारायण ने उस दिन से यह उड़ाना शुरू किया कि रूपकुमारी से अरिन्दम का नाजायज़ ताल्लुक़ है।

——

—३—

रामनारायण की तरह कुचक्री आदमी दुनिया में बहुत हैं, किन्तु रामनारायण में एक बड़ा गुण था कि वह जिसे अपना समझ लेता था उसके लिये सब कुछ करने को तैयार रहता था। उसके लिये न तो वह न्याय देखता न अन्याय। उसको अपना घनिष्ठ बनाये रखने के लिये भी वह सच-झूठ कुछ नहीं देखता था। वह कालेज की उच्च श्रेणी का छात्र था, किन्तु छात्रों के अलावा भी सब तरह के समाज में उसका प्रवेश था। शायद ही किसी ने कभी उसका पूरा एतबार किया हो, किन्तु फिर भी उसको हमेशा कुछ न कुछ साथी मिलते थे। एक मित्र या साथी बिछुड़ जाने पर वह कभी उसके लिये अफ़-सोस करनेवाला जीव नहीं था, यही कारण था कि वह शायद ही कभी दुखी मालूम पड़ता हो। अरिन्दम के बनारस में आने के दिन से ही वह उससे परिचित हो गया था।

रामनारायण अरिन्दम से घनिष्ठ होना चाहता था, किन्तु अरिन्दम ने न मालूम उसे पहिचान लिया या कोई ऐसी ही बात हुई कि उसने उसे अधिक पास आने नहीं दिया। बस इसी बात पर वह अरिन्दम का दुश्मन हो गया, और अपने स्वभाव के अनुसार जो तबियत में आई सो कहने लगा। अरिन्दम ने ये बातें सुनीं, किशोर तथा अन्य मित्रों ने उसे ये बातें बताईं, किन्तु उसने परवाह न की, और फिर भी रामनारायण से वह न झगड़ा न लड़ा, बल्कि उसे बुलाकर पूछा, और जब उसने इन्कार किया तो उसे मान लिया।

इन दिनों रामनारायण एक लड़कियों के स्कूल की शिक्षयित्री मिस चपला के साथ घूमते हुए देखा जाता था। मिस चपला ग्रैजुएट थी, किन्तु देखने में स्कूल की छात्रा मालूम होती थी। उम्र कोई २१ साल की थी। रंग ख़ूब गोरा था, चेहरे से सरलता टपकती थी, एक दफे देखने से ही पता लगता था बड़ी बुद्धिमती स्त्री है। साथ ही

बड़ी आज़ाद तबियत की थी, इतनी कि लोग उसे देखकर घबड़ा जाते थे। बात-बात में वह व्यंग करती थी, इससे लोग उसे ग़लती से अहंकारी समझते थे, किन्तु यह बात नहीं थी। ऐसे बात करना उसकी आदत हो गई थी।

चपला को रामनारायण के साथ देखकर लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। रामनारायण किसी से उसका परिचय नहीं कराता था। एक दिन वह चपला के साथ घूम रहा था, उधर से किशोर और अरिन्दम आ रहे थे। अरिन्दम के देखने के पहिले ही किशोर से नमस्ते कर रामनारायण टेढ़ीनीम की एक गली में निकल गया। लेकिन चपला ने दोनों को ध्यान से देख लिया था, इसके साथ ही उसने यह भी ताड़ लिया कि रामनारायण ने इन्हीं की वजह से रास्ता बदल दिया, इसीलिये उसकी दिलचस्पी बढ़ गई। उसने पूछा—ये कौन थे ?

—कोई नहीं, ऐसे ही—कहकर रामनारायण ने टाल जाना चाहा।

—फिर भी ?

—यह एक अरिन्दम बाबू और उनके मित्र किशोर हैं।

—अच्छा, ये अरिन्दम बाबू हैं ? चेहरे से कैसे भोलेभाले मालूम देते हैं, किन्तु बड़े हज़रत हैं

रामनारायण की जान में जान आई, उसने कहा—आप कैसे जानती हैं कि ये बड़े हज़रत हैं ?

—वाह, आप ही ने तो मुझसे कहा था। एक दफे मेरे यहाँ मिस्ट्रेसों में इनकी पुस्तक "पाप के पैसे" पर बातचीत हो रही थी। कुछ बहिनें बड़ी तारीफ़ कर रही थीं, तब मैंने जो आपसे सुना बताया तो, वे बड़ा ताज्जुब करने लगीं।—कुछ देर रुककर वह बोली—और ये इनके साथ कौन थे ?

—किशोर, यह अरिन्दम का ख़ास मित्र है, पता नहीं इसको अरिन्दम ने क्या कर दिया है, बाप से बढ़कर उसे मानता है।

चपला खिलखिलाकर हँस पड़ी, कहा—अच्छा ये कुछ कर भी देते हैं। क्या ये जादूगर भी हैं?

रामनारायण इस बात को अधिक बढ़ाना पसन्द नहीं करता था, न मालूम किधर से क्या निकल आवे, उसने कहा—इनका जादू बातों से चलता है, इनसे बात की नहीं कि इनके मायाजाल में फँसा नहीं।

एक बच्चे की तरह मुँह बनाकर चपला ने कहा—अच्छा? यह बात? तो रामजी, आपने इनसे कभी बात नहीं की?

—की क्यों नहीं, लेकिन मैं पहिले से ही समझ गया हूँ, इसलिये मुझ पर उनका जादू नहीं चलता।

बात उस दिन तो वहीं ख़तम हो गई, लेकिन एक ऐसा संयोग पड़ गया कि चपला का अरिन्दम से साबक़ा पड़ ही गया। चपला जिस स्कूल में शिक्षयित्री थी उसकी लड़कियों ने विद्यालय के किसी उत्सव के उपलक्ष में एक नाटिका खेलने की ठानी, किन्तु एक लड़की ने जो नाटिका बनाई वह प्रधान शिक्षयित्री को पसन्द नहीं आई। चपला पर भार दिया गया कि वह इस नाटिका को ठीक करे। हेड मिस्ट्रेस साहबा इस उत्सव को ठाट से करना चाहती थी, और बड़ी आशा तथा उमंगों के साथ इसकी तैयारी में प्रवृत्त हो रही थी, इसलिये मिस चपला ने सहसा इसका भार अपने ऊपर लेना नहीं चाहा। उसने जूड़े पर हाथ मलते हुए कहा—लेकिन मिस बैनर्जी, मुझे तो इस लाइन में कुछ तजर्बा नहीं है, मैंने कभी एक पंक्ति भी नहीं लिखी...

मिस बैनर्जी ने अपने बदसूरत चेहरे को और भी बदसूरत बनाते हुए कहा—लेकिन यह तो आपको ही करना होगा, और सब मिस्ट्रेसें हिन्दी कम जानती हैं, एक आप ही हिन्दी जानने वाली ग्रैजुएट हैं ...

एकाएक मिस चपला के दिमाग़ में एक ख़्याल आया, इस ख़्याल के आते ही उसका चेहरा उज्ज्वल हो गया, उसने कहा—

अच्छा, जब यह बात है तो मैं इसका भार लेती हूँ, लेकिन और किसी काम का भार मेरे ऊपर न रक्खें

मिन बैनर्जी ने अपने रुखे चेहरे को जहाँ तक हो सका कोमल बनाया, यही उनकी हँसी थी, और कहा—अच्छा, अच्छा, देखा जायगा···

मिस चपला उस दिन विद्यालय की छुट्टी होते ही रामनारायण के घर गई, और उससे सब हाल कहने के बाद कहा कि वह अरिन्दम से परिचित होना चाहती है।

रामनारायण समझ तो गया कि वह क्यों अरिन्दम से नाटिका शुद्ध करवाने के सम्बन्ध में मिलना चाहती है, किन्तु उसके आत्माभिमान में इस बात से ठेस लगी कि वह स्वयं भी एक लेखक होने का दावा करता है, किन्तु चपला ने उसे इस नाटिका को शुद्ध करने का अनुरोध न किया और सब कुछ जानते हुए अरिन्दम को ही यह काम सौंपना चाहा। इसके अतिरिक्त चपला के सम्बन्ध में उसके मन में कुछ आकांक्षायें थीं। रोज़ वह अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रहा है ऐसा उसे मालूम देता था, ऐसे समय में अरिन्दम से उसका परिचय कराना वह एक दैवदुर्विपाक ही समझता था। प्रकाश्य रूप से उसने कहा—क्या तुमने भी अपने सिर पर बवाल ले लिया—इस बीच में रामनारायण ने चपला को आपसे तुम कर दिया था—मिस बैनर्जी भी अजीब औंधी खोपड़ी की औरत है। अरे कहीं नाटक-नाटिका लिखना स्कूल की लड़कियों का काम है! सैकड़ों लिखे लिखाये नाटक हैं, उनमें से छोटा देखकर एक चुन लेतीं और उसे अभिनय करातीं। बजाय इसके वे दुधमुँही लड़कियों से लिखाने लगीं नाटक, भला वे नाटक का क्या जानें?

चपला ने कहा—वे समझती हैं इससे लड़कियों में मौलिकता को प्रोत्साहन मिलता है···

कोट चढ़ाते हुए झुँझलाकर रामनारायण ने कहा—प्रोत्साहन नहीं ख़ाक मिलता है। मैं पूछता हूँ मिस बैनर्जी ने स्वयं कितने नाटक और कितने उपन्यास लिखे हैं। लिखना ईश्वरीय देन है कि जो चाहे सो लिख डाले, और लेखिका हो जाये।

—इसीलिये तो मैं चाहती हूँ कि ईश्वरीय देनवाला एक व्यक्ति इसको शुद्ध करे···

रामनारायण भभक उठा—कौन? अरिन्दम? वे ईश्वरीय देन-वाले हैं? वे तो रोटी के लिये लिखते हैं।

—आप ही ने तो एक बार कहा था, बस अरिन्दमजी में एक गुण है, लिखने में वे कमाल रखते हैं, बाक़ी उनका लोकगुरुत्व ढोंग है।

—कहा होगा, लेकिन तुम उसका असली मतलब नहीं समझीं। मैंने कहा था लिखने की उन्होंने साधना की है, किन्तु साधना करने ही से तो सिद्धि नहीं होती। मैंने यह तो नहीं कहा उन्हें सिद्धि प्राप्त हो गई है।

चपला नरम पड़ गई—जो कुछ भी हो हमें इससे क्या मतलब, वे हमसे, आपसे तथा इस लड़की से जिसने यह नाटिका लिखी है अच्छे लेखक तो हैं, बस हमें इतना ही चाहिये।

रामनारायण मुँह से बहस कर रहा था, किन्तु मन से सोच रहा था। बाहर निकलने के लिये वह कोट वगैरह पहिनकर तैयार हो चुका था, उसने खड़े होकर कहा—लाइये, पांडुलिपि मुझे दीजिये। देखूँ इस विषय में वे कहाँ तक क्या करने पर राज़ी होते हैं। मुझे तो जहाँ तक ख्याल है वे काम का बहाना बताकर इस मामले में कुछ करने से इन्कार करेंगे। हाथ बढ़ाकर उसने कहा—लाइये, उधर से इसे देते हुए मैं सुधी समाज में चला जाऊँगा, वहाँ आज एक कवि-सम्मेलन है···

चपला ने कहा—मान लीजिये उन्होंने इस पांडुलिपि के लिये समय देना असंभव बतलाया तो यह बात मुझे आज ही मालूम हो जानी चाहिये ताकि कोई और बन्दोबस्त किया जाय

रामनारायण ने कहा—चलो तुम भी चली चलो न, लेकिन एक बात—वह गंभीर हो गया। मैं किसी बात का ठेका नहीं लेता, फिर कभी तुम कहो तुम्हारा अपमान हुआ, तुम जानती हो उस आदमी को····

चपला तैश में आ गई—बड़े भारी आपके अरिन्दम कहीं के शेर हैं ? क्या कोई अन्धेर नगरी है। रामजी, आप इतमीनान रक्खें मैं जब अकेली घूमती हूँ तो यह जानती हूँ कि आत्मरक्षा कैसे की जाती है। यह कहकर उसने कमर से एक बड़ी छुरी निकालकर खोली, उसकी लपलपाती हुई जीभ को देखकर रामनारायण चौंक गया। इस छुरी को देखकर वह पहिले तो खुश हुआ, किन्तु बाद में गंभीर हो गया। फिर भी रामनारायण सँभल गया और हँसा, किन्तु ज्यों-ज्यों वह अरिन्दम के घर के नज़दीक आने लगा, उसका मुँह सूखने लगा। दुनिया में सबसे ज्यादा वह जानता था कि अरिन्दम किस पाये का आदमी है। बात यह है वह स्वयं दुष्टचरित्र था, लड़कपन से ही उसका जीवन एक दूषित वातावरण में बीता था। वह एक व्यक्ति को देखते ही उसको ताड़ जाता था। इतनी शक्ति उसमें थी। अरिन्दम को वह भली भाँति जानता था, मुँह से चाहे जो कुछ भी कहे।

अरिन्दम के कमरे की सीढ़ी पर चढ़ते हुए रामनारायण ने चपला की ओर देखा तो उसे मालूम हुआ कि चपला में और उसमें जैसे एक महान फासला हो चुका है, और वे एक दूसरे के अपरिचित से हैं। वह भयभीत हो गया, उसका सिर जैसे घूमने लगा, चट से उसने ज़ीने की रस्सी थाम ली। उसका मन अफ़सोस से भर गया, किन्तु सामने ही अरिन्दम का कमरा था। सीढ़ी ख़तम हो चुकी थी। अरिन्दम हाथ में एक ब्लेड लिये हुए कोई कटिंग काट रहा था। कमरे

में कोई सजावट नहीं थी। चपला ने एक ही दृष्टि में देख लिया कमरे में कोई आकर्षण की वस्तु नहीं है। पुस्तकें यत्रतत्र बिखरी हुई हैं जैसे अविवाहितों का हाल होता है। इसी अरिन्दम बाबू का इतना नाम है! चपला बड़े आश्चर्य में पड़ गई।

अरिन्दम ने रामनारायण का तपाक से स्वागत किया, और साथ ही चपला को एक छोटा-सा नमस्ते कर बैठने के लिये कहा। रामनारायण ने परिचय कराने के बाद कहा—मिस चपला आपके पास एक काम से आई हैं—फिर उसने काम का विवरण बताया।

सब कुछ सुनकर अरिन्दम ने कहा—बस यही, यह तो छोटी-सी बात है, जहाँ तक हो सकेगा मैं नाटिका को अपने ढङ्ग पर लाने की चेष्टा करूँगा···

आपको शायद इसे शुरू से आख़िर तक दुबारा लिखना पड़े—रामनारायण ने कहा।

अरिन्दम ने कुछ उत्तर नहीं दिया, उसने पांडुलिपि मेज़ पर से उठा ली, और उसे इधर-उधर पढ़ने लगा। अन्त में पांडुलिपि की देखभाल जल्दी से समाप्तकर उसने धीरे से कहा—हो जायगा—और पांडुलिपि को अपने सामने खोलकर एक पेपरवेट से दबाकर रख लिया।

रामनारायण कहने ही जा रहा था—आज मुझे एक कविसम्मेलन में चलना है तो अब हम लोगों को आज्ञा दीजिये—कि इतने ही में चपला बोल उठी—यों तो आप ख़ुद ही समझ लेंगे, किन्तु फिर भी मैं आपको इस नाटिका के अभिनय में जो सेन्ट्रल आइडिया है वह आपको बता देना चाहती थी।

अरिन्दम ने कहा—बड़ी ख़ुशी की बात है। आप लोग फ़ुरसत में तो होंगे ही, चलिये पास ही बनिया पार्क है वहाँ बैठे आपकी बात भी सुनेंगे और हवाख़ोरी भी होगी। न मालूम क्यों सन्ध्या के पहिले मैं किसी भी प्रकार छत के नीचे बैठकर शान्ति नहीं पाता। ऐसे समय में

इच्छा होती है कि पीछे पड़े रहें पृथ्वी के सारे काम, पीछे पड़ी रहें सभ्यता की द्योतक ये बड़ी-बड़ी इमारतें और हम उन्मुक्त प्रान्तर, खुले हुए आकाश और बहती हुई नदी के पास हों। एक दिन ऐसे ही समय के आकर्षण ने मुझे घरद्वार छुड़ाकर पामीर, तिब्बत आदि घुमाया था।

अरिन्दम ने किवाड़ बन्द करते-करते इसी प्रकार की कितनी ही बातें कहीं। फिर तीनों जाकर बनिया पार्क की घास पर बैठे, वहाँ चपला को नाटक की सेन्ट्रल आइडिया कहने का तो विशेष मौका नहीं मिला, हाँ, अरिन्दम ने न मालूम किस-किस विषय पर क्या-क्या कहा। बोलने का उसको मज-सा था, वह ऐसे बोलता था जैसे उसके रोयें-रोयें उसकी बातों की गवाही दे रहे हों।

अधिक रात बीते तीनों वहाँ से उठे। चपला को इसका दुःख रहा कि वह उसे नाटिका का मध्यस्थ विचार न बता सकी, किन्तु उसने तय किया अगले दिन वह अरिन्दन को सब समझा देगी। रामनारायण कवि-सम्मेलन में न जा सका, सच्ची बात तो यों थी कि उस दिन बनारस शहर में ही नहीं बल्कि बनारस डिवीज़न में भी कोई कवि-सम्मेलन नहीं था।

—४—

चपला के स्कूल में जो उत्सव होनेवाला था वह बहुत ही सफल रहा। कार्यक्रम के सब अंगों में नाटिका ही सबसे अधिक सफल रही। उत्सव समाप्त होने पर मिस बैनर्जी ने मिस चपला को विशेष रूप से अभिनन्दित किया—वाह मिस चपला, आप तो छिपी रुस्तम निकलीं! आप तो कहती थीं आप कुछ लिखना ही नहीं जानती हैं, और ऐसा सुन्दर लिखा। जिस दृष्टि से देखिये यह एक चीज़ है। भाषा कितनी सुन्दर है। नहीं मिस चपला, आप यदि आलस्यवश न लिखें तो यह

देश का दुर्भाग्य होगा। यह एक ईश्वरीय देन है, इसकी अवहेलना न कीजिये।

चपला जानती थी कि यह प्रशंसा किसी और ही को मिलनी चाहिये, किन्तु उसने कुछ भी नहीं कहा, चुप बैठी रही। मिस बैनर्जी न मालूम और क्या-क्या कह गईं, किन्तु चपला अरिन्दम के बारे में सोच रही थी। गत एक महीने में वह कई बार अरिन्दम से मिल चुकी थी, किन्तु अरिन्दम में उसने कोई भी ऐसी बात नहीं देखी जैसी रामनारायण ने बताया था। जितने ही दिन जाते थे वह रामनारायण की बातों पर विश्वास खोती जा रही थी। चपला बहुत ही भावुक प्रकृति की थी, वह भरसक यह कोशिश करती थी कि किसी पर अन्याय न हो। शुरू-शुरू में वह बहुत ही सतर्क होकर अरिन्दम के कार्यों को देखती थी, किन्तु धीरे-धीरे वह समझ गई कि रामनारायण को इस मामले में जबर्दस्त धोखा हुआ है। उसने रामनारायण से एकाधबार यह बात कही भी, किन्तु उसने बिना कोई कारण दिखाये ही उसका प्रतिवाद किया, और झल्ला गया। तब से उसने राम-नारायण को इस विषय में कुछ पूछना छोड़ दिया, किन्तु साथ ही रामनारायण को वह मन ही मन कुछ सन्देह की दृष्टि से देखने लगी।

उस दिन शाम को स्कूल के बाद जब चपला अरिन्दम के घर गई तो उसने बात-बात में कह दिया—अरिन्दमजी, मैंने आज आपके यश का थोड़ा-सा हिस्सा चुरा लिया

अरिन्दम ने ज़रा चौंककर कहा—यश का या अपयश का?—उसका चेहरा कठिन हो गया था।

—अपयश का नहीं, यश का।—फिर चपला ने मिस बैनर्जी के साथ जो बात हुई थी उससे शुरू करके सारी परिस्थिति समझाई।

—ओह—अरिन्दम ने एक तृप्ति की साँस ली—मैं तो समझा था कि और कोई बात है।

चपला समझ गई कि किस बात पर इशारा है, फिर भी उसने कहा—क्या ?

—मैंने सोचा कि आप पर किसी ने उँगली उठाई है…

बीच में ही बात काटकर चपला ने कहा—मैं इसकी परवाह नहीं करती, न करूँगी—उसके चेहरे पर क्षोभ था। इस प्रकार हठीली चपला अरिन्दम को बहुत सुन्दर मालूम हुई।

—लेकिन रामनारायण ने ज़रूर कुछ न कुछ आपसे भिड़ा दिया होगा।

—आप जानते हैं वह ऐसा करता है, फिर भी आपका द्वार उसके लिये खुला है ?

—हाँ, मैं जानता हूँ कि वह ऐसा करता है।—अरिन्दम ने बीच में रुककर जैसे साहस संचय करते हुए कहा—और मैं जानता हूँ कि आपने भी कई जगह उसकी बात फैलाई। चपलाजी आपको ऐसा करने के पहिले मुझे निकट से देखना चाहिये था।—अरिन्दम के स्वर में झिड़कन नहीं, बल्कि उलाहना था।

—मैं इस बात को स्वयं स्वीकार करनेवाली थी अरिन्दमजी, किन्तु आपने कहकर मेरा काम आसान कर दिया। आप जानते नहीं मेरे जीवन में रामजी का क्या स्थान है। मैं एक मामूली शिक्षयित्री थी, वे ही मुझको स्कूल के रूरोनो काम से खींचकर सार्वजनिक जीवन में ले आये, इसलिये मैं जो कुछ भी वे कहते थे उसे निर्विचार रूप से मान लिया करती थी। यह मेरी ग़लती थी, और आप ही के विषय को लेकर हममें उनमें क़रीब-क़रीब हमेशा के लिये मतभेद हो गया। मुझे इसका दुःख है, किन्तु फिर भी मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने आप जैसे आदमियों से मेरा परिचय कराया।—चपला केवल कहना चाहती थी कि आपसे परिचय कराया, किन्तु "जैसे आदमियों से" इतना वाक्यांश इसलिये जोड़ दिया कि कहीं भद्दा न जँचे और अधिक अपनापन न खुले।

अरिन्दम को इन बातों से बड़ा सन्तोष हुआ। वह भावुकता से गद्‌गद हो गया, और स्नेहभरी दृष्टि से चपला की ओर देखने लगा। अरिन्दम ने फिर उससे धीरे-धीरे पूछ लिया रामनारायण ने उससे क्या कहा था। चपला ने विराम, अर्धविराम कुछ न घटाकर उससे सब बता दिया। सब कुछ सुनकर अरिन्दम ने कहा—चपलाजी, मेरा आपका परिचय मुश्किल से एक महीने का है, यह आपने कैसे तय कर लिया कि रामनारायण ग़लत है?

चपला ने दृढ़ता से उत्तर दिया—यह मैंने जान लिया—वह हँसी, फिर बोली—आप वैसे हो ही नहीं सकते, किन्तु हों भी तो मुझे फ़िक्र नहीं ...

बात दूसरे रास्ते पर चल निकली, कला पर बातचीत हुई, फिर राजनीति पर, किन्तु अरिन्दम जैसे आज एक विशेष ही दिशा में सब बातचीत ख़तम कर डालना चाहता था। उसने एकाएक अप्रासंगिक तौर पर ही पूछ डाला—अच्छा चपलाजी, आप तो उस दिन किशोर से रामनारायण को व्यंग करने पर लड़ रही थीं।

—हाँ, वे कह रहे थे कि रामजी को कविता का 'क' भी नहीं आता।

अरिन्दम हँस पड़े, कहा—किशोर रामनारायण से जला हुआ है, वह उसकी हरेक बात को नापसन्द करता है। Poor किशोर! वह मेरी निन्दा नहीं सुन सकता। वह एकाध बार मेरी बात लेकर लोगों से लड़ते-लड़ते बचा ...

चपला ने कहा—अब तो मैं भी लड़ जाती हूँ ......—वह ज़रा हँसी।

अरिन्दम चपला की इस स्वीकृति के तेज पर विचलित हो गया, भर्राई हुई आवाज़ में उसने कहा—क्या यह प्रायश्चित्त है?

—नहीं केवल कर्त्तव्य।—चपला ने तनकर कहा।

—५—

अरिन्दम और चपला की घनिष्ठता बढ़ती ही गई। चपला ऐसी-ऐसी बात कभी-कभी कह देती थी जिनका एक ही अर्थ हो सकता था कि वह अरिन्दम के और क़रीब आना चाहती है, और घनिष्ठ होना चाहती है। अक्सर वह खाद्यद्रव्य की शक्ल में, फूलों के रूप में अरिन्दम के लिये कुछ न कुछ उपहार लाया करती थी। ये उपहार हमेशा अकेले में दिये जाते थे। यदि उपहार लाते वक्त अरिन्दम के कमरे में कोई होता था तो चपला बड़ी चालाकी से जो कि एक औरत ही कर सकती है उस उपहार को छिपाये रहती थी, फिर जब अरिन्दम अकेला रह जाता था तो उसे बड़ी श्रद्धा से वह उपहार की चीज़ अर्पण करती थी, यदि तीसरा व्यक्ति उठता न था, और चपला को जल्दी होती थी तो वह कमरे में चीज़ कहीं छिपा दी जाती थी, फिर दुबारा आकर उसे अरिन्दम को देती थी।

धीरे-धीरे ऐसा हुआ कि एक स्कूल के समय के अतिरिक्त चपला सभी समय अरिन्दम के यहाँ दिखाई देने लगी। अरिन्दम के मित्रों तक ने इसपर आश्चर्य किया, कुछ लोग नाखुश भी हुए। एक दिन किशोर ने तो साहस करके यह बात कह ही डाली, उसने कहा—अरिन्दमजी, एक बात मुझे कहनी है...

अरिन्दम समझ गया किशोर क्या कहेगा, वह थोड़ा-सा परेशान हुआ, किन्तु जब उसने अपने प्यारे मित्र किशोर के चेहरे पर जिसे वह प्यार करता था, और जो उसे प्यार करता था उदासी देखी तो उसका दिल भर आया। उसने किशोर के कन्धे पर हाथ रख लिया और कहा—वह क्या बात है किशोर, मैंने कभी तुम्हारी बात टाली है?

किशोर की बड़ी-बड़ी सुन्दर आँखों में एक क्षण के लिये हिचकिचाहट आ गई, किन्तु अब वह बहुत दूर बढ़ चुका था, रुकना
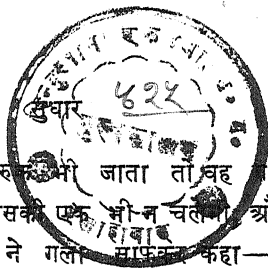
मुश्किल था। फिर यदि वह रुक भी जाता तो वह जानता था कि अरिन्दम के प्रश्नों के आगे उसकी एक भी न चलेगी, और उसे सब बात बतानी पड़ेगी। किशोर ने गला साफ़कर कहा—चपलाजी के बारे में लोग आपको बदनाम कर रहे हैं, क्या उनका यहाँ इतना आना-जाना कोई मतलब रखता है ?

अरिन्दम ने किशोर के कन्धे पर से हाथ हटा लिया, कहा—वह इसकी परवाह नहीं करती, वह सुनती है तो हँस देती है...

किशोर ने अपना चेहरा और भी गंभीर बनाकर कहा—वे न परवाह करें, आपको तो परवाह है, हम लोगों को तो है।

—नहीं किशोर मुझे नहीं है, तुम लोगों को भी नहीं होना चाहिये, हमने तुमने अब तक परवाह की उसका क्या नतीज़ा हुआ ? जब तक रामनारायण ऐसे महापुरुष मौजूद हैं तब तक कुछ भी करो बचने का उपाय नहीं है। हम लोग सिर्फ अच्छे ही रह सकते हैं, यह ज़रूरी नहीं कि इससे हमारी शोहरत भी अच्छी हो। फिर तुम्हें एक बात बतावें किशोर, इतिहास को शुरू से देख जाओ कोई भी सुरूपा स्त्री और कोई भी समर्थ पुरुष बदनामी से नहीं बचा। इतिहास के जिन व्यक्तियों को हम धवलयश समझते हैं वे भी अपने समय में बदनाम रहे होंगे, वह इस बात से देख लो कि हमारे समय के सबसे बड़े भारतीय अरविन्द-गांधी-रवीन्द्रनाथ को भी नालायक़ों ने नहीं छोड़ा...

इस उत्तर से किशोर को सन्तोष न हुआ, किन्तु वह आगे कुछ कह भी नहीं सकता था। उसने केवल इतना कहा—जो अच्छा समझिये कीजिये, मेरे मन में एक बात आई थी वह कह दी, बस और कुछ नहीं...

चपला का आना-जाना उसी तरह जारी रहा, बल्कि अब वह हर तरीक़े से अरिन्दम के लिखने के काम से भी संयुक्त हो गई। कभी

अरिन्दम इमला बोलता था और वह लिखती थी, कभी वह उसके कहने से चिट्ठी लिखती थी, कभी कटिंग काटती थी। इस प्रकार वह अरिन्दम के जीवन के हरेक रन्ध्र में घुसने लगी, और घुस गई। अरिन्दम को ऐसा मालूम दिया कि उसे बनारस में एक ही व्यक्ति ऐसा प्राप्त हुआ जो उसकी हरेक बात को समझती है, जो उसके विद्वत्तापूर्ण लेखों तथा कहानी आदि को समझने का माद्दा रखती है। अरिन्दम के यहाँ कई स्त्रियाँ क्यों साफ़-साफ़ कहा जाय युवतियाँ आती थीं, उनमें कई चपला से सुन्दरी थीं, किन्तु चपला के चेहरे पर जो बौद्धिकता की छाप थी वह अरिन्दम को कहीं नज़र नहीं आती थी। अरिन्दम को ऐसा मालूम दे रहा था कि उसका जीवन धीरे-धीरे चपला के जीवन के सूत्रों के साथ लिपटता चला जा रहा है। वह अक्सर इस सोच में पड़ जाता था कि इसका अन्त कहाँ जाकर होगा, किन्तु कोई निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाता था।

एक दिन रामनारायण बड़ी परेशान हालत में अरिन्दम के पास पहुँचा, बोला—अरिन्दमजी, मैं कई बार आ-आकर लौट-लौट गया, आप कभी अकेले नहीं मिलते, मुझे आपसे कुछ ज़रूरी बातें करनी है—उस समय किशोर बैठा था, उसकी ओर मुड़कर रामनारायण ने कहा—किशोर, आप यदि बुरा न मानें तो मुझे अरिन्दमजी से कुछ ख़ास बातें करनी हैं....

किशोर की भौंहें चढ़ गईं, फिर भी वह उठ खड़ा हुआ, किन्तु उसे उठने से मनाकर अरिन्दम ने कहा—रामनारायण, मुझमें और किशोर में कोई छिपी बात नहीं है, तुम बैठो किशोर!

रामनारायण बीच ही में बोल उठा—नहीं अरिन्दमजी, बातें बहुत ही गूढ़ हैं, यदि किशोरजी नहीं जायेंगे तो इसका मतलब है आप मेरी बात नहीं सुनना चाहते, मैं सिर्फ आपसे पाँच मिनट चाहता हूँ...

क्या करता इस पर किशोर उठा, और व्यंग करके रामनारायण को कहता गया—कविजी मैं जाता हूँ आप अपना काम करें।

रामनारायण ने कोई उत्तर न दिया, बल्कि उसने किशोर की बातों पर ध्यान ही नहीं दिया।

अरिन्दम बड़े आश्चर्य में था कि रामनारायण क्या कहेगा, कहा—हाँ।

रामनारायण ने बिना कुछ भूमिका बाँधे ही कहा—देखिये, यह जो लड़की चपला आपसे मिला करती है यह आपके मिलने लायक़ नहीं है, आप इससे न मिला करें।

अरिन्दम हक्काबक्का रह गया कि इस मामले में जो बात किशोर ने कही थी उससे रामनारायण भी सहमत है, वह ज़रा चिन्तित हो गया, किन्तु कुछ बोला नहीं। रामनारायण ने हिचकते हुए कहा—मैंने उससे आपका परिचय कराया था इसलिये मैं इस ख़तरे से आपको आगाह कर देना उचित समझता हूँ…

अरिन्दम अकारण झल्ला गया, बोला—आपने मिस चपला को भी तो मेरे बारे में आगाह कर दिया होगा—अरिन्दम को क्रोध आ गया था, वह कुपित नेत्रों से रामनारायण की ओर घूरने लगा, कहा—आप तो मेरे विषय में भी क्या-क्या कहते रहते हैं, मिस चपला से आप मेरी बुराई करते हैं, मुझसे आप उनकी करते हैं, ऐसी हालत में आप बतावें आपकी कौन-सी बात सच मानी जावे ? यदि आपको इसके अलावा मुझे कुछ कहना नहीं है तो जाइये मुझे सुनने की फ़ुर्सत नहीं है।

यह कहकर अरिन्दम उठने का उपक्रम करने लगा, किन्तु उसने देखा, अरे, यह क्या रामनारायण फूट-फूटकर रो रहा था ! रामनारायण की आँखों में आँसू देखते ही अरिन्दम धम से कुर्सी पर फिर बैठ गया। वह समझ नहीं पा रहा था कि उसे क्या करना चाहिये। उसने वैसे ही बैठे ही बैठे कहा—यह क्या रामनारायण, छिः ! जो कहना है

सो कहो, लेकिन सच बोलो। अरिन्दम को इस युवक पर दया आ रही थी। इस युवक में कई गुण थे, किंतु कमजोर दिल होने के कारण वह झूठा भी, पतित भी और जाने क्या-क्या हो गया था।

रामनारायण ने आँसू पोंछ लिये, और कहा—देखिये अरिन्दमजी मैं मानता हूँ मैं झूठा हूँ, मैंने आपके विरुद्ध जान-बूझकर सैकड़ों झूठी बातें कही हैं, मैंने आप पर हर तरीके का कीच उछाला है, किंतु यह भी याद रक्खें आपकी साहित्यिक, चारित्रिक महत्ता को मैंने जितना समझा है इतना किसी ने नहीं जाना। किशोर आपको प्रेम करता है, गुरु को शिष्य जैसे देखता है या मित्र को मित्र जैसे देखता है, आपको देखते ही उसकी आँखें चमकने लगती हैं, आपका नाम उसके लिये किसी बात की भलाई का प्रमाण है, किंतु फिर भी मैं जानता हूँ आप उसकी मित्रता पाकर पूर्ण सन्तुष्ट नहीं हैं, क्योंकि हरेक क्षेत्र में वह आपकी बात तथा उक्तियों को समझ नहीं सकता। रूपकुमारी हैं, वह आपको समझना नहीं चाहती, आपसे सीखना चाहती है। रामप्रसाद आपकी दूर से उपासना करता है, पास नहीं आना चाहता। नरेन्द्र के लिये आप हिमालय की चोटी हैं, वह नीचे खड़े होकर हसरत भरी निगाहों से देखता है, आपको नहीं, बल्कि किशोर वगैरह को जिन्हें वह समझता है आपके पास पहुँचे हुए हैं। इसी तरह उन सब लोगों का हाल है जो आपके इर्द-गिर्द रहते हैं। —वह अरिन्दम के मुँह की ओर देखने लगा कि क्या असर हो रहा है, किन्तु अरिन्दम बिना हिलेडुले बैठा रहा, रामनारायण कहता रहा।

—आपको इन लोगों से पूर्ण परितृप्ति नहीं है, क्योंकि वे आपको समझते नहीं हैं। अकसर मैंने देखा है आपने रोम्या रोलाँ, अनातोल, शा, गैलसवर्दी या अपनी ही कोई मौलिक उक्ति कही, किंतु किसी ने कुछ न समझा, आधा समझा या गलत समझा। माफ कीजियेगा, मैं आपको पूरा समझता था और हूँ, किंतु एक कारण से

मैं आपका घनिष्ट नहीं हो सका। वह यह कि आपने मुझे दो ही एक दिन में पढ़ लिया, आपने जान लिया कि मैं पतित था और हूँ। मुझे क्रोध आया क्योंकि आपने मुझे अपनाया नहीं, मुझे तो यहाँ तक मालूम पड़ा कि आप मुझसे अंदर-अंदर घृणा करते हैं। आपके सिर में एक बार दर्द हो रहा था, ऐसे समय में हमेशा कोई न कोई आपका सिर दाब देता था। आप इसे पसंद करते थे। इस बार मैंने सोचा मैं ही यह सेवा करूँ, मुझे अपनी दक्षता पर भरोसा था। मैंने सिर दबाने की कला को कला की तरह सीखा था, किन्तु पहले तो आपने मुझे कष्ट करने के लिये मना किया, फिर जब हमने तिस पर भी न माना, तो आप मुरझा गये। मैंने अपनी कला को पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया, किन्तु आपने हरचन्द कुछ पसंद न किया, आप जैसे मेरे स्पर्श से सहमे जा रहे थे। बस उसी दिन से मैं आपका दुश्मन बन गया और आपके सम्बन्ध में जो मुँह में आता वही कहने लगा।

—तुमने बुरा किया, इसको तुम मानते हो कि नहीं—अरिन्दम ने रुखाई से कहा।

—मानता हूँ, किन्तु मैंने ज़िन्दगी में जो जो बुराई की है उसके मुकाबले में यह कुछ नहीं। इसके बाद वह बिना पूछे गये ही अपनी गन्दी जिन्दगी का पूरा किस्सा सुना गया, जिसका सारांश यह था कि कोई भी अपराध उससे नहीं बचा।

सुनकर अरिन्दम को कुछ आश्चर्य नहीं हुआ, कहा—मैंने इसका अनुमान कर लिया था।

—मैं जानता था, लेकिन चपला के मामले में आप कैसे धोखा खा गये यह समझ में नहीं आता।

चपला का प्रसंग आते ही अरिन्दम का चेहरा फिर तन गया, वह सँभलकर बैठ गया।

—मुझे धोखा कैसा ?

—धोखा यह कि आपने उसे नहीं पहचाना ।

—पहचाना कि नहीं यह देखेंगे, लेकिन तुम्हारा क्या मतलब है बताओ···

—आप समझते होंगे चपला बड़ी सीधी है, दूध की धुली है, किन्तु यह बात ग़लत है ।

जरा व्यंग की हँसी हँसते हुए अरिन्दम ने कहा—आपने उसे परिचित कराते हुए उसकी बड़ी तारीफ की थी—अरिन्दम रुख के अनुसार कभी रामनारायण को आप कभी तुम कहता था ।

—हाँ, यह तो सच है, लेकिन अब सच्ची बात बताता हूँ, वह यह है कि चपला जब स्कूल में थी तभी वह दो मनचलों द्वारा बिगाड़ी गई थी, फिर कालेज में उसने अपने से कम उम्र दो छात्रों को पतित किया । रामनारायण ने अरिन्दम के मुँह की ओर देखा, अरिन्दम के चेहरे का रंग बदल गया था जैसे उसने एक कड़वा घूँट पिया हो । रामनारायण ने कहा—आपने शायद मेरी बात का एतबार नहीं किया ?

—नहीं —अरिन्दम ने कहा, किन्तु उसके मन में भयंकर उथल-पुथल मच रहा था, उसके माथे पर पसीने की बूँदें थीं । क्या यह अनुकम्पा थी, डाह थी, या केवल कड़वी निराश की घूँट ?

रामनारायण ने इधर-उधर कई बार देखा फिर उसने कहा—अच्छा, तो मैं अब अपना कर्त्तव्य कर चुका, जाता हूँ....

अरिन्दम ने कहा—नहीं बैठो—अपने इस कथन पर उसे स्वयं आश्चर्य हुआ ।

दोनों कई मिनट तक चुपचाप बैठे रहे (फिर अरिन्दम ने दो घंटे तक चपला के विषय में) रत्ती-रत्ती बात पूछी, और मजे की बात है उसने रामनारायण की सब बातों को मोटे तौर पर सच माना । जिस समय इन लोगों की बातचीत ख़त्म हुई, उस समय सड़कों पर झाँयझाँय सन्नाटा था । आकाश में चाँद न होने से तारे

तेजी से टिमटिमा रहे थे। रामनारायण जब चला गया तो अरिन्दम ने चन्द्रमाहीन आकाश पर दृष्टि डाली, और उसका हृदय व्यथा से परिपूर्ण हो गया। वह मकान के अन्दर गया तो देखा सब लोग सो गये हैं, उसका खाना निर्दिष्ट जगह पर ढका रक्खा हुआ है, एक बिल्ली उसके पास बैठी ताड़ रही है। अरिन्दम को देखते ही बिल्ली खिसककर एक चौकी के नीचे चली गई। अरिन्दम धीरे-धीरे खाने की ओर बढ़ा, उसने उसका ढक्कन खोल दिया, बिल्लीवाली चौकी की ओर देखा, फिर उलटे पाँव अपने कमरे में लौटा और एक गिलास पानी पीकर बत्ती बुझाकर सो रहा।

उस रात को उसे नींद बरायनाम आई। दूसरे दिन अरिन्दम अपने नियमानुसार सबेरे उठा, किन्तु नियमानुसार अपने काम में मन न लगा सका, फिर भी वह यंत्रवत बहुत से काम कर गया। जब स्कूल पढ़ाकर चपला आई, और उसे देखकर चौकठ पर से मुस्कराई जैसा कि वह हमेशा मुस्कराती थी तो उसकी रात भर की जमी हुई अशान्ति एक दम से दूर हो गई। उसे यह समझ ही में नहीं आया कि रामनारायण ऐसे लबाड़ी की बातों पर वह इतनी देर तक इतबार कर परेशान क्यों हो रहा था। उसने फिर भी हँसते-हँसते कहा—कल रामनारायण आया था, रात बारह बजे तक मुझसे उसकी बातें होती रहीं...

चपला ने कहा—मुझसे इससे भेंट नहीं होती, जब होती है तो आवाजें फेंकता है...

—मुझसे कल आपके विषय में बहुत-सी बातें कहता रहा।

—मेरे विषय में? चपला ने आश्चर्य से कहा—मेरे विषय में वह क्या कह सकता है?

जरा हँसकर अरिन्दम ने संक्षेप में रात की बातें बताईं, फिर कहा—उसके अनुसार आप दो मनचलों द्वारा बिगाड़ी गईं, फिर कालेज जीवन में आपने दो कम उम्र नौजवानों को बिगाड़ा।

चपला गंभीर हो गई, बोली—क्या आपने उसका इतबार किया?

—नहीं चपला—अरिन्दम ने आज पहिली ही बार उसे मिस चपला न कहकर चपला कहा था ।

इसके बाद अरिन्दम तरह-तरह से समझाता रहा कि उसने रामनारायण का विश्वास न किया । उठते समय चपला ने कहा—यदि आपने रामनारायण का इतबार न किया तो आज से आप मुझे तुम कहें ।

अरिन्दम एक मिनट तक चपला की ओर देखता रहा, चपला ने आँखें नीची कर लीं, उसने कहा—अच्छी बात है चपला—फिर मुस्कराकर कहा—अच्छी बात है रामनारायण की बातों से तुम मेरी आँखों में गिर गईं, अब आज से मैं तुम्हें आप न कहकर तुम कहूँगा ।

—मैं कोशिश करूँगी कि मैं इससे भी आपकी आँखों में नीचे गिरूँ—चपला ने कहा ।

अरिन्दम ने इस पर हँस तो दिया, किंतु वह इस नारी की बहुत-सी बातें पहिले भी नहीं समझा था, आज फिर यह बात ऐसी सुनी जो समझ में न आई । चपला जब चली गई तो वह इस बात के संभव अर्थों पर विचार करते हुए परेशान होने लगा । उसके मन में यह इच्छा हुई कि चपला आज जल्दी न जाती तो अच्छा रहता, वह इस आखिरी वाक्य को पूर्ण रूप से समझना चाहता था ।

—६—

चपला अब धीरे-धीरे अरिन्दम के जीवन का एक अनिवार्य अंश ही नहीं सबसे बड़ा अंश हो गई । किशोर पीछे रह गया, रूपकुमारी पीछे रह गई, सब पीछे रह गये, चपला का स्थान सबसे आगे हो गया । स्कूल के समय को छोड़कर सवेरे, शाम को तथा बड़ी रात तक चपला अरिन्दम के पास डटी रहने लगी ।

लोग जब देखते तो उसे अरिंदम के यहाँ मौजूद पाते। चपला अरिन्दम के काम में हाथ बटाती थी, और भी बटाने लगी, किंतु यह काम में हाथ बटाना बहुत कुछ हद तक इसलिये था कि दूसरों के सामने दिखाया जाय कि वह अरिन्दम के ऐसे कामकाजी व्यक्ति के यहाँ दिन भर क्यों मौजूद रहती है। अरिन्दम ने चपला को ऐसा करने नहीं कहा था, न चपला ने अरिन्दम से कहा था कि वह इस कारण से ऐसा करती है, किंतु फिर भी वे दोनों समझते थे कि उद्देश्य यही है। जब किसी के आने की आहट होती तो चपला अपने अनजान में ही एक न एक काम उठा लेती, प्रूफ पढ़ने लगती, कोई लेख नकल करने लगती, या ऐसा मुँह बना लेती जैसे वह किसी दुरूह विषय को अरिन्दम से समझने की कोशिश कर रही है। दूसरों के सामने यह ढोंग इन दोनों के व्यवहार में घुस चुका था, किंतु पाप नहीं, याने वे बातें नहीं जिसको लोग पाप कहते हैं। अरिन्दम कभी-कभी सोचकर हैरान हो जाता कि आख़िर यह ढोंग उन्हें क्यों रचने की इच्छा होती है, क्या किसी को चाहना अपराध है? फिर उस चाहने में कोई अपराध तो है नहीं, कोई ग्लानिजनक बात तो है नहीं।

किशोर, केशव, रूपकुमारी, नरेन्द्र, वीरेन्द्र सब धीरे-धीरे कुछ खिंचे रहने लगे, धीरे-धीरे चपला में और इन लोगों में एक परोक्ष विरोध सुलगने लगा। कभी-कभी अरिन्दम के सामने ही इसका धुआँ आने लगा, एक आध चिनगारी भी कभी-कभी ऊपर आ जाती थी। अरिन्दम—वह अरिन्दम जो कभी परेशान नहीं रहता था अब इस बात को सुलझाने में परेशान रहने लगा कि कैसे चीजें ढङ्ग से चलें कि पूर्ण शान्ति रहे, किन्तु वह इसमें शायद सफल नहीं रहा। जब सफल नहीं रहा, तो उसने इसकी परवाह भी करनी छोड़ दी। इस संघर्ष में पड़कर अरिन्दम का मिज़ाज़ भी ख़राब रहने लगा, पहिले हर कोई उसके मधुर स्वभाव का क़ायल था, किन्तु अब वह कुछ-कुछ चिड़चिड़ा रहने लगा। केवल किशोर के बारे में अरिन्दम

हमेशा सचेत रहता कि उसे कोई दुःख न पहुँचे, किन्तु फिर भी वह अनुभव करता था कि किशोर को कभी-कभी क्लेश पहुँच रहा है, वह झुँझलाकर रह जाता था। कुछ उसकी समझ में नहीं आता था।

—७—

अभी-अभी अरिन्दम का लिखा हुआ एक नाटक और प्रकाशित हुआ था, यह नाटक एक रूपक की तरह पर था। आधुनिक मन का इसमें इतना सुन्दर विश्लेषण किया गया था कि चारों तरफ़ वाहवाह हो रहा था। अरिन्दम की यह पहली पुस्तक थी जिसका स्वागत केवल पाठक समाज ने ही नहीं बल्कि विशुद्ध साहित्यिकों तक ने किया। साहित्यिक लोग अब तक अरिन्दम को साहित्य क्षेत्र में अनाधिकारी समझते थे और उस पर बुरी दृष्टि से देखते थे, किन्तु इस पुस्तक से वे न केवल अरिन्दम को साहित्यिक मानने पर बाध्य हुए, बल्कि साथ ही पहिले की प्रकाशित पुस्तकों को उन्होंने साहित्यिक जगत में पास-पोर्ट दे दिया। इस पुस्तक की बड़ी धूम थी, अरिन्दम के मित्रों ने भी जैसे इस पुस्तक से अरिन्दम को नये सिरे से आविष्कार किया। और पुराने मित्रों के साथ चपला को भी अरिन्दम की ओर से नाटक की एक प्रति उपहार में मिली।

इस पुस्तक पर कई दिन तक आलोचना चली, चपला ने भी इसकी ख़ूब तारीफ़ की। उसने एक दिन कहा—अरिन्दमजी···—फिर वह रुक गई।

अरिन्दम सँभल कर बैठा—हाँ।

—मैं जितना ही आपको देखती हूँ उतनी ही मुग्ध होती जाती हूँ—चपला ने कहा।

अरिन्दम ने मुस्कराते हुए कहा—यह कोई अच्छी बात नहीं—

फिर थमकर बोला—यह तो बताओ यह असामयिक वर्षा क्यों ? कौन-सी बात ऐसी हुई ?

—आपका नाटक बड़ा अच्छा है।

—ओह ?

—किन्तु नाटककार नाटक से अच्छा है। और बातें जाने दीजिये आपके साथ इस एक वर्ष में मैंने कितनी बातें सीख ली। सबसे बड़ी बात तो मैंने यह सीखी कि मैं एक आदमी के मन की बात बहुत कुछ ताड़ लेती हूँ। मैं एक पूरी मनोवैज्ञानिक हो गई हूँ....

अरिन्दम ने कहा—तब तो तुम बड़ी ख़तरनाक हो गई हो—फिर एकाएक गम्भीर होकर बोला—चपला, किसके मन में क्या बात है, यह जानना बड़ी मुश्किल बात है, फिर दूसरे के मन की बात जानकर हमेशा खुशी ही नहीं होती, चपला।

—मुझे तो आपके मन की बात जानकर खुशी होती है अरिन्दम-जी।—अरिन्दमजी शब्द बहुत ही मधुरता से कहा गया था।

अरिन्दम चौंक पड़ा, उसने कहा—मेरे मन की बात ? मेरे मन की बात कैसी चपला ? तुम तो अब धीरे-धीरे बिलकुल रहस्यमयी होती जा रही हो, चपला।

—नहीं, अरिन्दमजी मैं और स्पष्ट होती जा रही हूँ—चपला ने कहा।

—स्पष्ट ? मुझे तो नहीं मालूम देता, मैं तो तुम्हारे बारे में बड़ा परेशान रहता हूँ—फिर उसने क्षितिज की ओर देखकर कहा—न मालूम इन परेशानियों का अन्त कहाँ होगा...

चपला हँसी, उसने कहा—आप अभी से इन परेशानियों का अन्त चाहने लगे ? अभी ? इतनी जल्दी ?—फिर कुछ गम्भीर होकर बोली—लेकिन अरिन्दमजी मैं तो चाहती हूँ हमेशा मैं ऐसी ही परेशान रहूँ, और आपको करती रहूँ। अन्त की बात मैं सोच नहीं सकती हूँ, हाँ, अन्त यदि आवे ही तो इन्हीं परेशानियों में ही हो। इन उलझनों

तथा परेशानियों में ही मेरी आँखें मुँद जायँ—यह कहकर उसने आँखें मूँद लीं।

अरिन्दम एकाएक खड़ा हो गया, कुछ सोचा, फिर वह कमरे के एक सिरे से दूसरे सिरे तक धीरे-धीरे टहलने लगा जैसे वह अपनी वर्तमान उत्तेजित हालत से टहल जाना चाहता था। चपला उसको देखती रही। एकाएक अरिन्दम चपला के पास आकर रुक गया, पुकारा--चपला !

—कहिये।

—यह तुम बीच-बीच में क्या कहती हो चपला, तुम देखती नहीं हो आजकल मैं पढ़ नहीं पाता, लिख नहीं पाता, किसी काम में मन नहीं लगता। सबेरे से शाम तक कहीं निकलता नहीं कि कहीं तुम आओ और लौट न जाओ। तुम आती हो तो भी मैं परेशान रहता हूँ, तुम नहीं आती हो तो भी मैं परेशान रहता हूँ, कुछ समझ में नहीं आता मैं क्या करूँ। इन परेशानियों का कारण तुम ही हो, बीच-बीच में तुम ऐसी बातें कह देती हो जिससे मैं और भी परेशान हो जाता हूँ कि उनका क्या अर्थ लिया जाय, क्या तुम जो बातें कहती हो उनका अर्थ समझकर कहती हो ?

चपला भी खड़ी हो गई, किन्तु वह आखें नीची किये हुए ही बोली—मुझे सिखलाइये मुझे क्या कहना चाहिये, आप तो जानते हैं मैं क्या सोचती हूँ। मुझे सिखलाइये अरिन्दमजी, मैं तो आप की शिष्या हूँ...

अरिन्दम एकाएक पीछे हट गया, बोला—तुम मेरी शिष्या ? क्या तुम मुझे व्यंग कर रही हो चपला ?

—लोग मुझे आपकी शिष्या ही बतलाते हैं...

—लोग बतलाते हैं, बतलाया करें। लोग तो बहुत कुछ कहते हैं, लोगों की बातें सब सच नहीं होतीं यह तुम जानती हो चपला...—अरिन्दम फिर कुर्सी पर बैठ गया।

—काश होती—चपला ने दुःख के लहजे में कहा।

अरिन्दम फिर चौंक पड़ा, कहा—क्या ?

—काश वे बातें सब सच होतीं जो लोग हमारे आपके बारे में कहते हैं।

—क्या कहती हो चपला ?

—हाँ—चपला भी बैठ गई; वह परिहास नहीं कर रही थी यह स्पष्ट था।

अरिन्दम ने हाथ मलकर विह्वल की भाँति कहा—चपला, तुम आग से खेल रही हो, तुम्हें शायद पता नहीं है तुम क्या कह रही हो। तुम शायद मुझसे खेल रही हो चपला।

—मैं आपसे खेल रही हूँ ? हाँ, रामनारायण ने आपको बतलाया था मैं दो मनचलों से बिगाड़ी जा चुकी हूँ और मैंने दो को बिगाड़ा है, शायद इसीसे आप समझते हैं मैं लोगों से खेलने की अभ्यस्त हूँ—चपला की सरल सुन्दर आँखों में आँसू थे।

अरिन्दम घबड़ाकर उठा। फिर तो दोनों में घंटों तक परिस्थिति साफ की बातें जिसे पुराने औपन्यासिक प्रेमालाप कहेंगे होती रहीं, किन्तु अरिन्दम के अजीब स्वभाव के कारण ये केवल बातें ही बातें रहीं, इसका कोई और परिणाम न निकला जो उपन्यासों में दिखलाया जाता है।

इसी प्रकार बहुत दिन तक चलता रहा। चपला का आना-जाना उसी प्रकार चलता रहा। अरिन्दम के दूसरे मित्रों में कुछ ने इसे अनिवार्य आफत के रूप में ले लिया, कुछ कहने लगे अब दोनों में शादी होती ही है, कुछ ने कहा शादी न होने पर भी सब काम शादी की तरह ही मौजूद है; किंतु इन अटकल पच्चुओं तथा छीटों में से कोई भी बात कार्य-क्षेत्र में नहीं हुई। किशोर वगैरह कुछ मित्र जिनको अरिन्दम पर पूरा भरोसा था यह कहकर अपने को समझाने

लगे कि अरिन्दम एक नाटककार है, वह चपला को निर्लिप्त रूप से अध्ययन तथा विश्लेषण मात्र कर रहा है जिसका नतीजा जल्दी ही कोई नाटक या उपन्यास के रूप में प्रकाशित होगा। वे इसे कला के क्षेत्र में एक गवेषणा मात्र समझते थे, उनके लिये चपला अरिन्दम की कला-प्रयोगशाला मात्र थी।

चपला से अरिन्दम की घनिष्ठता शायद उस सीमा पर पहुँच चुकी थी जिसके आगे मित्रता नहीं जा सकती। कौन किसका Friend, philosopher, guide था यह अब कहना कठिन था। एक ज़माने में अरिन्दम गुरु था, और चपला शिष्या, किंतु अब पलड़ा किस ओर भारी था यह बात स्पष्ट नहीं थी। खुले तौर पर सबके सामने तो अरिन्दम ही गुरु था, किंतु अब वे 'एक क़ालिब दो जान' हो रहे थे। शायद ही कोई बात अब अरिन्दम करता था जिसमें वह चपला की सलाह न लेता था और सलाह में कभी उसको राय पलटनी नहीं पड़ती थी। दोनों की राय अनिवार्य रूप से मिल ही जाती थी।

चपला और अरिन्दम में बातें हो रही थीं। चपला ने कहा—अरिन्दमजी आपको मैंने एक बात शायद नहीं बताई कि मैं जब स्कूल में थी तब एक अच्छी अभिनेत्री समझी जाती थी, मुझे कालेज में इसके लिये कई बार तमगे और पुरस्कार भी मिल चुके हैं...

बात कोई ऐसी नहीं थी कि उसमें दिलचस्पी ली जाय, किन्तु अरिन्दम की दिलचस्पी जग गई, चपला की हर एक बात में उसकी दिलचस्पी पैदा हो जाती थी। उसने कहा—अच्छा! तो हमेशा से अभिनय करने की कला में तुम कुशल थी?—वह हँसा, चपला ने हाथ को मृदुता के साथ झटकारते हुए कहा—जाइये, आपको तो हर बात में मेरा अभिनय ही दिखलाई पड़ता है, बतलाइये मैंने आपके साथ कब अभिनय किया?—फिर ठहरकर बोली—मैं एक बात आपसे कहना चाहती थी सो बीच ही में आपने छेड़ दिया...

नहीं-नहीं, आप फ़र्माइये—अरिन्दम ने प्यार भरे व्यंग से कहा।

—मुझे एक इच्छा होती है—चपला ने भावुकता के साथ कहा।

—क्या चपला?—अरिन्दम ने उसी भावुकता से उत्तर दिया।

कुछ देर तक चपला सोचती रही जैसे वह हिचकिचाती हो, फिर बोली—मेरी इच्छा होती है कि मैं फिर अभिनय करूँ, और ख़ूब नाम कमाऊँ...

तो मेरी नन्ही-सी चपला, तुम अब अभिनेत्री बनकर मुझसे दूर बहुत दूर चली जाना चाहती हो, और देश-विदेश में नाम कमाना चाहती हो?

नहीं, मैं अभिनेत्री बनना नहीं चाहती, मैं तो कुल जमा एक बार अभिनय करना चाहती हूँ—यहाँ जैसे कुछ सोचकर वह ठहरी, बोली—मैं तो चाहती हूँ आप नायक हों और मैं नायिका, बस एक-बार मैं अभिनय करना चाहती हूँ...

—चपला, तुम मुझे बहुत लुभा रही हो—अरिन्दम के चेहरे पर एक अजीब परेशानी झलक गई। वह खड़ा होकर फिर बैठ गया।

नहीं, मैं लुभा नहीं रही हूँ, सचमुच कह रही हूँ, आप इसके लिये कोई नाटक लिखें, लेकिन देखियेगा युग के अनुसार हो, और ज़रा अच्छा हो।

अरिन्दम ने कहा—क्यों चपला, अपने जान में तो मैंने कोई ख़राब चीज नहीं लिखी है, हाँ, इस अवसर के लिये मैं अपनी सारी कला उँडेल दूँगा, और विश्वास रक्खो वह तुम्हारे मन के मुताबिक युग के अनुसार होगा—थोड़ी देर ठहरकर वह बोला—लेकिन एक बात तो कहो, क्या यह जरूरी है कि मैं भी अभिनय करूँ? तुम जानती हो मैंने अभिनय करना कालेज-जीवन में ही छोड़ दिया है...

चपला ने कहा—यही तो ख़ास मक़सद है, अगर आपने ही अभिनय नहीं किया तो फिर मेरा उद्देश्य ही कहाँ पूरा हुआ?

अरिन्दम सरल तृप्ति की हँसी हँसा। इस विषय पर अब अधिक बात नहीं हुई; किन्तु उसी दिन से अरिन्दम ने नाटक लिखने का बीड़ा उठा लिया। रात दिन वह उसी की कल्पना में विभोर रहने लगा। खाते, सोते, चलते-फिरते वह उसी की बात सोचता। वह बहुत थोड़ी देर के लिये नोट की तरह पर कुछ लिखता, अधिकतर समय तो उसका इसी में बीतता कि नाटक के एक-एक शब्द, दृश्य, पूर्ण-विराम, अर्धविराम तक सोचे। किशोर अपने मित्र की इस मानसिक अवस्था को जानता था, इससे वह ख़ुश ही हुआ, किन्तु जब उसने देखा अरिन्दम की यह अन्यमनस्कता पहिले की ऐसी अवस्थाओं से प्रगाढ़ है, तथा अधिक दिनों तक स्थायी हो रही है तब वह घबड़ाया। उसने सोचा यह पहिले की तरह शायद एक कलाकार की एकाग्रता नहीं है, शायद यह प्रेम है। इस बात के दिमाग़ में आते ही वह चपला पर बहुत नाराज हुआ। यहाँ पर यह साफ कर दिया जाय कि प्रेम करने को किशोर बुरा नहीं समझता था, अंग्रेजी में जिसे Moralist कहते हैं वह वैसा नहीं था, किन्तु वह समझता था कि अरिन्दम के ऐसे ऊँचे दर्जे के व्यक्ति के लिये यह कमजोरी अनुचित है। प्रेम किशोर की आँखों में एक मानवीय कमजोरी था।

अरिन्दम की जब यह मानसिक अवस्था बहुत दिन जारी रही, और किशोर को इसका कारण समझ में नहीं आया तो उसने एक दिन खुलकर अरिन्दम से पूछा—अरिन्दमजी, आज-कल आपकी तबियत कुछ खराब रहती है क्या ?

अरिन्दम ने कहा—नहीं तो—किन्तु वह समझ गया इशारा किस ओर है।

किशोर ने कहा—फिर आप आज-कल कुछ दुखी मालूम होते हैं, यह क्यों ?

अरिन्दम हँसा, बोला—नहीं, नहीं, मैं दुखी नहीं हूँ। मैं एक नाटक की परिकल्पना में व्यस्त हूँ उसीमें मैं लगा रहता हूँ, किशोर।

मैं यह तुमसे बताना भूल गया—फिर ठहरकर बोला—मुझे यह बात तुमसे बहुत पहिले ही कह देनी चाहिये थी, मुझे माफ करना किशोर। मैं इस नाटक में जाति के लिये एक स्थायी धरोहर छोड़ जाना चाहता हूँ। शायद यही मेरी अन्तिम कृति हो।

कहे हुए प्रत्येक शब्द से मानसिक उत्तेजना झलकती थी, किशोर ने यह बात समझ ली। इससे उसे दुःख ही हुआ, क्योंकि ऐसी अव्यवस्थित चित्तता अरिन्दम के चरित्र के प्रतिकूल थी। एक आत्म-समाहित कलाकार के रूप में ही उसने अपने गुरु को देखा था, अपने शिक्षक तथा मित्र के लिये उसके मन में दुःख ही हुआ, और उसने चाहा कि किसी भी तरह वह उसके काम आवे। अरिन्दम ने ठहरकर कहा—मेरी इच्छा है कि मैं इस नाटक का स्वयं अभिनय भी करूँ, और··· कहकर वह रुक गया, चपला के अभिनय के बारे में उसने कुछ न कहा।

किशोर को बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह नया मर्ज अरिन्दम को कहाँ से लग गया, पहिले तो कभी उसने ऐसी कोई इच्छा प्रकट नहीं की। हाँ, अरिन्दम नाटक के अभिनय देखने का बड़ा शौकीन था, शायद ही कोई नाटक का अभिनय उससे छूटता हो। टाकियों में भी अरिन्दम बहुत जाया करता था, कोई खेल अच्छा लगा तो उसे वह लगातार तीन-तीन दफे तक देखता था, और मित्रों में उच्छ्वासित होकर उनकी प्रशंसा करता था। किशोर को स्वयं कालेज-जीवन में अभिनय करने का शौक था, और वह एक अच्छा अभिनेता भी समझा जाता था, किन्तु कालेज के दिनों की वे बातें अब स्वप्न हो चुकी थीं।

नाटक लिखने का काम महीनों चलता रहा। जो नया दृश्य लिखा जाता, उसे किशोर बड़े चाव से पढ़ता, किन्तु अरिन्दम की आज्ञा तथा पुराने नियम के अनुसार पुस्तक खतम हो जाने के पहिले वह कोई समालोचना नहीं करता था। अरिन्दम चपला को पुस्तक

ज्यों-ज्यों लिखी जा रही थी स्वयं पढ़कर सुनाता जा रहा था, चपला उसका जी खोलकर प्रशंसा करती। सचमुच नाटक में अरिन्दम अपने कलेजे को निकालकर रख रहा था, उसका एक-एक वाक्य मर्मस्थल से निकला हुआ था, एक-एक दृश्य सुचिन्तित, युग का डमरू का जैसे एक सरगम था।

इस प्रकार नाटक का आधा से ज्यादा लिख गया।

—८—

नाटक अब उस जगह पर पहुँच गया था, जहाँ जाकर नायक-नायिका के पारस्परिक सम्बन्ध में एक भयानक उथल-पुथल तथा परिवर्तन होता था। अरिन्दम ने कई नये दृश्य लिखे थे, किन्तु उन्हें पढ़कर चपला को सुनाने में उसे हिचकिचाहट हो रही थी। बात यह है इन दृश्यों में नायक-नायिका में एक जगह चुम्बन का आदान-प्रदान वर्णित था, इसलिये इसे पढ़कर सुनाने में अरिन्दम कुछ झेंप रहा था। अरिन्दम ने कई दिन से जो नाटक का कोई दृश्य पढ़कर नहीं सुनाया, तो चपला ने टोक दिया—क्यों अरिन्दमजी क्या नाटक बीच ही में रह गया?

सिर नीचा करते हुए अरिन्दम ने कहा—नहीं तो, बराबर लिखना जारी है।

—फिर आप सुनाते क्यों नहीं?

—यों ही—अरिन्दम ने चोरी से चपला को देखकर आँखें दूसरी ओर फेर लीं।

—तो भी—चपला ने कहा।

—नहीं कुछ नहीं—अरिन्दम ने जैसे बात को दबाते हुए कहा।

चपला इस बात पर कुछ बोली नहीं, वह अपनी जगह से उठी, और जाकर नाटक की पांडु-लिपि उठा ली, और पास ही एक कुर्सी

पर बैठकर चिल्ला-चिल्लाकर पढ़ने लगी। अरिन्दम विमूढ़ की भाँति थोड़ी देर तक सुनता रहा, फिर एक काम का बहाना कर उठकर चला गया।

बड़ी देर बाद अरिन्दम जब लौटा तो चपला नाटक के नये दृश्यों को पढ़ चुकी थी, और यों ही पांडुलिपि को हाथ में लिये बैठी थी। कमरे में घुसकर ही अरिन्दम ने कनखी से चपला को देख लिया, और अपने मेज़ की वस्तुओं को सजाते हुए चपला से बिना आँख मिलाये हुए ही बोला—अभिनय करते समय इन दृश्यों में कुछ परिवर्तन किया जायगा।

—याने इस नाटक की हत्या की जायगी।—चपला ने तेज़ी के साथ कहा।

अरिन्दम की समझ में नहीं आया कि इसका अर्थ क्या है, उसने कहा—मतलब?

—मतलब यह कि अभिनय के नाम पर आप नाटक की हत्या ही कर डालना चाहते हैं?

अरिन्दम कुछ समझा, किन्तु सब नहीं, कहा—बात यह है हमें तुम्हें इसे अभिनय करना है न।

—तो क्या हुआ?

—हुआ कुछ भी नहीं, लेकिन...

—लेकिन वेकिन कुछ भी नहीं, मैं इसका ज्यों का त्यों अभिनय करना चाहती हूँ।—फिर कुछ ठहरकर इधर-उधर देख कर बोली—कोई नहीं है, तबियत चाहे तो अभी रिहर्सल लीजिये।—उसने अर्थ-सूचक प्यार भरी दृष्टि से अरिन्दम की ओर देखा।

अरिन्दम जैसे इस दृष्टि का बोझ न सँभाल सका, वह धम से अपनी कुर्सी पर बैठ गया, फिर भर्राई हुई आवाज़ से बोला—हाँ, चपला ठीक है। हमें जब नाटक का रिहर्सल मात्र करना है, तो हम

चाहे कुछ भी कर सकते हैं क्योंकि रिहर्सल आख़िर अभिनय ही है। उसके स्वर से व्यथा ध्वनित हो रही थी, जैसे भीतर से कोई तार टूट गया हो।

अरिन्दम के इस कारण दुखित होने से चपला को आश्चर्य हुआ।

उसने कहा—अरिन्दम जी, यह तो मेरे ऊपर है कि मैं कभी अपने को स्टेज पर प्रकाश्य रूप से उतरने लायक न समझूँ, और आपके साथ पर्दे के पीछे नाटक के इन ताजे दृश्यों को ज़िन्दगी भर रिहर्सल ही करती रहूँ। कौन कह सकता है रिहर्सल को मैं शायद इतना पवित्र समझूँ कि मरने के दिन तक दूसरों की लालसा तथा कौतूहल से भरी दृष्टि के सामने मैं इसको दुहराना अवाञ्छनीय समझूँ...

अरिन्दम विह्वल की भाँति चपला की ओर देखता रहा, बोला—चपला, तुम्हारी बातें मुझे परेशान कर देती हैं। तुम अभिनय करोगी कि नहीं बतलाओ?

—हाँ, हाँ, मैंने कब कहा नहीं। मैं तो बराबर अपनी बात पर डटी हूँ। चपला ने ज़ोर से कहा।

—लेकिन तुमने मेरे नाटक को पसन्द किया?—अरिन्दम उत्तर के लिये लालायित हो रहा था।

—हाँ, हाँ, हाँ, कितने दफ़ कहूँगी हाँ, लेकिन बतलाइये इतना सुहाग करने के बाद आप अंत तक नायिका के साथ क्या करते हैं। कहीं उसको अपघात मृत्यु से तो नहीं मरवा डाला है?—चपला ने गम्भीर परिहास में पूछा—तब तो मैं इसका अभिनय न करूँगी। इतना कहकर वह नाटकीय ढङ्ग से बोली—देखिये मैं कितनी जवान हूँ, महान् नाटककार, आप मेरी उम्र पर तरस खायें। आप मुझे अपघात मृत्यु से न मरवायें। मैं अभी जीकर सुख के हिंडोरे में कुछ दिन झूलना चाहती हूँ।...

अरिन्दम को भी बचपन सवार हो गया, बोला—अच्छा महान् अभिनेत्री, मैं तुम पर खुश हूँ। तुम अपघात मृत्यु से इस रंगमंच पर नहीं मरोगी, किंतु नायक के अतिरिक्त एक दूसरे व्यक्ति को प्यार करोगी। नायक इसी दुःख में समर-क्षेत्र में जाकर मर जायगा। मरते समय वह तुम्हारा नाम लेगा, किन्तु लोग समझेंगे वह स्वदेश की जय कह रहा है, और लोग हर सड़क पर उसकी मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करेंगे....

चपला चौंक गई। एकाएक वह जिस नाटकीय ढंग से बोल रही थी वह जाता रहा, वह डरकर अरिन्दम के पास आकर खड़ी हो गई, बोली—अरिन्दमजी, यह आपने क्या कहा? मुझे तो डर लग गया जैसे मालूम हुआ कि आप हमें शाप दे रहे हैं—फिर एकाएक खिलखिलाकर हँसती हुई बोली—ओह! आपने तो मुझे डरा दिया था। अरिन्दमजी, आप कितना सुन्दर अभिनय करते हैं!

—६—

अरिन्दम का नाटक अब क़रीब-क़रीब समाप्त हो चुका था। वह बराबर उसके नये दृश्य पढ़कर चपला को सुनाता था, किन्तु इधर कुछ दिनों से अरिन्दम यह ख्याल कर रहा था कि चपला न तो ध्यान-पूर्वक उसके नाटक को सुनती है, न उसकी पहिले की तरह उच्छ्वसित होकर प्रशंसा ही कर रही है। और अरिन्दम समझता था नाटक के इसी भाग में आकर उसने क़लम तोड़ दी, तथा इसी भाग में आकर उसकी कला का सबसे अधिक चमत्कार प्रदर्शित होकर रस का परि-पाक हुआ है। उसको आशा थी चपला इसकी खूब प्रशंसा करेगी। नाटक को पढ़कर सुनाते समय अरिन्दम ने कई बार यह अनुभव किया कि चपला बिलकुल किसी दूसरे लोक में है, वह जैसे कुछ बदल रही है। यह बात उसके दिमाग़ में आते ही वह परेशान हो गया, उसके हृदय

में एक मरोर सा पैदा हो गया। जिसको टीस से उसका सारा अस्तित्व जर्जर हो गया। नाटक के नये दृश्य जब पढ़े जाते हैं तो चपला वाक़ई उसे सुनती है कि नहीं देखने के लिये अरिन्दम ने नये लिखे हुए दृश्य को बीच-बीच में छोड़-छोड़कर पढ़ा, किन्तु तिस पर भी जैसी आशंका थी चपला को कुछ मालूम नहीं हुआ। इस बात से अरिन्दम को इतना दुःख हुआ कि उसने पढ़ना बन्द कर दिया, और पांडुलिपि की कापी को ज़ोर से बन्द कर बैठ गया। चपला ने कहा—क्यों इतनी जल्दी आज क्यों ख़तम कर दिया ?

—कुछ नहीं, लिखा ही थोड़ा था। उसने मुँह बनाकर कहा, और एक किताब को उलट-पुलट कर जैसे ध्यान से देखने लगा।

चपला अपनी चिंता में विभोर थी, किन्तु अरिन्दम अप्रसन्न हो गया है देखकर उसकी चिंता काफ़ूर हो गई, उसने कहा—अरिन्दमजी मालूम होता है आप नाराज़ हो गये...

अरिन्दमने कृत्रिम हँसी हँसते हुए कहा—नहीं तो, भला मैं तुम पर नाराज़ हो सकता हूँ! किन्तु उसके चेहरे से नाराज़ी नहीं तो परेशानी ज़रूर जाहिर हो रही थी।

चपला ने दुःख भरे शब्द में कहा—नहीं अरिन्दम जी, आप नाराज़ हैं, और आपकी नाराज़ी की वजह भी है। मैंने तीन चार दिन से आपके नाटक की एक बात भी नहीं सुनी—थोड़ी देर ठहर वह बोली—बात यह है मेरी तबियत कई दिन से ख़राब रहती है...

चपला की तबियत ख़राब है सुनते ही अरिन्दम एकदम चौंक पड़ा। उसकी नाराज़ी चपला की तबीयत के लिये परेशानी में परिणत हो गई। वह किताब छोड़कर उठकर बोला—यह बात पहिले क्यों नहीं कही, क्या बुख़ार है ?

—बुख़ार नहीं, यों ही कुछ सिर में दर्द रहता है, कोई विशेष बात नहीं है, दो एक दिन में अच्छा हो जायगा।

इतना कहने पर भी अरिन्दम बराबर जब तक वह बैठी रही उसके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में चिन्ता प्रगट करता रहा। चपला की बीमारी की चिन्ता से उसे परेशानी ज़रूर हुई, किन्तु यह उससे दूसरे तरह की थी जिससे वह कुछ देर पहिले पीड़ित हो रहा था। उसका मन एकदम हल्का पड़ गया। जिस सन्देह के बोझ से उसके सारे अस्तित्व का ही दम घुटता हुआ मालूम दे रहा था वह बात की बात में हट गया। यह सन्देह एक अस्पष्ट सन्देह था, यह इतना ताजा तथा नवीन था कि इसने किसी प्रकार के स्वरूप ग्रहण करने का अवसर ही नहीं पाया था।

जब चपला उठकर जाने के लिये खड़ी हुई तो अरिन्दम ने बड़े यत्न के साथ उसे समझाया—देखो, अच्छी तरह रहना, ऐसे समय में कहीं बीमार न हो जाना। नाटक क़रीब क़रीब लिखा जा चुका है। तुम को इसे अभिनय करना है। याद रखना यह मेरे सात महीने की मिहनत है।

चपला ने कहा—नहीं नहीं, आप कोई चिन्ता न करें, मैं अभी अच्छी हुई जाती हूँ।

जब दूसरे दिन चपला आई उस समय उसने बतलाया कि वह बिलकुल अच्छी है, किन्तु उसकी अन्यमनस्कता का ढङ्ग उसी प्रकार जारी रहा। वह न तो अपने साधारण स्वभाव के अनुसार हँस रही थी, न बोल रही थी। जो कमरा उसकी बातचीत से गूँजा करता था वह आज उसके होते हुए भी निस्तब्ध सुनसान मालूम हो रहा था। यह शान्ति नहीं शून्यता थी, जैसे वहाँ कोई है ही नहीं। अरिन्दम ने समझा यह चुप्पी बीमारी के कारण है। वह चिन्तित तो हुआ, किन्तु अधिक नहीं। चपला बैठी तो उतनी ही देर तक रही जितनी देर हमेशा रहती थी, किन्तु अन्त तक उसने नाटक कहाँ तक ख़तम हुआ यह बात नहीं पूछी। इस बात से अरिन्दम को दुःख हुआ, किन्तु इस

अस्वाभाविक व्यवहार का कारण बीमारी है कहकर मन ही मन उसने तसल्ली कर ली।

इसके बाद भी कई दिन तक जब चपला का यही हाल रहा तो अरिन्दम को बड़ा दुःख मालूम हुआ क्योंकि उसको इस बीच में इस बात का विश्वास हो चुका था कि चपला की सारी अन्यमनस्कता का कारण बीमारी से कहीं गहरा है; किन्तु यह कारण क्या था यह वह जानने में असमर्थ रहा। पहिले की तरह स्कूल के घंटों के अलावा चपला सभी समय अरिन्दम के बैठके में डटी रहती थी, इसलिये उसकी इस अजीब अन्यमनस्कता का कारण अरिन्दम की कुछ समझ में नहीं आता था। बात जितनी ही समझ में नहीं आती थी उतना ही वह चिन्तित होता जा रहा था। नाटक का लिखना जिस समय ख़तम हो रहा था, उस समय चपला का इस प्रकार फिर जाना अरिन्दम को खटका भी और खला भी।

नाटक का लिखना आख़िर खतम हो ही गया। अरिन्दम को इस बात से इतनी खुशी हुई कि उसने चट से बिना पूछे जाने पर भी यह बात चपला से कह दी—चपला हम लोगों का नाटक ख़तम हो गया।

चपला ने कहा—अच्छी बात है, अब अभिनय की तैयारी होनी चाहिये—किन्तु उसने इस पर भी इतनी भी खुशी ज़ाहिर नहीं कि जितना कि वह पहिले एक-एक दृश्य के ख़तम हो जाने पर किया करती थी।

अरिन्दम को यह बात असाधारण मालूम हुई, उसको बड़ा दुःख हुआ। उसे इस बात से आश्चर्य मालूम हुआ कि चपला ने नाटक का आख़िरी हिस्सा सुनना या देखना नहीं चाहा, न उसने अपने स्वभाव के अनुसार पूछा कि अन्त तक नायक नायिका का क्या हुआ अरिन्दम ने कहा—कोई जल्दी नहीं है। अभिनय की तैयारी की जायगी, अभी हम इसे शुद्ध तो कर लें।

ऐसा अरिन्दम ने इसलिये कहा कि उसे न मालूम कैसे यह महसूस हुआ कि चपला को इस नाटक के अभिनय में कोई विशेष दिलचस्पी अब नहीं रह गई। चपला ने कहा – शुद्ध तो खैर कीजिये ही...और वह एक हँसी हँसी। उस दिन जब चपला चली गई तो अरिन्दम अपने जीवन के विषय में सोचने लगा। अनेक सोचने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यदि वह तिब्बत तथा बर्मा की सरहद में ही कहीं मर जाता तो अच्छा रहता। चपला बदल रही थी यह स्पष्ट था।

—१०—

कई दिन इसी तरह बीत गया। अरिन्दम ने नाटक को न तो फिर से पढ़ा ही न उसमें शुद्धि ही की। अरिन्दम के अतिरिक्त किशोर रूप-कुमारी आदि कइयों ने नाटक को पढ़ा था; केवल पढ़ा नहीं था तो चपला ने, जिसके पढ़ने से अरिन्दम को सब से ज्यादा खुशी होती। चपला जैसे नाटक की बात भूल ही गई थी। नाटक ख़तम होने के बाद जब एक महीने के क़रीब हो गया, और न तो उसको प्रकाशित करने की न अभिनय करने की कोई तैयारी हुई तब एक दिन किशोर ने बात-बात में अरिन्दम से पूछ डाला—आप तो इस नाटक का स्वयं अभिनय करने वाले थे?

—हाँ—अरिन्दम ने और कुछ न कहा

—फिर क्या हुआ?

—कुछ भी नहीं, अब इच्छा कम होती जा रही है...दूर क्षितिज की ओर देखते हुए अरिन्दम ने कहा।

किशोर ने कहा—मेरी इच्छा है कि मैं भी आप के साथ अभिनय में भाग लूँ।

रूपकुमारी ने कहा—मैं भी।

राजनारायण ने कहा—मैं भी।

राम प्रसाद ने कहा—मैं भी।

उस समय कई व्यक्ति उपस्थित थे, सब ने यही कहा, किन्तु जिस व्यक्ति के मैं भी कहने से अभी अभिनय की तैयारी शुरू हो जाती, वह वहाँ नहीं थी। होती भी तो शायद वह ऐसा नहीं कहती, अरिन्दम को अब ऐसा ख़्याल होने लगा था। उसी की अनुप्रेरणा तथा अनुरोध पर यह नाटक लिखा गया था और आज जब नाटक तैयार था वह उसकी बात भूल चुकी थी। यह बात सोचकर अरिन्दम को इतना दुःख, क्षोभ, क्रोध हो आता था कि उसकी इच्छा होती थी कि नाटक को उठाकर भट्टी में डाल दे।

इतनी बातें बिजली की तरह अरिन्दम के दिमाग़ में चली गईं, उसने कृत्रिम हँसी के साथ कहा—तो हम लोग एक नाटक मंडली न खोल दें, यहाँ तो सभी अभिनेता-अभिनेत्री मालूम पड़ती हैं।

नाटक खेलने का प्रस्ताव पहिले-पहल अरिन्दम की ओर से आया था, यह अरिन्दम भूल गया था यह स्पष्ट था। खैर यह बात उस दिन वहीं तक रही, अभिनय की बात कुछ तय नहीं हुई। अरिन्दम ने अन्त में इस बात को यों ख़तम किया—जिस समय अभिनय की बात तय हो जायगी उस समय अभिनय में सभी की मदद की ज़रूरत होगी। मुझे डर है हम सभी के लिये इसमें गुञ्जाइश होगी।

अरिन्दम ने मन ही मन में तय कर लिया कि आज जब चपला आयेगी तो वह निश्चित रूप से तय कर लेगा कि नाटक के अभिनय के सम्बन्ध में चपला की राय क्या है। निर्दिष्ट समय पर चपला आई, किन्तु अरिन्दम को यह सूझ ही नहीं रहा था कि बात कैसे शुरू की जाय। बात यह है, वह डरता था कि कहीं चपला अब जो आती-जाती है वह भी इस बातचीत के फलस्वरूप जाता न रहे। इधर-उधर की मामूली बातचीत के अन्दर अरिन्दम मौक़ा ढूँढ़ता रहा, और ज्यों ही उसे मालूम दिया ठीक मौक़ा है उसने कहा—चपला मैं तुमसे एक serious बात करना चाहता हूँ।

—क्या ?—चपला जैसे नींद से चौंककर सम्भल कर बैठ गई।

अरिन्दम ने चपला की ओर न देखकर ही कहा—वह नाटक लिखना ख़तम हो गया, क्या तुम अभी तक अपने अभिनय करने के ख्याल पर डटी हो ?

—क्यों नहीं अरिन्दमजी, आप मुझे ग़लत समझ रहे हैं, मैं नाटक की बात भूल गई थी—चपला ने कहा।

अरिन्दम ने कहा—खैर, तुमने बहुत दिन बाद मुझे अरिन्दमजी तो कहा, लेकिन चपला, तुम पहिले तो इस तरह हमारे सम्बन्ध की कोई बात भूल नहीं जाया करती थी, तुम तो बराबर मुझसे ज्यादा मेरी बात याद रखती थीं। बहुत सी मेरी चीजें तथा कागज़ात मैं नहीं जानता हूँ कहाँ हैं, हैं या नहीं किन्तु तुम जानती थी।

चपला ने प्रतिवाद नहीं किया, वह कुर्सी पर और फैल कर बैठ गई, फिर वेदना से भरे लहजे से कहा—अरिन्दमजी, मैं एक महीने से बड़ी परेशान हूँ, आप मुझे मदद कीजिये......

—कैसी परेशानी, कैसी मदद ?—एक साथ अरिन्दम ने एक दर्जन प्रश्न कर डाले।

चपला ने कहा—आप यह बराबर मुझे और अपने अन्य साथियों को कहते रहे हैं कि पाप को घृणा करो, पापी को नहीं। मैं इसी के बारे में उधेड़बुन में पड़ गयी हूँ।

—कैसी उधेड़बुन ? स्पष्ट करके कहो, मैं तो अब भी कहता हूँ कि पाप को घृणा करो पापी को नहीं। जितनी देर में अरिन्दम ने ये बातें कहीं उतनी ही देर में उसके दिमाग़ में सैकड़ों बातें भयंकर वेग से घूम गईं। कौन सा यह पाप है, कौन यह पापी है, कौन उसे घृणा करेगा यह एक भी बात उसकी समझ में नहीं आई। एक के बाद एक सन्देह उसके दिमाग़ में प्रबल गति से घूम गया, कौन यह पापी है! चपला ? क्या पाप उसने किया ? उसका मुँह बिलकुल अँधेरा

पड़ गया। उसके अनजान में ही रामनारायण की वे बातें उसे याद आईं—चपला दो मनचलों द्वारा बिगाड़ी गई, फिर दो को उसने बिगाड़ा।

चपला ने कहा—मैं बहुत दिनों से इस सम्बन्ध में आपका परामर्श चाहती थी, किन्तु यह समझ में नहीं आता था कि कैसे कहूँ......

अरिन्दम ने कहा—यह भूमिका जाने दो। बतलाओ भी चपला, बात क्या है ? तुम विश्वास रक्खो मैं सहानुभूति के साथ उसपर विचार करके अपनी राय बताऊँगा।

चपला ने कहा—मैं अभी बताती हूँ कि बात क्या है, किन्तु इसके पहिले कि मैं बतलाऊँ आप बतलावें कि पापी को पाप से बचाना यह हमारा काम है कि नहीं ?

—हाँ, यदि हमारे वश में हो—अरिन्दम ने कहा, किन्तु उसको कुछ-कुछ क्रोध-सा आ रहा था कि चपला साफ-साफ बताती क्यों नहीं कि बात क्या है।

चपला ने कहा—एक प्रश्न और, कोई यदि आत्महत्या के क़रीब हो तो उस पर दया कर हमें उसका उद्धार करना चाहिये कि नहीं ?

अरिन्दम बोला—चपला तुम तो एक अजीब प्रश्न कर रही हो। इस प्रश्न का उत्तर इस बात पर निर्भर है कि एक आदमी आत्महत्या करने क्यों जा रहा है, फिर दूसरी बात यह कि किस प्रकार की दया की उम्मीद की जाती है। तुम सारी बात खोल कर क्यों नहीं बताती ?

चपला ने कहा—बताती हूँ—इसके बाद उसने पन्द्रह मिनट तक धीरे धीरे अरिन्दम को जो बताया उसका सारांश यह है—सुप्रकाश एक धनी का लड़का है। २१ साल की उम्र है, ग्रैजुअट है। उसका पिता एक पुराने ढर्रे के रईस हैं, किंतु अपने बेटे को शिक्षा देने में उन्होंने कोई कसर नहीं रक्खी। लड़के के हाथ में पैसे की कमी नहीं थी। १६ साल की उम्र या उससे पहले ही उसका चरित्र मुहल्ले की कई ज्यादा उम्र की स्त्रियों के द्वारा बिगाड़ा जा चुका था। फिर तो वह स्वयं

धुरन्धर हो गया। स्त्री-पुरुष सम्बन्धी कोई अपराध उससे न बचा। अब २१ साल की उम्र में ही स्त्रियों से यहाँ तक कि मनुष्यजाति से ही उसको घृणा हो गई है। इधर उसने एक के बाद एक दो अपने से अधिक उम्र की स्त्रियों से इस आशा से दोस्ती की कि वे दूसरी स्त्रियों से विभिन्न तरह की हैं, और उसके साथ भाई की तरह व्यवहार रक्खेंगी, किंतु उसके कथनुसार उन्होंने भी उसे धोखा दिया। अब वह किसी का भी एतबार नहीं करता, किसी बात में उसे दिलचस्पी नहीं, न मालूम वह कब आत्महत्या कर डाले। जीवन ही उसके लिये एक पीड़ादायक नासूर हो गया है।

ज्यों-ज्यों इन बातों को अरिन्दम सुनता गया त्यों त्यों-उसका चेहरा गंभीर होता गया। सब बातें सुनकर अरिन्दम ने कहा—तो तुम करना क्या चाहती हो?

चपला ने कहा—मैंने इस पर कुछ भी नहीं सोच पाया सिवा इसके कि कुछ करना ज़रूर चाहिये। आप ही बतावें कि क्या करना चाहिये।

अरिन्दम ने पूछा—चपला, तुम उसे कितने दिन से जानती हो?

—छै वर्ष से अरिन्दमजी।

—छै वर्ष से?

—हाँ छ वर्ष से। चपला ने कहा।

—किन्तु आज तुम्हें उसकी सुध हुई!

—यह आप ही की शिक्षा का फल है। अब मैं दूसरों तक भी अपनी शान्ति फैलाना चाहती हूँ।

अरिन्दम निरुत्तर तो हो गया, किंतु उसका मन न माना। उसने दाँतों के अन्दर से कहा—क्या पता?

चपला ने कहा—आप अब क्या कहते हैं, सुप्रकाश के बारे में मैं क्या करूँ!

—मेरी समझ में नहीं आता क्या कहूँ ।

चपला ने कहा—आप ही के यहाँ दो साल आते-आते मैं मानव-चरित्र को जहाँ तक समझ पाई हूँ उससे मैं समझती हूँ कि यदि सुप्रकाश में कोई दिलचस्पी पैदा कर दी जा सके तो वह बच जाय ।

अरिन्दम ने कहा—उसे किताबें पढ़ाओ, उसकी पुस्तक-चिकित्सा ही हो सकती है ।

—पुस्तकों में उसे कोई दिलचस्पी नहीं । मैंने आपका पामीर-तिब्बत भ्रमण भी दिया, किन्तु उसे कोई दिलचस्पी उसमें भी नहीं पैदा हुई ।

आख़िरी बात से ज़रा देर के लिये अरिन्दम की भौंहें तन गईं, उसने एक साँस लेते हुए कहा—callous है, ऐसे लोगों का सुधार मुश्किल है ।

चपला के चेहरे पर वेदना का मरोर झलक गया, उसने कहा—मुश्किल है ?

—हाँ

— लेकिन हमें चेष्टा तो करनी चाहिये ।

अरिन्दम ने कहा—हाँ, अवश्य, लेकिन—वह जो कुछ कहने जा रहा था वह न कह करके ही चुप हो गया, और चपला के मुँह की ओर घूरने लगा जैसे उसके हृदय के अन्तरतम भाग को पढ़ने की चेष्टा कर रहा हो । एक बात जो बहुत दिनों से उसको परेशान किए हुए थी, और जिसको वह समझने की चेष्टा कर रहा था वह जैसे एकाएक उसकी समझ में कुछ-कुछ आ रही थी । किन्तु इस समझने की सामर्थ्य से उसे कुछ खुशी तो हुई नहीं, उलटे उसको अशान्ति हुई, और अब न मालूम कैसे उसकी समझ में आ रहा था कि यह अशान्ति बराबर रहेगी ।

चपला अपने विचारों में इतना मग्न थी कि उसने अरिन्दम के

चेहरे की ओर बिलकुल ख्याल नहीं किया, उसने कहा—अरिन्दमजी, मैं समझती हूँ कि मैं उसे सुधार लूँगी, किंतु आप मदद करें तो।

—मैं मदद करूँ तो !—अरिन्दम ने आश्चर्य के साथ कहा।

—जी हाँ, आप मदद करें तो मैं उसे बिलकुल सुधार लूंगी।

अरिन्दम ने कुछ गम्भीरता से कहा—चपला, हम लोगों को गर्व नहीं करना चाहिये। सुधारने बिगाड़ने का क्या नियम है इसको अभी किसीने पूरे तरीके से नहीं जाना है। रही मेरी मदद की बात सो तुम जानती हो मैं तुम्हारी किसी बात में 'ना' नहीं कर सकता...। सुप्रकाश के मामले में तुम जो कहोगी सो मैं करने के लिये तैयार हूँ, किन्तु एक बात तो बतलाओ चपला, क्या तुम उसे प्यार करती हो?

चपला चौंक पड़ी। उसने अच्छी तरह आँख खोलकर देखा, फिर बोली—ओह ! यह बात थी जिसके कारण आप चिन्तित तथा परेशान मालूम पड़ रहे हैं। बिलकुल नहीं, मैं उसे बिलकुल नहीं प्यार करती, कहिये तो मैं उसे एकदम भूल जाऊँ, मैं तो केवल उसका सुधार किया चाहती हूँ....

अरिन्दम ने कहा—मैं तुम्हारी बात मान लेता हूँ चपला, लेकिन ऐसा होता है कि प्यार सुधार की इच्छा के रूप में प्रकट होता है। इस दुनिया में सुप्रकाश से पतित सैकड़ों व्यक्ति हैं, किन्तु उनके बारे में तुम्हें कोई चिन्ता नहीं है, उनको पाप के रास्ते से खींचकर सत्पथ में लाने की तुम्हें कोई फिक्र नहीं, तुमने उनके विषय में मेरा ध्यान कभी नहीं खींचा। हाँ, प्रतिवाद न करो चपला। दूर की जाने दो, रामनारायण को ही लो। क्या वह सुप्रकाश की तरह पतित नहीं है? क्या उसे सुधार की ज़रूरत नहीं है? किन्तु क्या तुमको उसके सुधार के बारे में कोई फिक्र है, क्या तुमने उसके बारे में कभी मुझसे कहा या मदद माँगी कि उसका सुधार किया जाय? तुम स्वयं ही कह चुकी हो कि जो कुछ भी थोड़े बहुत सार्वजनिक जीवन में तुम हो उसका श्रेय रामनारायण को ही है, किन्तु क्या बात है,

चपला, कि उसे तुम न सुधारकर सुप्रकाश को सुधारना चाहती हो ? —ज़रा ठहरकर अरिन्दम ने कहा—क्या तुमने इस पहेलू से इस प्रश्न को सोचा है चपला ?

—नहीं अरिन्दमजी ! चपला ने सरलता से कहा। उसने सचमुच यह बात इस तरीके से नहीं सोची थी, वह चिन्तित हो गई।

—फिर ?—अरिन्दम ने कहा

—फिर क्या ? जैसा आप कहेंगे वैसा मैं करूँगी। सुप्रकाश सुधरे या बिगड़े इससे कहीं ज्यादा आपके एक शब्द की मेरे निकट अधिक कद्र है।

अरिन्दम ने सुप्रकाश को कभी देखा नहीं था, उसके सम्बन्ध में आज उसने पहिले ही दफा सुना था। कोई वजह नहीं थी कि वह उसके विरुद्ध हो। अरिन्दम ने कहा—देखो चपला मुझे आज अनातोल फ्रांस की लिखी हुई एक पुस्तक थायस की याद आ रही है—इसके बाद उसने सुललित शब्दों में बतलाया कैसे एक इसाई तपस्वी पानुटियस को जो वर्षों से मरुभूमि में रह कर रोंगटे खड़े कर देने वाली तपस्या कर रहा था, दूर दूर तक जिसका उपवास, कृच्छ् तथा ईश्वर भक्ति की ख्याति रूपी चाँदनी छिटकी हुई थी, एकाएक अलेक्जन्द्रिया महा नगरी में रहने वाली परम सुन्दरी वेश्या की याद आई कि उसका सुधार करना चाहिए; कैसे वह तपस्वी बहुत दिनों तक इसी उधेड़बुन में पड़ा रहा, तपस्या करता रहा, ईश्वर से पूछता रहा कि इस काम में उसको हाथ डालना चाहिये या नहीं; कैसे अन्त तक उसके विवेक ने उसको अनुमति दी कि हाँ उसे ऐसे शुभ कार्य में हिचकिचाना नहीं चाहिये, कैसे वह इस पर अपना असा उठाकर चल दिया और अलेक्जन्द्रिया में थायस से मिला, कैसे अन्त में तपस्वी का पतन हो गया। इस किस्से को अरिन्दम ने बड़े ही मर्मस्पर्शी ढङ्ग से देर तक कहा, फिर चुप हो गया।

आखिरी दिसम्बर या जनवरी के दिन थे, किन्तु चपला के ललाट पर पसीने की बूदें थीं, उसने कहा—तो फिर आप क्या कहते हैं ? आप जानते हैं मेरे लिये आपकी बात आज्ञा की हैसियत रखती है। आप साफ कहिये आपकी आज्ञा क्या है ?

—कुछ भी नहीं।

—कुछ तो ?—चपला ने कहा।

—नहीं, कुछ नहीं।

चपला ने सोचकर कहा—कल मैं उसको आपके पास लेती आऊँ तब आप तय करें।

अरिन्दम ने कहा—चपला क्या यह ज़रूरी है कि तुम उसको यहाँ लेती आओ ?

—हाँ—फिर ज़रा रुखाई से बोली—क्या आप उसके आने को घृणा की दृष्टि से इसलिये देखते हैं कि वह पतित है या था ?

—नहीं चपला, मैं उससे घृणा नहीं करता। तुम उसे शौक़ से लेती आओ, मैं उसके लिये सब कुछ करने को तैयार हूँ। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ वह मेरा पक्का दोस्त हो जायगा।

उस दिन रोज़ की तरह चपला अधिक रात बीते गई, किन्तु आज वह अधिक चिन्तित थी। आज जैसे उसके जीवन में एक नये अध्याय की सूचना हो रही थी। इस अध्याय में क्या होने वाला था कौन जाने।

—११—

इसके दूसरे दिन चपला से जब सुप्रकाश की भेंट हुई तो उसने कहा—चलो आज अरिन्दम जी से तुम्हारी भेंट करायें।

अरिन्दम के विषय में पहले ही इन दोनों में बातचीत हो चुकी थी। सुप्रकाश ने यह नहीं समझा था कि इतना जल्दी उसका अरिन्दम

से साबका पड़नेवाला है। अरिन्दम मशहूर आदमी था, एक प्रतिष्ठित लेखक था, नमालूम वह उसका किस प्रकार स्वागत करे। स्वाभाविक तौर पर वह इस भेंट से कुछ सहमता था, साथ ही वह उस व्यक्ति को क़रीब से देखना चाहता था जिसका इतना नाम है, और जिसने इतना भ्रमण किया है, पुस्तकें लिखीं है और अपने चारों तरफ़ एक ठोस शिष्य-मंडली पैदा की है। सुप्रकाश जीवन में क़रीब क़रीब स्पृहाहीन हो चुका था, वह अच्छा होना नहीं चाहता था, बुरा होना नहीं चाहता था, जैसे उसकी सारी इच्छाशक्ति ही नष्ट हो चुकी हो। सुप्रकाश ने कई बार अपने को सुधारने की कोशिश की थी, किन्तु यह उसके जीवन की मर्मभेदी अभिज्ञता थी कि जिस रस्सी का सहारा लेकर उसने पतन के गड्ढे से उठने की चेष्टा की वही उसके लिये साँप साबित हुई, और डसकर उसे उसी गड्ढे में और भयंकर तरीके से गिरा दिया। इस दिशा में उसके मन में न तो कोई आशा थी न आकांक्षा। उसने पक्का निश्चय कर लिया था कि उसका उद्धार असम्भव था, अब तो उसको उसकी ज़रूरत भी नहीं महसूस होती थी। वह अरिन्दम से किसी उद्देश्य को लेकर नहीं बल्कि यों ही कौतूहल को निवृत्त करने के लिये मिलना चाहता था।

चपला ने कई बार जब अरिन्दम का उल्लेख किया तो उसे मालूम दिया चपला कहीं ग़लती पर है, ऐसा आदर्श आदमी कोई हो ही नहीं सकता। इसी बात को साबित करने के लिये, चपला के निकट उतना नहीं जितना अपने निकट और अपने यह कह सकने में समर्थ होने के लिये कि "देखा, मैं जानता था" वह अरिन्दम से मिलना चहता था; फिर भी जब आज चपला ने उसे एकाएक अरिन्दम के यहाँ चलने के लिये कहा तो वह कुछ सकपका गया। मन ही मन वह आज कुछ-कुछ पीछे हट रहा था। अन्त में उसमें "हरज ही क्या है" सोचकर चपला के साथ चलना स्वीकार किया।

सुप्रकाश को चपला से कोई ख़ास शिकायत नहीं थी, जहाँ तक

वह जानता था चपला में किसी प्रकार की कोई शिकायत की बात नहीं थी, किन्तु साथ ही वह उसको अपना आदर्श या पथ-प्रदर्शिका मान लेने में असमर्थ था। चपला के व्यवहार से भी उसे कुछ इतमीनान नहीं हुआ था, दो अन्तरंग मित्रताओं के ज़हरीले असर से वह अच्छी तरह उठ भी नहीं पाया था कि चपला उसके सन्मुख आई। उसको भी उसने अविश्वास की दृष्टि से देखा, तीन-तीन बार चपला ने उससे मित्रता करने की कोशिश की किन्तु हर बार उसने उसे मुँह की खाकर लौटने के लिये बाध्य किया। अब यह चौथा घेरा था, किन्तु सुप्रकाश को कोई डर नहीं था। वह उसके ज़रिये से एक दूसरे ही व्यक्ति से मिलने जा रहा था। कोई हर्ज नहीं था।

सौभाग्य से उस दिन अरिन्दम अकेला ही था। अरिन्दम के कमरे में पहुँचते ही अरिन्दम ने दोनों का तपाक से स्वागत किया। उसीने बात छेड़ी—चपला ने बताया है मैंने आपको देखा है लेकिन मुझे याद नहीं आती, ख़ैर मुझे आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई।

सुप्रकाश ने ये बातें सैकड़ों जगह सुनी थी, बनावटी भद्रता भी ऐसी ही होती है, उसके दिल पर इसका कोई असर नहीं पड़ा। उसने कृत्रिम रूप से हँसते हुए कहा—मैंने आपको कई बार देखा है, अब आपका अच्छी तरह दर्शन करने का मौक़ा हुआ। चपला ने आपकी एक पुस्तक भी मुझे पढ़ने को दी थी।

—जी हाँ, मैंने कुछ पुस्तकें भी लिखी हैं, आपको मेरी पुस्तक पसन्द आई?

सुप्रकाश हिचकिचाया, फिर बोला—मुझे आपकी पुस्तक में कोई ख़ास बात तो नहीं मालूम पड़ी, कम से कम जहाँ तक मैंने पढ़ा था वहाँ तक तो यही बात थी।

—तो आपने मेरी पुस्तक पूरी भी नहीं पढ़ी?—आश्चर्य के साथ अरिन्दम ने पूछा, उसके स्वर में तिरस्कार का नामोनिशान नहीं था। उसने चपला की ओर उसी प्रकार से देखा, जैसे भयंकर रोगी

को देखने के बाद डाक्टर उसके रिश्तेदारों की ओर देखता है। चपला गम्भीर हो गई।

अरिन्दम ने कहा—आपको किसी बात में ख़ास दिलचस्पी है, कोई hobby ?

—नहीं अरिन्दमजी, मुझे तो जीने में भी कोई दिलचस्पी नहीं मालूम होती है...

अरिन्दम तनकर बैठ गया, उसने कहा—देखिये सुप्रकाशजी आपने जो बातें कही हैं उन्हें सुनकर मुझे बड़ा दुःख हो रहा है। आपकी यह नई उम्र, और ऐसी बातें! मान भी लिया जाय कि आपके तजर्बे कड़वे रहे, but all is not lost, अभी आपके पास यौवन रूपी अमूल्य धन है, इससे आप क्या नहीं कर सकते? It is never too late to mend. आपने अब तक एक छोटे "मैं" के लिये जिया है, आप अब इस "मैं" को बड़ा कीजिये, अपनी दिलचस्पियों को तथा दायरे को बढ़ाइये, देखियेगा जीने का आनन्द बढ़ गया है। जिसका स्व जितना बड़ा है, वह उतना ही सुखी है, कम से कम उसके सुख की सम्भावना उतनी अधिक है। मनुष्य केवल रोटी से ही नहीं जीता, रोटी का स्व तो बहुत ही छोटा है, किन्तु उसको आहार, निद्रा, भय आदि से बड़ी चीजों की ज़रूरत है। अगर आपको ज़रूरत नहीं है तो पैदा कीजिये—इसी तरह और कितनी ही बातें अरिन्दम कह गया।

सुप्रकाश इन बातों को सुनता रहा, और उसे ऐसा अनुभव हो रहा था कि इस प्रकार इन बातों को उससे किसी ने नहीं कहा है। न इतनी आन्तरिकता से कहा है। शायद विभूति इसीको कहते हैं, शायद बड़प्पन यही है। बात करते-करते दोनों चपला की उपस्थिति भूल गये। अरिन्दम ने धीरे-धीरे अपने तजर्बे के विषय में भी बहुत कुछ कहा, पामीर के विषय में कहा, तिब्बत के विषय में कहा,

किन्तु सबसे जो बात अधिक दिलचस्प सुप्रकाश को लगी वह थी अरिन्दम का अंतरंग इतिहास। आदमी कैसे उठता है, गिरता है, कोई भी दूध का धुला नहीं है, "अगर मैं बचा हुआ हूँ तो इसका कारण यह नहीं कि मुझमें कुछ स्वाभाविक श्रेष्ठता तथा भलाई थी बल्कि जब-जब मैं गिरने को हुआ, अररर धम करके रसातल में लुढ़कने ही वाला था कि कोई ऐसी बात हुई कि प्रलोभन ही मुझसे चला गया या मैं प्रलोभन से किसी आकस्मिक कारणवश हट गया। यही मेरी भलाई का इतिहास अर्थात् उसकी पोल है।"

इस प्रकार घंटे भर के अंदर ही अरिन्दम सुप्रकाश के निकट स्पष्ट हो गया। कोई आदमी घंटों क्या वर्षों में उसके निकट इतना स्पष्ट नहीं हो सका था। उसे इस आदमी की यह स्पष्टता बहुत पसन्द आई, यह एक ऐसी चीज़ थी जो उसको आकर्षित कर रही थी। शुरू-शुरू में जब इस व्यक्ति से बातचीत हुई थी, तो वह चपला पर इस बात के लिये मन ही मन नाराज़ हो रहा था कि उसने क्यों अरिन्दम को उसके जीवन का सारा रहस्य बतला रक्खा है, किंतु ज्यों-ज्यों अरिन्दम से उसकी घनिष्ठ बातचीत होती गई त्यों-त्यों उसका यह दुःख घटता गया, बल्कि अंत तक तो उसे ऐसा प्रतीत होने लगा कि अच्छा ही हुआ कि अरिन्दम को सब मालूम है, क्योंकि यदि उसे उसके घाव न मालूम होते, तो वह उन पर मरहम-पट्टी कैसे करता।

बड़ी देर बाद जब सुप्रकाश अरिन्दम के घर से लौटा तो उसके हाथ में अरिन्दम की लिखी हुई एक पुस्तक थी, साथ ही साथ उसके मनमें अरिन्दम के घर में फिर आने की इच्छा थी। अरिन्दम उसके सन्मुख स्पष्ट था, किन्तु यही स्पष्टता ही शायद उसका रहस्य था, यह रहस्य सुप्रकाश को अपनी ओर खींच रहा था। इस व्यक्ति के प्रति थोड़ी अश्रद्धा और एक अव्यक्त परिभाषाहीन अविश्वास लेकर ही वह आया था, किंतु अब वह श्रद्धा नहीं तो अरिन्दम के सम्बन्ध में और जानने की इच्छा लेकर लौट रहा था। वह इस विषय में

निश्चिन्त था कि आज का यह परिचय रङ्ग लायेगा। चपला से उसने सुना था कि वह अरिन्दम के साहित्यिक कामों में मदद दिया करती है, उसने सोचा यदि वह भी मदद दे तो बुराई क्या है। बैठा तो रहता ही है। सुप्रकाश को इतना तो हर तरीके से स्पष्ट हो गया कि आज जिस आदमी से वह मिला था वह उसके पहिले मिलने-वालों से बिलकुल दूसरी श्रेणी का था।

—१२—

दूसरे दिन चपला बिलकुल सवेरे ही आई। अरिन्दम उस समय डाढ़ी बनाकर निवृत्त ही हुआ था। चपला ने हँसकर पूछा—कहिये आपने कैसा पाया?

अरिन्दम को यह प्रश्न कुछ विशेष पसन्द नहीं आया, वह नहीं चाहता था कि चपला आते ही सुप्रकाश की बात छेड़े। उसको इस बात का निश्चय था कि केवल बात छिड़कर ही नहीं रहेगी, जब तक चपला के स्कूल का समय न होगा यही चर्चा रहेगी। उसने कहा—कोई नई बात नहीं पाई—और मुँह दूसरे तरफ़ करके ब्लेड वगैरह समेटने लगा।

चपला की दिलचस्पी और बढ़ गई, उसने अपनी कुर्सी अरिन्दम के पास खींच ली, बोली—याने?

—याने कुछ भी नहीं—ब्लेड वगैरह बन्दकर उठते हुए अरिन्दम ने कहा—मैंने सुप्रकाश को जब नहीं देखा था उस समय मैंने उसके बारे में जो कुछ कहा था वही अब भी कहता हूँ।

चपला को कुछ कहने का मौक़ा न देकर अरिन्दम—बैठो मैं अभी आता हूँ—कहकर नहाने घर के अन्दर चला गया। इस प्रकार चले जाना कोई नई बात नहीं थी, अक्सर इसी तरह वह करता था, कुछ

भी हो अरिन्दम समय और नियम का बड़ा पाबंद था, किंतु आज उसके चले जाने का चपला ने और ही अर्थ लिया। वह गम्भीर हो गई। सामने मेज़ पर कई नई मासिक पत्रिकायें पड़ी हुई थीं, किंतु उन्हें उठाकर पढ़ने की इच्छा चपला को नहीं हुई। वह बैठी-बैठी दूर क्षितिज की ओर देखती रही।

इतने में जूता चर्रमर्र करता हुए किशोर आया, उसने चपला को अकेला देखकर कहा—आप अकेली कैसे ? नमस्ते, अरिन्दमजी कहाँ गये ?

—नमस्ते, नहाने गये हैं, अभी आते होंगे—चपला ने कहा, इस समय किशोर का आना उसे बहुत अखरा क्योंकि वह सुप्रकाश के बारे में अरिन्दम से बातचीत करना चाहती थी।

किशोर ने उठाकर नई पत्रिकाओं के पन्ने उलटे, एक में अरिन्दम के किसी नाटक की समालोचना थी, उसको उसने पढ़ा। उसने पूछा—आप ने अरिन्दम जी के नये नाटक को पढ़ा ?

—हाँ—चपला ने कहा, किन्तु चपला को स्वयं अनुभव हो गया कि वह जो कुछ कह रही है वह सत्य नहीं है, किन्तु उसने यह झूठ किसी खराब नियत से नहीं, बल्कि सच बोलने पर जो बीसों अप्रिय प्रश्न होते उनसे बचने के लिये कहा।

किशोर ने कहा—आपको कैसा लगा ?

—बहुत ही सुन्दर—चपला ने संक्षेप में कहा।

किशोर ने ऐसे स्वर में कहा मानों प्रतिवाद कर रहा हो—बहुत ही सुन्दर ? नहीं, इन शब्दों में मेरे वे भाव व्यक्त नहीं होते जो इस नाटक को पढ़कर उत्पन्न होते हैं। इसका चरित्रचित्रण, भाषा, दृश्य इतने सुन्दर हैं कि अनुभव करते ही बनता है। गूँगे के गुड़ की तरह कोई उसकी परिभाषा नहीं कर सकता। साथ ही साथ इस नाटक में भारत की गुलामी की ज्वाला प्रत्येक पंक्ति में है। यह बात सच है कि नाटक का नायक विद्रोही रणधीरसिंह गान्धार की स्वाधीनता के

लिये शहीद माने जाने पर भी उसकी मृत्यु के लिये मेनका का प्रत्याख्यान बहुत कुछ जिम्मेदार है, किन्तु फिर भी उसके साथियों की देशभक्ति, त्याग तथा सच्चाई के बारे में किसी को सन्देह नहीं हो सकता। मानसिंह किस प्रकार आरी से चीरा जाता है, फिर भी वह विदेशी की सेना में भर्ती होकर स्वदेश को पराधीन रखने में सहायक होने से इनकार करता है। इन महान वीरों के साथ-साथ कितनी वीरांगनायें इस नाटक में हैं, मैं तो मुग्ध हो गया हूँ।—थोड़ा रुककर किशोर ने कहा—हम लोग इसको अभिनय करनेवाले थे।

चपला सहम गई, उसका चेहरा फक पड़ गया, उसने गहरी दृष्टि से किशोर के चेहरे को देखा, क्या वह जानता है कि अभिनय के प्रस्ताव को रखनेवाली वही थी, और वह स्वयं भी अभिनय करनेवाली थी। उसने सावधानी से कहा—फिर ?

फिर क्या ? स्वयं अरिन्दम जी रणधीरसिंह का पार्ट करनेवाले थे, किन्तु अब उनका उस सम्बन्ध में कोई उत्साह मालूम नहीं होता...

चपला ने फिर एक बार अपने को दोषी समझा, किन्तु वह कुछ बोली नहीं। किशोर कहता गया—हम इसको फिर भी अभिनय करेंगे। अरिन्दम जी से छिपाकर हम इसके लिये बन्दोबस्त कर रहे हैं...

पीछे से अरिन्दम ने आते हुए कहा—क्या मुझसे छिपाकर करने जा रहे हो किशोर ?

किशोर सकपका गया, एक बारह बर्ष की लड़की की तरह उसके चेहरे का रङ्ग कई बार बदला। उसने केवल इतना ही कहा, नमस्ते।

कंघी करते हुए अरिन्दम ने कहा—आजकल बहुत-सी बातें मेरे पीछे मुझसे छिपाकर की जा रही हैं, आगे मालूम होता है और भी होती जायेंगी, किन्तु किशोर क्या तुम भी उन लोगों में शामिल हो ?—अरिन्दम के स्वर में दुःख स्पष्ट झलक गया।

चपला समझ गई इन बातों से किस पर कटाक्ष किया गया है, वह साड़ी को सँभाल कर जरा घूमकर बैठी। किशोर ने समझा अब बात को गुप्त रखना ठीक नहीं, उसने कहा—यही आपके अप्रकाशित नाटक के अभिनय की बात हो रही थी...

अरिन्दम की दिलचस्पी एकदम बढ़ गई। उसने पास आकर बैठते हुए कहा—चपला क्या कह रही थी, क्या वह अभिनय करने को कह रही है?—इस प्रश्न को अरिन्दम ने ऐसे किया मानो इसी के उत्तर पर उसका जीना-मरना निर्भर था।

किशोर के उत्तर देने के पहिले ही चपला ने कहा—मैंने कुछ भी नहीं कहा, मैं अभिनय में भाग नहीं लूँगी...

किशोर ने चपला से कहा—हमने जो बन्दोबस्त किया है उसमें आपका नाम नहीं था किन्तु यदि आप इसमें शामिल होना स्वीकार करें तो हमें बड़ी खुशी होगी। क्या आपने अन्तिम रूप से तय कर लिया कि आप इसमें भाग न लेंगी?

—हाँ—चपला ने जैसे ज़िद में कहा।

किशोर ने कहा—लेकिन अभिनय तो होगा ही—उसने घूमकर अरिन्दम से कहा—और आप! क्या आप भी अभिनय में भाग नहीं लेंगे?

अरिन्दम ने एक मिनट जैसे सोचा, फिर कहा—नहीं—यह नहीं चपला के नहीं से कहीं ज्यादा दृढ़ था।

किशोर को आश्चर्य न हुआ, उसने कहा—तो आप और हर तरीके से हमें मदद तो देंगे न!

—हाँ अवश्य, इसमें भी कोई पूछने की बात है?

चपला को कुछ ऐसा ख्याल हुआ कि उसीके अभिनय में भाग न लेने की वजह से अरिन्दम ने अभिनय में शामिल होने से इनकार किया, यह ख्याल सही भी था, इससे वह दुखी हुई। उसने कहा—

अरिन्दम जी आप अभिनय क्यों नहीं करते ? आपके अभिनय से हम लोगों को इतनी खुशी होगी !

अरिन्दम ने कहा—नहीं—अरिन्दम की आँखें भरी थीं।

चपला ने और भी जिद के साथ कहा—मुझे विश्वास है कि आप एक अच्छे अभिनेता साबित होंगे।

—अभिनेता ही न ? मुझे यह यश न चाहिये।—कहकर अरिन्दम ने मुँह फेर लिया, और कंघी को जोर से साफ करने लगा।

चपला ने कुछ सोचा, फिर बोली—अच्छा अरिन्दमजी मैं भी अभिनय में भाग लूँगी, आप भी लीजिये...

अरिन्दम ने पहिले तो ना-ना किया, आँखें बड़ी-बड़ी करके चपला की ओर देखता रहा फिर राजी हो गया। किशोर ने यह तय किया कि रोज सन्ध्या समय रिहर्सल हुआ करेगा, और यह रिहर्सल स्थानीय संगीत समिति के हाल में होगा। बड़ी तत्परता से इसकी तैयारियाँ होने लगीं। चपला की इच्छा हुई कि सुप्रकाश को भी इस अभिनय में शामिल कर लिया जाय, लेकिन वह ऐसा कहते-कहते रह गई। न मालूम इस प्रस्ताव को रखते हुए उसे क्यों झिझक मालूम हो रही थी।

—१३—

कई कारणों से रिहर्सल जल्दी शुरू नहीं किया जा सका। इस बीच में सुप्रकाश अरिन्दम के यहाँ बहुत आने-जाने लगा, और अरिन्दम के नियमित मिलनेवालों में हो गया। चपला अक्सर सुप्रकाश के साथ आती थी, जाती तो वह हमेशा उसके साथ थी ही। अरिन्दम चपला को प्यार करता था, अब इस बात को उसने बड़े संघर्षों के बाद अपने सामने स्वीकार कर लिया था, फिर भी उसने इस विषय पर कभी नहीं सोचा था कि इस प्रेम का उपसंहार किस

बात में होगा। पानी जिस तरह ढाल पर बहता है, अपने अन्तिम लक्ष्यस्थल को नहीं जानता है, न जानने की चेष्टा करता है, उसी तरह अरिन्दम के प्यार का हाल था। चपला का साहचर्य उसे प्यारा था, इतना वह जानता था, बस इससे अधिक वह नहीं जानता था। इसके अतिरिक्त इसमें दोष ही क्या था?

चपला और अरिन्दम की जब अकेले भेंट भी होती थी तो वह सुप्रकाश कितना सुधरा; किस प्रकार वह धीरे-धीरे अपने पुराने साथियों से अलग होता जा रहा है, किस प्रकार उसे अब पुस्तकों में दिलचस्पी आने लगी है इत्यादि वर्णन में बिता देती थी। अरिन्दम काम करते-करते याने लिखते-लिखते उसकी बातें ध्यानपूर्वक सुनता था, और उसका चेहरा गंभीर होता जाता था। कनखी से वह चपला को देखता भी जाता था, चपला के विषय में वह निश्चित होता जाता था कि अब वह उससे हटती जा रही है, किन्तु जितना ही वह इस बात को अनुभव करता था उतना ही समझ रहा था कि वह भले ही हट जाय। किन्तु वह उससे हट नहीं सकता। वह खूब समझता था कि यह उसकी कमज़ोरी है, किन्तु इससे अपना छुटकारा नहीं कर सकता था। अरिन्दम अपने जीवन की इस ट्रेजेडी को अच्छी तरह समझता था किन्तु उसका कोई वश नहीं था। आजकल वह किशोर से अक्सर ऐसी बातें कहता था—किशोर मैं भाग्य तो नहीं मानता, किन्तु मानता हूँ बहुत-सी बातें ऐसी हैं जिन पर हमारा वश नहीं चलता, जिन पर हम नियंत्रण नहीं कर सकते, किन्तु जो हमारी भलाई-बुराई पर नियत्रण रखती हैं, हमारे भविष्य को बनाती हैं।

किशोर प्रतिवाद करता, कहता—कैसा?—किन्तु अरिन्दम कहता—ऐसे कि मान लो हम बैठे हैं और ऊपर से छत गिर पड़ी, और मैं मर गया, तुमको आँच भी नहीं लगी। ऐसी हालत में क्या तुम

कहोगे कि यह मेरी ग़लती थी, जो कुछ हुआ सो ठीक ही हुआ, मैं इसे deserve करता था ? तुमने भी इस कमरे में आने के पहिले इस छत की पुख़्तगी की परीक्षा नहीं की थी न ? अगर ग़लती थी तो दोनों की थी, किन्तु मैं ही क्यों मरूँ ? क्या तुम इसका कोई कारण दे सकते हो ? किन्तु ऐसी बातें जीवन में रोज़ होती हैं।

किशोर बग़लें झाँकने लगता, या क्षीण स्वर में कुछ कहने की चेष्टा करता, अरिन्दम सरपट कहता जाता—दुनिया में सैकड़ों नेपोलियन पैदा हुए होंगे, किन्तु एक को ही मौक़ा मिला। नेपोलियन तो आख़िरी दिनों में सेन्ट हेलेना के वीरान में रहा, किन्तु पागलखानों को खोज देखो वहाँ सैकड़ों नेपोलियन लड़कपन से ही सड़ रहे होंगे। इस पर तुम क्या कहते हो किशोर ?

किशोर कुछ भी न कहता, वह जानता था ऐसे समय में वाधा देना बेकार है। अरिन्दम कहता ही जाता—हमारा विज्ञान इस नतीजे पर पहुँचा है कि दो विशेष तरह की स्त्री तथा पुरुष में शादी होने से ही सन्तान अच्छी होगी, किन्तु मान लो विज्ञान ने चुना कि श्रीमान् क से कुमारी ख की शादी होनी चाहिये, किन्तु कुमारी ख श्रीमान् ग को चाहती है जो सुप्रजनन विज्ञान की दृष्टि से उसके लिये अच्छा पति नहीं है, तब तुम क्या करोगे ? क्या तुम विज्ञान के बताये हुए रास्ते पर चलोगे या प्रेम के, झट से उत्तर न देना। हम अब ऐसी जगह पर रुके हैं जहाँ बुद्धि और हृदय में विरोध स्पष्ट मालूम दे रहा है, प्रश्नों का प्रश्न अब यह है हम हृदय की सुनें या बुद्धि की ? तुम कहोगे इन दोनों का समन्वय होना चाहिये, किन्तु सम्भव हो, तभी तो। चारों तरफ़ यही हाल है। परम विश्रृंखला में श्रृंखला स्थापन की व्यर्थ चेष्टा हमारे कलाकार, वैज्ञानिक, दार्शनिक करते रहते हैं, किन्तु यह हो कब पाती है ? फिर सब चीज़ों का अन्तिम परिणाम तो मालूम है, विनाश, परम विनाश, निर्वाण, महानिर्वाण।

सूर्य क्रमशः ठंडा होता जा रहा है, करोड़ों वर्ष में ही सही सब टंडा हो जायगा; कला, विज्ञान, सभी कुछ। हमें तो अक्सर जीने का कोई अर्थ ही समझ में नहीं आता........—अरिन्दम के चेहरे पर उदासी छा गई। उसने निराश होकर सिर का पिछला हिस्सा कुर्सी पर टेक दिया।

किशोर ने कहा—आपने ही तो कहा है प्रेम से ही जीवन को समझना चाहिये।

और भी गम्भीर होकर अरिन्दम कहता—कहा होगा, सम्भव है, लेकिन प्रेम में भी तो कोई स्थिरता नहीं है, इसका भी तो कोई नियम नहीं है।

किशोर इस पर चुप रहता या कोई और बात छेड़ देता। किशोर जानता था कि अरिन्दम इस मानसिक अवस्था पर शीघ्र ही विजय प्राप्त कर लेगा, किन्तु जब तक यह अवस्था है वह अरिन्दम के पास रहने की चेष्टा करता था, हाँ जब चपला और सुप्रकाश आ जाते थे तब वह धीरे से खिसक जाता था।

चपला अब भी उतने ही घंटे अरिन्दम के घर पद मौजूद रहती थी, किन्तु उसका ध्यानकेन्द्र सुप्रकाश है अरिन्दम नहीं यह बात अरिन्दम जल्दी ही समझ गया, थोड़े दिन में सुप्रकाश भी समझ गया। सुप्रकाश को दुनिया में शायद ही किसी बात में कभी दिलचस्पी रही हो, किन्तु जब उसे मालूम हुआ कि अरिन्दम ऐसा एक व्यक्ति जिसे वह हर तरीके से अपने से श्रेष्ठ समझता था, उसके प्रतिद्वन्दी के रूप में आ पड़ा है चाहे वह प्रतिद्वन्दिता कितनी ही दबी हुई हो, तो उसे मज़ा आने लगा। जीवन की जो आग उसके अन्दर बिल्कुल राख के अन्दर पड़कर धीमी पड़ रही थी, उसकी राख जैसे किसी ने हटा दी, और वह सुलगने लगी। चपला से उसका कोई प्रेम नहीं था, न हो सकता था। यौवन जिन बातों के तथा सब्ज़ बागों के आकर्षण

के कारण प्रेम की ओर धावित होता है, वे आकर्षण सुप्रकाश के सन्मुख अर्थहीन थे। चपला को वह कई साल से जानता था, किन्तु कभी भी उसे यह इच्छा नहीं हुई कि वह उसे और घनिष्ठ रूप से जाने। चपला ने कई बार उसके पास जाने की कोशिश की थी, किन्तु उसने उसे बिना तकल्लुफ के ही हटा दिया था। उन अवसरों पर चपला निराश हो जाती किन्तु........। अरिन्दम के अनजान में ही वह उसका पीछा करती रही, किन्तु असफल रही, फिर जिस प्रकार वह उसे अरिन्दम के पास ले आई थी वह पहिले ही बताया जा चुका है। चपला ने यह सब षडयंत्र करके किया था यह बात नहीं, वह सचमुच नहीं समझती थी कि सुधार के अलावा उसका सुप्रकाश में कोई और उद्देश्य है।

आख़िर रिहर्सल की तैयारी पूरी हो गई, रिहर्सल का पहिला दिन आया। अरिन्दम के पहिले ही किशोर वग़ैरह पहुँच चुके थे, किन्तु चपला का कहीं पता नहीं था। अरिन्दम ने आते ही यह बात ताड़ ली, और गंभीर हो गया। कुछ और भी लोग आने को बाक़ी थे। एक-एक करके लोग आने लगे। राजनारायण ने आते ही किशोर से कहा—क्यों किशोर अभी तक रिहर्सल शुरू क्यों नहीं हुआ, मैं तो इसीलिये देर में आया कि मेरा तो आज कुछ पार्ट नहीं है।

किशोर ने अप्रसन्नता से कहा—चपला जी भी तो नहीं आईं।

—न आई, न आयेंगी—राजनारायण ने कहा।

चपला का नाम सुनकर अरिन्दम का ध्यान राजनारायण की ओर गया।

किशोर ने राजनारायण से पूछा—आयेंगी क्यों नहीं ?

—इसलिये कि वह आज सुप्रकाश के साथ निशात में एक खेल देखने गई हैं..........

—खेल देखने गई हैं ?—किशोर ने आश्चर्य के साथ पूछा।

—हाँ, और मैंने जब उन्हें याद दिलाया कि आज से हम लोगों का रिहर्सल शुरू है तो उन्होंने कहा, "मालूम है, लेकिन आज कुछ शुरू थोड़े ही होगा" और कहा कल से आयेंगी।

सब लोग एक दूसरे का मुँह ताकने लगे, इस बात से अरिन्दम को क़रीब-क़रीब गुस्सा आ गया। आख़िर इस तरह सब को बनाने से क्या फ़ायदा था, किन्तु आये हुए गुस्से को पीकर बोला—फिर किशोर क्या किया जाय?

पहिले ही दृश्य में नायिका की ज़रूरत थी, किशोर ने हिचकिचाते हुए कहा—लेकिन अरिन्दम जी पहिले ही दृश्य में नायिका की ज़रूरत है।

—तो फिर कल तक के लिये स्थगित रक्खा जाय? और क्या हो सकता है?

रूपकुमारी पास ही खड़ी थी, उसने कहा—मैं ही नायिका का पार्ट लूँ, कल जब वह आयेंगी तो देखा जायगा...

अरिन्दम को यह प्रस्ताव पसंद नहीं आया, वह डरा कि कहीं सब लोग इसे मंजूर न कर लें, इसलिये बीच में बात काटकर कहा—रूपकुमारी जल्दी क्या है, कल तक ठहर ही जाया जाय।

सबने यह बात मान ली, किन्तु दूसरे दिन फिर चपला समय पर नहीं आई, और जब बड़ी देर बाद वह आई भी तो बोली कि सिर में दर्द है। अरिन्दम का मुँह छोटा पड़ गया मानो वही दोषी हो। वह एक कोने में जैसे बैठकर एक किताब के पन्ने उलटता रहा। वैसे ही उलटता रहा, हिलने-डुलने तक की उसे हिम्मत नहीं हुई। यदि चोरी से इस समय रिहर्सल के कमरे से निकल जाना संभव होता तो वह निकल जाता।

किशोर ने अरिन्दम के पास आते हुए कहा—अरिन्दम जी, चपला जी तो अभिनय में भाग लेने से इनकार कर रही हैं, वे कहती हैं इस समय उनके सिर में दर्द रहता है....।

अरिन्दम को क्रोध तो इतना आया जितना कभी नहीं आया था। इसी चपला के साथ अभिनय करने की साध मिटाने के लिये यह नाटक अरिन्दम ने अपना सारा हृदय ढालकर लिखा था, एक-एक दृश्य इसी बात को मन में रखकर लिखा गया था कि वह इसको चपला के साथ अभिनय करेगा। अरिन्दम जानता था कि बहुत संभव है कि उसका अभिनय बिलकुल तीसरे दर्जे का हो, और इस प्रकार नाटककार तथा लेखक-समालोचक के रूप में उसने जो ख्याति प्राप्त की है उसमें बट्टा लग जाय, किन्तु फिर भी चपला के साथ अभिनय करने का आनन्द उसके लिये इतना महान् था कि उसने इसके सामने किसी बात को भी देखने से इनकार किया था। और आज वही चपला इस नाटक के अभिनय में हिस्सा लेने से इनकार कर रही है। और फिर किस कारण से ? सिर का दर्द ? आज है, कल चला जाता। शायद आज भी न हो ! सही या ग़लत तरीक़े से उसने इसके पीछे और महत्तर कारण देखा। यह कारण एक आदमी था, सुप्रकाश। उसको इस आदमी पर बहुत क्रोध आया। उसकी इतनी स्पर्धा ? लेकिन, जब उसने सोचा कि चपला उसी व्यक्ति की ही बात पर चल रही है तो उसके आँखों तले अँधेरा छा गया। उसने असहाय की तरह किशोर से कहा—किशोर; तुम ही इसमें कोई तरकीब निकालो...

चपला बोली—मेरा पार्ट रूपकुमारी को दिया जाय....

किशोर के एक मित्र सम्पत ने आगे बढ़ते हुए कहा—चपला जी आप अभिनय नहीं करेंगी बस, आपका पार्ट किसे दिया जाय या न दिया जाय यह हम लोग सोचेंगे।

सम्पत की बातों में काट थी, किन्तु सब लोगों ने समझा कि यह काट उचित है। चपला का चेहरा इतना-सा हो गया, अरिन्दम ने जो यह बात देखी तो उसको दया आ गई, शायद सम्पत की बात उसे

असहनशीलता भी मालूम दी, किन्तु उसने केवल कहा—छिः सम्पत तुम बड़ी जल्दी हक़ वग़ैरह देखने लग जाते हो, मिस चपला बीमारी के कारण इस रिहर्सल से अलग रहना चाहती है इसमें कौन-सी ऐसी अनहोनी बात हो गई कि तुम्हें तैश आ गया ? अवश्य ही यहाँ जितने उपस्थित हैं सभी अभिनय में भाग नहीं लेंगे, मैं स्वयं अभिनय नहीं करूँगा, किन्तु इसके माने यदि यह कोई लगावे कि हम लोग जो अभिनय नहीं करेंगे अभिनय के परामर्श में भी शामिल नहीं हो सकेंगे यह ग़लत है। मिस चपला ने इसी प्रकार एक सलाहमात्र दी थी।

सब लोग क्या बात हो रही थी वह तो भूल गये, वे एक साथ कह उठे—अरिन्दम जी आप अभिनय में भाग न लेंगे ?

—हाँ, कल रात को मैंने यह अन्तिम रूप से यह बात तय की है, मैं समझता हूँ मेरा अभिनय करना एक बचपन होता, बहुत से लोगों को मेरे विरुद्ध और भी झूठी-सच्ची उड़ाने का मौका मिलता। न मालूम किस अजीब मानसिक अवस्था में मैंने अभिनय करना स्वीकार किया था।

अरिन्दम की कही हुई एक-एक बात चपला के हृदय पर जलती हुई सलाख की तरह लग रही थी, किन्तु वह न हिली न डुली। अब वह खुल्लमखुल्ला सब बातों से उदासीन हो चुकी थी। सुप्रकाश की बात सोचते ही उसके हृदय पर के ये दाग़ मानों जादू की लकड़ी से अदृश्य हो गये। वह तड़प रही थी कि कब उसे यहाँ से छुट्टी मिले।

चपला ने जब इनकार कर दिया तो तय हुआ किशोर रणधीरसिंह का और रूपकुमारी मेनका का पार्ट करेगी। बात-बात में और भी पार्ट बँट गये। रिहर्सल होने लगा। रिहर्सल के दौरान में कब चपला उठ कर चली गई किसी को पता नहीं लगा, केवल अरिन्दम ने देखा। अरिन्दम बड़ी रात तक रिहर्सल देखता रहा, किन्तु उसने कुछ भी नहीं देखा। उसके अन्दर एक भयंकर संघर्ष आँधी की तरह चल रहा

था, उसके अन्दर का नाटक तीन कोण विशिष्ट था। वह, चपला और सुप्रकाश इस त्रिभुज के तीन बिन्दु थे।

—१४—

इसके बाद कई दिन तक अरिन्दम से चपला की अकेले में बातचीत का कोई मौक़ा नहीं लगा। शायद ऐसा बिना कारण अकस्मात् ही हुआ हो। जब वह आती तो सुप्रकाश के साथ, जाती तो उसी के साथ। फलस्वरूप जो बातचीत होती वह मामूली होती। बेचारे अरिन्दम को इतना भी समय न मिला था कि वह पूछता कि चपला अभिनय में क्यों नहीं भाग ले रही है, या उसे याद दिलाता कि अभिनय में भाग लेने का किस प्रकार उसने वादा किया था इत्यादि। सुप्रकाश सर्वदा उसके साथ यमदूत की तरह उसे दिखाई पड़ता था। साथ ही उसने यह देखा कि इन दोनों में अब व्याकुलता केवल चपला की ओर से ही नहीं बल्कि सुप्रकाश की ओर से भी है। उसने कई बार आँख मलकर देखा कि कहीं यह भ्रम तो नहीं है, किन्तु यह भ्रम नहीं था। सुप्रकाश अब सचमुच चपला को अपने जीवन का अपरिहार्य उपादान समझता था, किन्तु यह शायद इसी कारण था कि इस खेल में उसे मज़ा आ रहा था। वह चपला पर शासन करना चाहता था, और अरिन्दम के ऐसे प्रचंड प्रतिद्वन्दी को हराकर। एक व्यक्ति जो हमेशा दूसरे व्यक्तियों के अत्याचार का शिकार था, वह एकाएक किस प्रकार एक अखंड शासक हो गया, यह एक देखने की बात थी।

अरिन्दम का शिष्य होने के इरादे से वह आया था, कुछ-कुछ शिष्य वह हो भी चला था, किंतु उसकी विपरीत रुचिवाली जीभ ने अकस्मात् यह आविष्कार किया कि इस व्यक्ति के शिष्य होने से कहीं ज्यादा मजेदार इसका प्रतिद्वन्दी होना है, इसकी सहायता लेकर

अपने को सुधारने से कहीं ज्यादा मज़ा इसको हराकर इसकी छाती पर चढ़ बैठने में है। चपला उसके लिये बड़ी बात नहीं थी, किंतु चपला पर अधिकारकर उसके जरिये से अरिन्दम को शिकस्त देना बड़ी बात थी, कम से कम उसके निकट ऐसी ही जँची। अरिन्दम का उसने इन पाँच-छः महीनों में जो कुछ देखा था उससे उसके मन में श्रद्धा ही हुई थी। वह चाहता था किशोर की तरह क्या उससे अधिक वह उसका मित्र हो जाय, किंतु चपला बीच में इस तरह से आ गई, और वह भी इस प्रकार मौज में आ गया कि मित्रता की जगह कुछ और ही सम्बंध स्थापित हो गया। कभी-कभी वह सोचता था इस आफ़त से हटे और जिस उद्देश्य से वह यहाँ आया था उसी का अनुसरण करे किंतु ज्यों-ज्यों वह पैर पटकता था त्यों-त्यों वह और फँसता जाता था। एक स्रोत जैसे उसे खींचकर लिये जा रहा था।

कई दिन तक जब एकांत में चपला से बातचीत का मौक़ा नहीं लगा तो अरिन्दम ने तय किया आज शनिवार है, स्कूल से वह एक बजे के क़रीब आयेगी, उस समय वह बात करके ही मानेगा। यथा समय सुप्रकाश और चपला आई। दोनों बड़ी देर तक बैठे रहे, किंतु बात नहीं जम पाई। अरिन्दम कुछ ज़रूरी पत्र लिखने में व्यस्त रहा। अंत में चपला ने रोज़ के उठने के समय से पहिले कहा—फिर अरिन्दमजी, हम लोग चलें, आप तो आज बहुत व्यस्त हैं ?

अरिन्दम को चपला अपने काम में जितना संलग्न समझती थी, वह उतना संलग्न नहीं था। वह दोनों के अज्ञात में जितना संभव था दोनों का हाव-भाव निरीक्षण कर रहा था। चपला की यह बात सुनते ही उसने अपने हाथ के पास से सब कागज़ात ढकेल दिये, और खड़ा होकर बोला—चपला ज़रा बाहर चलना...

चपला ने एकबार व्याकुल दृष्टि से सुप्रकाश की ओर देखा, किन्तु तुरन्त ही वह अरिन्दम के साथ हो गई। कमरे के बाहर निकलकर ज़रा आड़ में होते ही चपला ने कहा—कहिये।

६

अरिन्दम ने कहा—देखो मुझे तुमसे अकेले में कुछ गंभीर बातें करनी हैं, अब यह बताओ कि सुप्रकाश को कैसे मैं जाने के लिए कहूँ, या तुम ही कहोगी ?

चपला के चेहरे पर एक अजीब उदासी छा गई, उसने कहा—मैं घंटे भर बाद अकेली आऊँगी, इस समय कहने पर शायद बुरा मान जाय या कुछ सन्देह करे। चपला की दृष्टि में अब भय था।

अरिन्दम ने दृढ़ता से कहा—नहीं, बात बहुत गंभीर है चपला ! अगर मैं बात नहीं करूँगा तो अनर्थ हो जायगा। देखो, मैंने कई दिन से क़रीब-क़रीब नहीं सोया है...

आख़िरी वाक्य इतने करुण ढंग से कहा गया था कि चपला की आँखों में आँसू आते-आते रह गये, उसने कहा—अच्छी बात है मैं ही कहूँगी, आप चलकर बैठें।

चपला ने कमरे के अन्दर से सुप्रकाश को बुला लिया। अरिन्दम जाकर कमरे में अपनी जगह पर बैठ गया, उसका मन अब पहिले से कहीं शान्त था। ओह, अब वह चपला से अकेले में बातचीत करने जा रहा है, थोड़ी देर में सब ठीक हुआ जाता है। अरिन्दम एक पुस्तक को उठाकर पन्ने उलटने लगा, किन्तु अरे, यह क्या, कई मिनट हो गये, चपला आई नहीं। वह चप्पल बिना पहने ही कमरे से बाहर निकल गया। दोनों धीरे-धीरे बातें कर रहे थे। अरिन्दम को एकाएक क्रोध-सा आ गया। वह एक लहमे में दोनों के पास पहुँचकर बोला—क्यों चपला, तुमसे मुझे अकेले में बातचीत करनी है, इसके लिये क्या किसी की इज़ाज़त की ज़रूरत होगी ?

—नहीं तो अरिन्दमजी, ये जा ही रहे थे—चपला ने कहा। सुप्रकाश कुछ न कहकर ही चोर की तरह चला गया, अरिन्दम ने उसकी तरफ़ देखा भी नहीं। चपला अरिन्दम के साथ कमरे में आई।

अरिन्दम ने कहा—क्यों चपला, क्या तुम सुप्रकाश से मुझसे मिलने की इज़ाज़त माँग रही थीं ?

—नहीं तो अरिन्दमजी ।

—फिर यह देरी कैसी थी ?

—मैं ज़रा उसे console कर रही थी । चपला ने कहा ।

एक कड़वी हँसी हँसकर अरिन्दम ने कहा—तुम उसे सांत्वना दे रही थीं ? ज़रा देर के लिये अलग होओगी इसीमें सांत्वना की ज़रूरत पड़ी और मैं यहाँ रोज़ तुम्हारा सवेरे से शाम तक इन्तज़ार करता हूँ कि कहीं चपला आवे तो लौट न जावे, किन्तु तुम कभी सांत्वना देने नहीं आतीं, अर्थात् आती भी हो तो साथ में एक दूसरे को लेकर आती हो । क्यों मुझे तो तुमने कभी सांत्वना नहीं दी । क्या चपला तुम समझती हो मैं पत्थर हूँ, क्यों मुझ पर शायद कोई दुःख का असर नहीं होता, मुझे शायद किसी कोमल भाव से वास्ता नहीं है ? चपला, तुम दिन बदिन होती क्या जा रही हो ?

गिड़गिड़ाती हुई चपला बोली—अरिन्दमजी, मैं तो वही हूँ ।

—कहाँ तुम वही हो, ज़रा सोचो ।

—नहीं, मैं वही हूँ, आप सिर्फ समझते हैं—दूसरी ओर देखते हुए चपला ने कहा ।

अरिन्दम ने कहा—कैसे तुम वही हो चपला, सोचो तुम अब कितना कम यहाँ आती-जाती हो । पहिले से इसकी तुलना करो, और जब आती हो सुप्रकाश को साथ लाती हो ।

—मैं लाती नहीं हूँ, वह ख़ुद आता है । चपला के चेहरे से मालूम हुआ उसको इस बात का दुःख नहीं, बल्कि उसका कुछ गौरव है ।

अरिन्दम ने कुछ नहीं कहा । चपला एकाएक बोली—अरिन्दमजी, आप उसको अपनी बराबरी का क्यों समझते हैं ? आप इस तरह अपना अपमान करते हैं····

अरिन्दम बोला—नहीं, इसमें कोई बराबरी की बात नहीं ।

चपला बोली—आप शायद समझते हैं कि मैंने अब आपके यहाँ आया-जाया कम करती हूँ इसलिये मैं आपको भूल गई हूँ, किन्तु यह ग़लत है। मैं आपको सत्य कहती हूँ, आप पर सैकड़ों सुप्रकाश न्योछावर हैं।

इस बात से अरिन्दम को बड़ी शान्ति मिली, उसके चेहरे पर इस शान्ति की परिपूर्णता की छाया दिखाई दी। चपला कहती गई—आप कहें तो आज इसी घड़ी से मैं सुप्रकाश से कोई सम्बन्ध न रक्खूँ, आख़िर उसके कारण यदि आपको अशान्ति हुई, और मेरे आपके बीच में कोई मनमुटाव पैदा हो गया जैसा कि देख रही हूँ हो चुका है, तो इससे फ़ायदा ही क्या हुआ?

अरिन्दम गद्गद् हो गया, उसने कहा—नहीं-नहीं, मुझे क्यों अशान्ति होगी? तुम मुझे बिलकुल ग़लत समझ गई। तुम सुप्रकाश से मिलोगी इसमें मुझे अशान्ति या दुःख क्यों होता? फिर भी मैं चाहता हूँ कि तुम कभी-कभी मेरे पास अकेली आया करो, क्योंकि बहुत-सी बातें अकेले में ही अच्छी तरह कही जा सकती हैं। सुप्रकाश की चाहे कितनी ही प्रशंसा कोई करे, किन्तु यह मानती हो कि नहीं कि उसमें कोई साहित्यिक अनुभूति नहीं है? मैं कभी-कभी तुमसे अपनी साहित्यिक कृतियों के बारे में बात करना चाहता हूँ। मैं समझता हूँ यह उसकी अनुपस्थिति में ही अच्छी तरह हो सकती है।—थोड़ा ठहर-कर अरिन्दम ने कहा—और भी तो बहुत-सी बातें हो सकती हैं जो मैं तुमसे अकेले में करना चाहूँगा। तुम इस बात को मानती हो कि नहीं?

—क्यों नहीं?—चपला ने कहा।

—तो तुम कभी-कभी उसको बिना लिये आया करोगी?

—ज़रूर! चपला ने बिना हिचकिचाहट के सरलता से कहा।

अरिन्दम को इस विषय में और कुछ कहना नहीं था। फिर भी अरिन्दम ने यह देखा कि पहिले जैसे बातचीत जम जाती थी, छोटे-छोटे विषय को लेकर दार्शनिकता शुरू होती, छोटी बातों से बड़ी बात

आती, आइनस्टाइन के सिद्धान्त से लेकर अन्य कितने सिद्धान्त आते, उस प्रकार आज न हो सका। चपला देर तक बैठी रही, किन्तु अरिन्दम को वह आनन्द न हुआ जो पहले उसके दस मिनट बैठने से होता था। कहीं पर एक काँटा की तरह शायद एक खाई दोनों के बीच में मौजूद थी, जो दोनों को मिलने से रोकती थी। अरिन्दम जितना ही इस बात को अनुभव करता था, उसका मन उतना ही एक प्रकार के आतंक से अभिभूत होता जाता था। फिर भी वह बार-बार अपने मन में इस वाक्य को दुहराता रहा "अरिन्दमजी, आप पर सैकड़ों सुप्रकाश न्योछावर करती हूँ" जैसे एक डरपोक आदमी भूत के भय से रामनाम दुहराता है। बड़ी देर तक बैठकर चपला कल से अक्सर अकेली आने का वादा करके चली गई।

—१५—

नाटक का रिहर्सल ज़ोरों के साथ होने लगा। एक पुराने नाटक समाज के बहुत से लोग इसमें भाग ले रहे थे, किन्तु नायक-नायिका का पार्ट किशोर और रूपकुमारी ही को दिया गया था। सब लोग इस बात पर सहमत थे कि किशोर और रूपकुमारी अपना पार्ट अच्छी तरह अदा कर रही है। अरिन्दम ने एक मज़ाक में नाटक के अभिनय की बात शुरू की थी, किन्तु ज्यों-ज्यों रिहर्सल होता जाता था त्यों-त्यों उसका उत्साह उसमें बढ़ता जाता था। चपला कभी-कभी आती थी, अक्सर सुप्रकाश के साथ। यदि अरिन्दम के पास की कुर्सी खाली होती तो वह वहीं बैठती थी, नहीं तो सबसे पास की जगह पर बैठती, सुप्रकाश कभी चपला के पास बैठता कभी दूर। अरिन्दम को नाटक के अभिनय की सफलता पर ख़ुशी ज़रूर होती थी, किन्तु चपला के अलग हो जाने से उसको वह खुशी कभी नहीं हुई जिसकी उसे प्रतीक्षा थी। विशेषकर उस दृश्य की बात जिसको उसने चपला के सामने पढ़कर सुनाने में हिचका था सोचकर

उसे बड़ा दुःख होता था। रिहर्सल अभी तक उस जगह पर नहीं पहुँचा था।

कई दिन से चपला रिहर्सल में नहीं आ रही थी। अरिन्दम के घर में भी जब चपला आती थी तो वह सुप्रकाश के साथ आती थी। इन दिनों सुप्रकाश और अरिन्दम का सम्बन्ध कुछ अच्छा नहीं था, अवश्य ऊपर से कोई बात नहीं जान पड़ती थी, किन्तु भीतर से दोनों जानते थे कि एक को दूसरे की सूरत पसन्द नहीं। अरिन्दम कभी-कभी अपने इस पतन से मन ही मन दुःखी होता था, किन्तु बहुत कोशिश करने पर भी वह अपने भावों को बदल नहीं पाता था। अरिन्दम समझ चुका था कि चपला के प्रति उसके जो भाव हैं, वे केवल दुःख ही दे रहे हैं और देंगे, इसलिये वह इससे छुटकारा चाहता था; कभी-कभी वह समझता था कि वह इससे छुटकारा पा चुका, किन्तु दो दिन बाद वह वेदना अधिक चीस के साथ उठती थी। चपला का न आना उसे उतना न खटकता, शायद लेकिन उसको यह जो दृढ़ विश्वास हो गया था कि वह यह समय सुप्रकाश के साथ बिताती होगी। उसे बहुत दुःख देता था।

इस बीच में और एक नई बात हो रही थी जिससे वह परेशान था। वह यह कि रूपकुमारी पहिले की तुलना में उसके अधिक क़रीब आने की चेष्टा कर रही थी। उसने कई बार नाटक की बहुत उच्छ्वसित भाषा में प्रशंसा की थी, और कभी यही उसके साहित्य की सबसे भीषण समालोचना किया करती थी। एक दिन नाटक की प्रशंसा करते-करते वह कह गई—लेकिन अब मुझे इसके अभिनय में कोई दिलचस्पी नहीं है।

—क्यों ? क्यों ?—अरिन्दम ने कहा।

—मैंने जब नायिका होने की ठानी थी तब मैंने सोचा था आप ही नायक रहेंगे, लेकिन बाद को चपलाजी के हट जाने पर आप भी हट गये। मेरा अभिनय करना व्यर्थ है और हुआ।

अरिन्दम एक बारह वर्ष की लड़की की तरह झेंप गया, किन्तु रूपकुमारी के अत्यन्त स्पष्ट इंगित को भी जैसे उसने समझा ही न हो इस प्रकार बोला—अभिनय एक कला है, उसमें एक कला का आनन्द ही कलाकार का पुरस्कार है।

—हो सकता है अरिन्दमजी, किन्तु मैंने तो अभिनय करना कला के रूप में नहीं, बल्कि पूजा के रूप में स्वीकार किया था। उसने अपनी बड़ी-बड़ी सौम्य आँखों को सीधा अरिन्दम के मुँह पर स्थापित किया। अरिन्दम ने पहिली ही बार ध्यान से रूपकुमारी को देखा, वह सुन्दरी है, चपला से कहीं अधिक; किन्तु इस बात के मन में आते ही उसका चेहरा भय से पीला पड़ गया। उसने इस बात को दूसरा ही रुख देने की चेष्टा की, उसने ज़रा रुखाई से कहा—मैं न हूँ तो किशोर तो है, तुम जानती हो वह मुझे कितना प्यारा है ?

—हो सकता है वह आप का प्यारा हो, हो सकता क्या, है। लेकिन आप याद रक्खें वैसे सैकड़ों आप पर न्यौछावर हैं ?

अरिन्दम के बदन में जैसे बिजली दौड़ गई, ये स्त्रियाँ क्या सब एक ही तरह से बात करती हैं। ओह, लेकिन रूपकुमारी के चेहरे से स्पष्ट था कि जो बात उसने कही, उसका एक-एक शब्द उसके हृदय से निकल रहा था। चपला ने भी ये शब्द कहे थे, किन्तु उसकी बातों में सत्य की इतनी झलक नहीं थी। अरिन्दम के दिमाग़ में एक ख़्याल आया, क्यों न उसका आश्रय लेकर चपला को भूला जाय। एक काफ़ी गंभीर ख़्याल था, किन्तु नहीं, यह बुरी बात थी। जब वह रूप-कुमारी को प्यार नहीं करता, तो वह क्यों उसको लेकर खेले। यह तो एक अत्यन्त वीभत्स हृदयहीनता का कृत्य होगा।

उसने ध्यान से रूपकुमारी को देखा, फिर कहा—रूपकुमारी ज़रा इधर आओ......

रूपकुमारी अपनी कुर्सी से उठकर बिना हिचकिचाहट के उसके पास आकर खड़ी हो गई। अरिन्दम ने खड़े होकर रूपकुमारी के

कन्धे पर बायाँ हाथ रख दिया—मेरी रूपा, तुम क्या कह रही हो नहीं जानती हो—कहकर पिता जैसे पुत्री को चूमता है उस तरीके से उसने रूपकुमारी का सिर चूम लिया और बोला—जाओ अपनी जगह पर बैठ जाओ। मैं तुम्हारे प्रेम की क़द्र करता हूँ लेकिन मजबूर हूँ......

रूपकुमारी जाकर अपनी कुर्सी पर बैठ गई, अरिन्दम भी बैठ गया। अब रूपकुमारी रोज़ आने लगी, अरिन्दम को उसका आना प्रिय था, तभी तो वह उधेड़बुन में पड़ गया था।

चपला और सुप्रकाश के विषय में अजीब-अजीब अफ़वाहें अरिन्दम के कान में पहुँच रही थीं। वह मुँह से तो इन सब बातों का खंडन करता था, किन्तु दिल में जो भी बात उसे सुनाई पड़ती थी उसका वह प्रत्येक अक्षर सच समझता था। यही तो और कष्टकर था। नया नाटक पुस्तक रूप में भी प्रकाशित होने जा रहा था, अरिन्दम ने यह तै किया था जिस दिन वह नाटक खेला जायगा उसी दिन वह नाटक प्रकाशित भी होगा। इसलिये अरिन्दम को बहुत-सा समय उसके प्रूफ़ आदि देखने में देना पड़ता था। जितना काम वह करता था बहुत सुन्दर तरीक़े से करता था, किन्तु काम करते-करते बीच ही में कभी-कभी उसका हृदय बैठ-सा जाता था, क्योंकि पिछली दो-एक पुस्तकों के प्रकाशन के अवसर पर चपला ने बड़ी मदद दी थी, और अब चपला कहाँ थी?

चपला एकदम नहीं आती थी यह बात नहीं, किन्तु कई दिन से वह अकेली नहीं आई थी। यह नहीं कि वह हमेशा जब आती थी वह सुप्रकाश को लेकर आती थी, नहीं, किन्तु कुछ ऐसा संयोग पड़ता जाता था कि जब चपला आती थी तो कोई न कोई आ जाता था। और अरिन्दम जो बात करना चाहता था वह यों ही रह जाती थी। नाटक के फर्में छप चुके थे, अब केवल बँधाई का काम बाक़ी था, उधर अभिनय का दिन आ रहा था, अरिन्दम एक दफे चपला से बात करना चाहता था। वह समझता था यह बात करना बहुत ज़रूरी है।

पुस्तक प्रकाशित होने में केवल तीन दिन थे। दिन के चार बजे थे। सुप्रकाश और चपला दोनों का यही आने का समय था। मुँह गम्भीर बनाये हुए अरिन्दम दोनों की प्रतीक्षा कर रहा था, आज वह चपला से बात करके ही रहेगा यह उसने निश्चय कर लिया था। आज इस युगलजोड़ी (यह नाम दोस्तों ने दे दिया था) का अरिन्दम ने रोज़ की तरह स्वागत नहीं किया।

अरिन्दम को रोज़ से कुछ अधिक व्यस्त देखकर चपला ने कहा—आप आज व्यस्त हैं?

अरिन्दम ने घड़ी की ओर देखा साढ़े चार बजे थे, उसने व्यस्तता के साथ क़लम रख दी, और कहा—चपला, मुझे तुमसे कुछ बातें करनी हैं—फिर सुप्रकाश की ओर मुड़कर रुखाई से बोला—सुप्रकाश, मुझे चपला के साथ कुछ ज़रूरी बातें करनी हैं, तुम यदि बुरा न मानों तो थोड़ी देर के लिये जा सकते हो।

सुप्रकाश हिला नहीं, चपला ने उसकी ओर भय-चकित नेत्रों से देखा जैसे कोई महान् अनर्थ हो गया, साथ ही साथ शायद उसकी दृष्टि में एक आकुल निवेदन था कि वह इस अनर्थ के लिये ज़िम्मेदार नहीं है। सुप्रकाश ने साथ ही साथ चपला की ओर देखा कि यदि चपला से कहा जाय कि वह इस गुप्त बातचीत में शामिल न हो, तो वह उसे मानेगी कि नहीं। उसने देखा शायद मानेगी, शायद नहीं मानेगी, साथ ही जब उसने अरिन्दम के तने हुए चेहरे की ओर देखा तो उसकी इस तरह खुल्लम-खुल्ला अवज्ञा करने की हिम्मत उसे नहीं हुई। उसको यह भी डर हुआ कि न मालूम अरिन्दम इस समय किस प्रकार बिगड़ेदिली से काम ले, फिर उसका असर चपला पर न जाने क्या हो।

सुप्रकाश जानता था कि यद्यपि इस समय चपला के हृदय पर उसीका पूर्ण अधिकार है, किन्तु फिर भी यह भी निश्चित था कि उसके हृदय में अरिन्दम का स्थान है। अरिन्दम की जगह छीनकर

उस पर सुप्रकाश ने अपना कब्ज़ा जमाया था, किन्तु वह जानता था अरिन्दम को उसके हृदय से एकदम निकालना टेढ़ी खीर है। क़रीब-क़रीब असंभव है। अरिन्दम के विरुद्ध चपला को सनकारने के लिये कहने का कुछ भी नहीं था, यदि कुछ था तो यह था कि वह सुप्रकाश के विरुद्ध ख्वामख़्वाह हो गया है, किन्तु इस विरोध को ईर्ष्या से उद्भूत समझकर वह उसको कमज़ोरी के सिवा कुछ भी नहीं समझती थी।

अरिन्दम ने जब देखा सुप्रकाश हिला तक नहीं तो उसे आश्चर्य हुआ। उसने सुप्रकाश को फिर से कहा—मुझे ज़रा चपला से काम है.......

बैठे ही बैठे सुप्रकाश ने कहा—हाँ, याद आ गई, मुझे भी काम है। फिर उसने क़लाई की घड़ी को ध्यान से देखते हुए कहा—चार बजकर बत्तीस मिनट, आपका काम कितने मिनट में हो जायगा?

अरिन्दम का चेहरा क्रोध से तमतमाने लगा, किन्तु उसने कुछ न कहा। असहाय की भाँति उसने चपला के मुँह की ओर देखा। सुप्रकाश ने कहा—मेरा काम तो पन्द्रह मिनट में हो जायगा, तो मैं पाँच बजे आऊँगा, क्यों?

किन्तु किसी के उत्तर देने के पहिले ही वह उठकर चला गया, जाते वक्त भी वह घड़ी की ओर ही देख रहा था।

जब सुप्रकाश चला गया, और उसके जूते की आवाज़ सुदूर में विलीन हो गई तो अरिन्दम ने कहा—चपला, इसके माने क्या?

चपला कुछ बोली नहीं, उसने केवल एक बार सिर ऊँचाकर अरिन्दम की ओर देखा। अरिन्दम ने कहा—क्यों चपला, क्या हम लोग कितने मिनटों के लिये मिलेंगे यह भी एक तीसरा आदमी आकर तै करेगा? तुम मानो, लेकिन तुम्हारे हमारे दरमियान किसी time-keeper को नहीं मानता। इतनी बड़ी गुस्ताख़ी कि हमें घड़ी देख बताता है आपको इतने मिनट दिये जाते हैं। उसने

तुम्हारे सामने मेरा अपमान किया, और तुमने मान लिया ? क्या तुम मानती हो कि वह तुम्हारे हमारे दरमियान समय-रक्षक का काम करेगा ?—इस पर भी जब चपला नहीं बोली तो उसने अत्यंत रुखाई से कहा—मानती हो या नहीं, बताओ ?

—नहीं मानती हूँ। चपला ने धीरे से कहा।

—फिर जब उसने मुझे मिनट दिये तो तुमने उसका प्रतिवाद क्यों नहीं किया, कल यदि वह मुझे मारे तो भी शायद तुम इसी तरह चुप रहोगी ? वितृष्णा के साथ अरिन्दम ने कहा।

—अरिन्दमजी, यह आप क्या कह रहे हैं ?

—नहीं तो क्या, अब यही बाक़ी रहा, सो तुम वह भी कराओगी जान पड़ता है। अरिन्दम ने दुःख तथा क्षोभ के साथ कहा।

चपला ने झुँझलाकर कहा—इसका उत्तर आप जानते हैं कि मैं आपको क्या कराऊँगी या नहीं कराऊँगी, मैं इतना जानती हूँ कि वह इतना विवेकहीन नहीं है...

—हाँ, वह बड़ा भारी विवेकवान है, तुम भूल गई हो वह क्या था ?

चपला के चेहरे पर अंधकार छा गया, उसने पहले की अपेक्षा कम तेज़ी में कहा—वह अब सुधर गया है।

—हाँ, वह सुधरा है, तभी तो हमारे तुम्हारे दरमियान समय-रक्षक बन बैठा है।—थोड़ी देर ठहरकर कहा—ख़ैर वह क्या बनता है इसकी हमें परवाह नहीं, किन्तु अफसोस है तो हमें यही है कि तुम उसका साथ दे रही हो। तुम साथ न देती तो मजाल था कि वह हमको इस प्रकार घड़ी दिखाता ! अरिन्दम के स्वर में दर्द था।

चपला ने कहा—अब वह ऐसा न करेगा।

अरिन्दम चाह रहा था कि चपला सुप्रकाश के लिये इससे सख़्त कुछ कहे, किन्तु चपला ने बस इतना ही कहा। अरिन्दम ने अप्रसन्नता के साथ कहा—भला इसकी क्या गारंटी है, वह तो दिन बदिन बढ़ता ही जा रहा है।

किसी तरह यह बात ख़तम हुई तो अरिन्दम ने कहा—शनिवार को नाटक का अभिनय होगा, और उसी दिन पुस्तक प्रकाशित होगी।

चपला ने कहा—ओह ! किन्तु उसने इस पर कोई विशेष उत्साह नहीं दिखलाया, थोड़ी देर जैसे सोचकर बोली—यह आपका शायद पाँचवाँ नाटक है ?

—हाँ।

अरिन्दम ने नये नाटक के लिखे जाने का इतिहास चपला को याद दिलाया, फिर कहा—और चपला तुमने मेरे नाटक के अन्तिम दृश्यों को पढ़ा तक नहीं।

चपला ने कहा—अब पढ़ लूँगी, न मालूम क्यों अब साहित्यिक बातों में मेरी तबियत नहीं लगती। आप तो स्वयं ही बार-बार कहते हैं कि जीवन में मूल्य बदला करते हैं, उसी तरह समझ लीजिये। मैंने कई बार सोचा कि उन अन्तिम दृश्यों को पढ़ूँ, किन्तु कभी तो समय नहीं मिला, कभी इच्छा नहीं हुई। आजकल तो मिस बैनर्जी मुझ पर बहुत नाराज़ हैं, हर समय शक ही करती रहती हैं, उसकी वजह से मैं क्वार्टर से निकलती कम हूँ। मुझसे कई दफे कह चुकी हैं शादी कर लो...

अरिन्दम का चेहरा गम्भीर हो गया, उसे मिस बैनर्जीवाली बात एक नये बहाने के रूप में प्रतीत हुई। उसने कहा—तो तुम दो-चार दिन ज़रा हम लोगों की मदद नहीं करोगी ? काम कितना है देख ही रही हो।

—मदद करूँगी, क्यों नहीं करूँगी—चपला ने हमेशा की तरह कहा।

दोनों में इसी प्रकार बड़ी देर तक बातें होती रहीं। जब दोनों अलग हुए तो अरिन्दम के मन में कुछ शान्ति थी, किन्तु अधिक नहीं।

—१६—

दूसरे दिन चपला और सुप्रकाश में जब भेंट हुई, तो सुप्रकाश का चेहरा गंभीर था। उसे निश्चय सा हो गया था कि चपला पर जो विजय उसने पाई है, वह महत्त्व की नहीं है। वह समझ रहा था कि अरिन्दम की एक झिड़की का चपला पर न मालूम क्या असर हो जाय। कल चपला ने जो व्यवहार किया था, उससे उसे असन्तोष था। वह चाहता था कि चपला इस प्रकार चुप न बैठकर कुछ कहती, वह समझता था इस प्रकार चुप रहकर चपला ने उसका अपमान कराया है।

चपला ने सुप्रकाश का चेहरा देखा तो वह ताड़ गई कि आज दाल में कुछ ज़रूर काला है। उसने बड़े प्रेम से पूछा—क्या बात है प्रकाश?

सुप्रकाश ने कोई उत्तर नहीं दिया। चपला ने फिर कहा—कुछ नाराज़ हो गये हो क्या? क्या बात है प्रकाश बताओ न?

सुप्रकाश ने कुछ कहा नहीं, किन्तु अरे यह क्या, वह रो रहा था। यह दृश्य इतना अप्रत्याशित तथा अद्भुत था कि चपला अभिभूत हो गई। चपला पास आकर बैठ गई, तो वह और फूट-फूटकर रोने लगा। जब चपला ने बहुत पुचकारा तो प्रकाश ने आँखें पोंछकर गिड़गिड़ाते हुए कहा—मैं पहले ही जानता था कि मुझे कोई प्यार नहीं करेगी, फिर जो इसी तरह अरिन्दमजी के कहने पर मेरा अपमान ही करना था तो मुझे तुमने इस तरह प्रश्रय क्यों दिया?

चपला ने दु:खी होते हुए कहा—यह तुम क्या कहते हो प्रकाश? क्या मैं तुम्हें प्यार नहीं करती?—उसका चेहरा दृढ़ हो गया—सारी दुनिया मेरे विरुद्ध होती जा रही है, जिधर से निकलती हूँ उधर ही लोग ताना देते हैं, उँगली उठाते हैं, मेरे स्कूल की छात्रियाँ तक मुझे देखकर ताना देती हैं, मिस बैनर्जी के कानों तक बात पहुँच चुकी है, यहाँ तक कि अरिन्दमजी भी मुझसे नाराज़ होते जा रहे हैं, ओह!

कहकर वह रोने लगी, फिर रोते ही रोते बोली—फिर भी मैं किसी को परवाह नहीं करती। तुम कह रहे हो प्रकाश मैं तुम्हें प्यार नहीं करती? ओह, ऐसी बात सुनने से तो मेरा मर जाना भला है!

सुप्रकाश ने देखा अब चपला सम्पूर्ण रूप से उसके क़ब्जे में है, उसने धीरे-धीरे उसको हटाकर अरिन्दम और चपला में कल जो बातचीत हुई थीं वह सब पूछ ली। पहले तो चपला ने बातचीत का संक्षिप्त सार बतलाया, फिर उसने खुद ही पूरी बातचीत बता दी। हाँ, अपने विवरण में उसने यह नहीं बताया कि अरिन्दम के प्रश्नों के उत्तर में उसने भी व्याकुल प्रेम का मूक प्रदर्शन किया था, बल्कि उसने यह कहा कि अरिन्दम के प्रेम को उसने ठुकरा दिया।

सब बातें पूछकर अरिन्दम के विषय में सुप्रकाश के मन में एक सन्देह हुआ। वह उसको रफा करना चाहता था। उसने पूछा—अच्छा चपला मेरी रानी, यह तो बताओ अरिन्दमजी तुमसे किस प्रकार का प्रेम करते हैं, क्या उनकी नीयत कुछ......

जीभ काटकर चपला ने कहा—छिः प्रकाश ऐसा न कहना, उनकी नीयत कभी ख़राब नहीं थी।

यह बात सुनकर सुप्रकाश को क्रोध नहीं आया, जैसा कि आना चाहिए था, उसके चेहरे पर एक पहेली की तरह हँसी खेल गई। यह बात नहीं कि उसने चपला का विश्वास नहीं किया, विश्वास उसने पूरे तौर पर ही किया, तभी तो वह हँसा। उसको ख़ुशी इस बात की हुई कि ऐसे एक व्यक्ति पर विजय प्राप्त की। साथ ही वह इस विजय को पूरी करके स्थायी करना चाहता था। यह एक जूआ था, इस उद्देश्य की सिद्धि के लिये वह सब कुछ करने के लिये तैयार था, सभी हद तक जाने को तैयार था।

उसने चपला को अपने पास खींच लिया, और बोला—मेरी इच्छा होती है मैं तुम्हें लेकर कहीं भाग जाऊँ।

—चलो न ! चपला ने सम्पूर्ण रूप से सुप्रकाश के आलिंगन में आत्म-समर्पण करते हुए कहा ।

—चलोगी ?

—हाँ ।

—तुम्हारा स्कूल ?

—भाड़ में जाय ।

—याद रक्खो मज़ाक नहीं है, सब कुछ छोड़ना पड़ेगा। सुप्रकाश ने दृढ़ता से कहा ।

—हाँ-हाँ छोड़ूँगी ! चपला ने अधिकतर दृढ़ता से कहा ।

—तो अब अपने को धीरे से सब बातों से अलग कर लो। हमारी दुनिया जब न्यारी ही होनी है तो हमें इन बातों से तथा लोगों से क्या मतलब ?—थोड़ी देर ठहरकर जैसे चपला के चेहरे को तौलते हुए कहा—तो यह बताओ "विदीर्ण भारत" के अभिनय के दिन देखने जाओगी कि नहीं ?

—चली जाऊंगी, आख़िरी मर्तबा अरिन्दमजी का कहा भी कर दूँ—इतना कहकर चपला ने समझा कि जो उसने कहा वह शायद सुप्रकाश को पसन्द न आया हो, इसलिये बोली—तुम और हम साथ चलेंगे, पास-पास बैठेंगे, ऐसी हालत में जाने में हरज ही क्या है ?

—कुछ नहीं—एकाएक एक दूसरी ही बात सुप्रकाश के दिमाग़ में आई, यह बात बड़ी अच्छी थी, कभी निशाने को चूक नहीं सकती थी। उसने कहा—तुम तो जाओगी, तुम्हें स्वयं नाटककार का निमंत्रण मिल चुका है, किन्तु मैं कैसे जाऊँ ?

—जैसे सब जाते हैं। ओह, तुम शायद टिकट का सोच रहे हो, इसमें कोई टिकट है ही नहीं।

— तो क्या बिना निमंत्रण के ही चलूँ ?

चपला का चेहरा गंभीर हो गया। उसने कहा—मेरा तो ख़याल है तुम्हें निमंत्रण ज़रूर मिलेगा, अरिन्दमजी कभी भद्रता से चूकनेवाले व्यक्ति नहीं हैं।

—मान लो चूक गये तो क्या करूँ ?

चपला कुछ परेशान-सी हो गई, बोली—ज़रूर पत्र मिलेगा, नहीं तो मैं भी नहीं जाऊँगी।

—किन्तु एक बात—सुप्रकाश ने कहा।

—क्या ?

—तुम कहीं जाकर उन्हें याद न दिलाना कि मुझे पास दिया जाय या निमंत्रण भेजा जाय।

—नहीं, ऐसा मैं क्यों करने लगी ?

चपला जब उस दिन अपने क्वार्टर में लौटी तो उसे बड़ा दुःख हो रहा था कि एक तरह से वह इस नाटक का अभिनय न देखने की प्रतिज्ञा कर चुकी है, इतना करके शायद उसने ठीक नहीं किया था। फिर उसने यह सोचकर तसल्ली की कि यदि नाटक के उद्योक्ता इतने नीच हैं कि सुप्रकाश को एक मामूली पत्र भेजकर निमंत्रित नहीं कर सकते तो इस नाटक को देखने जाना व्यर्थ है।

—१७—

अभिनय के दिन सबेरे अरिन्दम से चपला से रास्ते में भेंट हुई, अरिन्दम ने पूछा—आ रही हो न ?

एक ज़माना था जब अरिन्दम कह सकता था कि "आज स्कूल में छुट्टी ले लो" और चपला से काम लेता, किन्तु अब उसको इतना ही पूछने की हिम्मत थी, सो भी वह डरता था कि अन्त तक यह प्रार्थना भी शायद न मानी जाय।

—हाँ ज़रूर। चपला ने कहा, किन्तु उसका चेहरा पीला पड़ गया। उसने एक बार सोचा अरिन्दम से पूछे कि सुप्रकाश को निमंत्रण-पत्र भेजा गया कि नहीं, किन्तु अरिन्दम के मुँह की ओर देखकर उसकी हिम्मत नहीं हुई, इसके अतिरिक्त वह सुप्रकाश से कह चुकी थी कि वह इस पत्र के विषय में पूछताछ नहीं करेगी।

अरिन्दम और चपला दोनों टहलते हुए अरिन्दम के घर में गये। आज इतना बड़ा काम था, अरिन्दम के सब मित्र दौड़ रहे थे, किन्तु अरिन्दम के चेहरे पर चपला ने कोई व्यस्तता नहीं देखी। उसकी दृष्टि में अभिनय के लिये व्यस्तता के बजाय चपला के साथ कुछ समय बिताने की व्याकुलता थी। उसके चेहरे पर जैसे लिखा हुआ था कि आज के इस अभिनय तथा प्रकाशन से चपला उसके जीवन में कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। आखिर वह अभिनय ही तो है, और यह है तड़पता हुआ, धड़कता हुआ जीवन। कहाँ यह, कहाँ वह।

दोनों अपनी-अपनी जगह पर बैठ गये। अरिन्दम ने कहा—कल रामनारायण मिला था।

—हाँ।

—मैं तपेदिक पर डाक्टर सरकार का लेक्चर सुनने गया था। अकस्मात् मैं देखता क्या हूँ कि रामनारायण और मैं एक ही बेंच पर बैठा हूँ। कभी वह तुम्हारा कितना प्रिय था यह बात मुझे याद आई, किन्तु साथ ही याद आई कि आज वह तुम्हारे जीवन में कहीं नहीं है। कभी शायद तुमसे उससे भेंट भी नहीं होती। मैंने जब उसे अपने साथ एक बेंच पर बैठा हुआ पाया तो मुझे ख्याल आया कि आज मेरी और उसकी समता है, हम दोनों की एक ही हालत है। तुमने हम दोनों से अपने को अलग कर लिया। यह बात मन में आते ही मैं सिहर उठा, एक डर-सा मालूम दिया। मैंने रामनारायण से पूछा, "क्यों कैसे हो?" मेरा उद्देश्य यह जानना था कि उसके पुराने प्रेम का उसके दिमाग़ में कुछ है कि नहीं। उसने कहा, "अच्छा तो हूँ।" मैंने कहा, "लेकिन तुम्हारे चेहरे से तो यह बात ज़ाहिर नहीं होती।" उसने कहा, "ओह, इधर ज़रा गाँव गया था, एक गाँव की लड़की से ज़रा प्रेम हो गया था, उसी को स्मरणकर कभी-कभी तबियत उचटी रहती है, लेकिन यह चला जायगा।" कहकर रामनारायण हँसा। न मालूम क्यों इस बात को सुनकर मुझे खुशी हुई। मैंने सोचा खैर यह आदमी कितना भी ख़राब

हो इसमें एक गुण है जो मुझमें नहीं है, यह अपने दुःख को हटा तो लेता है। खोये हुए के स्थान को रिक्त देखकर रोता नहीं, उसकी जगह एक दूसरा स्थापित कर लेता है।—अरिन्दम चुप हो गया, किन्तु उसकी एक-एक बात की प्रतिध्वनि जैसे कमरे में और साथ चपला के दिमाग़ में गूँजने लगी।

चपला ने धीरे से कहा—अरिन्दमजी, मैंने आपको कितनी बार कहा कि आप ख़्वामख़्वाह अपने को परेशान करते हैं, मैं वही हूँ जो थी।—वह क़रीब-क़रीब रोने पर थी।

अरिन्दम फिर भी एक स्वप्नभरी दृष्टि से उसकी ओर देखता रहा, उसने धीरे-धीरे कहा—कल रामनारायण को देखकर मुझे इतनी दया आई, मैंने बाद को सोचा कि क्यों ऐसा हुआ तो समझ में आया कि यह दया मैं अपने ही ऊपर कर रहा था, किसी ग़ैर के ऊपर नहीं। मुझे क़रीब-क़रीब ऐसा मालूम हो रहा था जैसे मैं उसे प्यार करता हूँ। थोड़ी देर रुककर जैसे अपने ही अन्दर निरीक्षण करते हुए अरिन्दम ने फिर कहा—चपला, मैं कितना सुखी था, किन्तु मैंने स्वयं ही अपने पैर पर आप कुल्हाड़ी मारी, यह तो ऐसा ही हुआ जैसे अपनी क़ब्र मैंने आप ही खोद ली। काश मैं जितना उदार हूँ इससे कम होता तो आज यह नौबत ही न आती। दया एक कमज़ोरी है, यही मैं देख रहा हूँ···हाय!

चपला रुखाई से बोली—किन्तु आपको कोई नुकसान नहीं हुआ, कम से कम मैं तो नहीं देखती।

अरिन्दम ने क्षितिज की ओर देखते हुए धीरे-धीरे कहा—हाँ, एक माने में ठीक कहती हो। अन्त तक मैं नुकसान में नहीं रहूँगा, अंत तक मेरी ही विजय रहेगी, किंतु शायद विजय तब आवे जब वह मेरे किसी काम की न हो। मुझे भरोसा है कि कोई भी ताक़त मुझे इस विजय से अलग नहीं रख सकती। चपला, तुम जानती हो मैं

ईश्वर में विश्वास नहीं करता, किंतु एक चीज है equilibrium —भारसाम्य उसमें विश्वास रखता हूँ। लाखों टन के ग्रहगण इसी भारसाम्य की बदौलत बिल्कुल शून्य में लटकते रहते हैं। यह एक वैज्ञानिक सिद्धान्त है। यह ईश्वर का कोई नया नाम नहीं है। जैसे तीन टाँग की खटिया पर कोई सो नहीं सकता, उसी तरह तुम्हारी-हमारी यह अवस्था ज्यादा दिन चल नहीं सकती। सम्भव है इस प्रकार मैं अपने को तसल्ली देता रहता हूँ, संभव है यह भारसाम्य मानवीय सम्बन्धों में न हो, केवल आकाश ग्रहों में ही यह सिद्धान्त हो, किन्तु फिर भी मुझे तसल्ली की ज़रूरत है। आख़िर मैं भी आदमी हूँ। ठीक है मैं पामीर की सैर कर चुका हूँ, तिब्बत में प्रकृति का नग्न से नग्न रूप देख चुका हूँ, उसका सामना कर चुका हूँ, भुगत चुका हूँ, किन्तु इस कष्ट को मैं सहने में असमर्थ हूँ। देखो चपला आज जिस नाटक का अभिनय तथा प्रकाशन होने जा रहा है, कल से जिसकी सैकड़ों समालोचनायें पत्रों में निकलेंगी, तुम्हें स्मरण होगा कि किस प्रकार की परिस्थितियों में लिखा गया है, किस प्रकार उसका प्रारभ हुआ था।

—हाँ। चपला ने संक्षिप्त रूप से कहा

—तुमने मेरे साथ अभिनय करना चाहा, इसलिए मैंने यह नाटक लिखा, किन्तु तुमने नाटक को पढ़ा तक नहीं। तुमने अभिनय से इन्कार किया, खैर जाने दो। इन सब बातों को छोड़ दो, किन्तु अब तो तुम्हें हमारे यहाँ आने के लिये समय तक नहीं मिलता.......

—मिस बैनर्जी के मारे आफत रहती है, कहीं आना-जाना दूभर हो गया है। चपला ने शिकायत करते हुए कहा।

—ठीक! मिस बैनर्जी की वजह से तुम नहीं आती। वह अब तुम्हारी गार्जन हो गई, पहिले वह बड़ी अच्छी थी, क्यों है न चपला? तुम्हारे क्वार्टरों के नियम पहिले जो थे वे अब भी हैं। पहिले तुम्हें

लोगों ने बदनाम किया था याद है, किन्तु तुमको कोई परवाह नहीं थी। जितना लोग बदनाम करते थे, उतना ही तुम उसकी अवज्ञा करती थी। और अब ?

चपला के स्कूल का समय हो रहा था, किन्तु उसे उठने का साहस नहीं हो रहा था। उसके लिये अच्छा हुआ कि इस समय किशोर आ गया। उसने आते ही चपला से कहा—वाह चपलाजी, आप खूब जी चुरा रही हैं ! खैर अब आ गईं, चलिये, कुछ काम कीजिये।

चपला घड़ी की ओर देखकर उठती हुई बोली—ओह ! मुझे स्कूल की देरी हो जायगी—फिर नम्रता से बोली—नहीं भाई, मैंने तो छुट्टी नहीं ली, नहीं आ सकती।

किशोर ने कहा—अच्छी बात है, शाम को सीधे स्कूल से अभिनय स्थल पर आइये।

—अच्छी बात है—कहकर घड़ी की ओर देखती हुई दोनों से नमस्तेकर चपला जल्दी से निकल गई।

स्कूल में उसकी तबियत नहीं लगी तो उसने तीसरे घंटे में छुट्टी ले ली और सीधे सुप्रकाश के घर पहुँची।

सुप्रकाश ने ही शुरू किया—कहो।

—चल रहे हो न ?

—कहाँ ? सुप्रकाश ने कहा।

—नाटक देखने, और कहाँ।

—मालूम होता है नहीं, क्योंकि अभी तक कोई निमन्त्रण नहीं मिला—सुप्रकाश ने कहा, लेकिन यह बात झूठी थी, उसे स्वयं अरिन्दम का भेजा हुआ पत्र और पास मिला था।—इसके अलावा मेरे सिर में दर्द है, तुम जाओ···।

—जाऊँगी लेकिन तुमको लेकर, इसीलिये मैं छुट्टी लेकर जल्दी आई। यह किसी की भयंकर ग़लती है कि पत्र तुमको नहीं मिला, अरिन्दमजी ने तुम्हें पत्र ज़रूर भेजा होगा।

सुप्रकाश ने रुखाई से कहा—हाँ-हाँ, उनसे ग़लती नहीं हो सकती, लेकिन उन्होंने जान-बूझकर न निमन्त्रण भेजा हो तो ? तुम्हींने तो बीसियों दफे कहा है कि वे मुझसे तुम्हारे कारण जलते हैं।

चपला ने इस "तुम्हींने कहा था" को पसन्द नहीं किया। कहा—हाँ, लेकिन फिर भी वे निमन्त्रण-पत्र ज़रूर भेजते, बल्कि सबसे पहिले भेजते।

—ग़लत, भेजते तुम कह रही हो, किंतु मैं तथ्य की बात कह रहा हूँ नहीं भेजा।

चपला भी ज़िद में आ गई, उसने कहा—यह कैसे कह सकते हो कि नहीं भेजा, तुम इतना ही कह सकते हो नहीं मिला। तुम कहो तो मैं पूछ कर बताऊँ ?

—नहीं, कोई ज़रूरत नहीं, वे अच्छे हैं, मैं ही नीच हूँ, तुम जाओ—कहकर जो बात सुप्रकाश ने की उससे चपला को बहुत ही आश्चर्य हुआ। सुप्रकाश उस दिन की तरह फिर फूट-फूटकर रोने लगा। अब अक्सर सुप्रकाश इसी तरह ज़रा-सी बात में ही रो पड़ता था।

चपला खड़ी हो गई, उसको दुःख हो रहा था कि उसने क्यों इस प्रकार सख्ती के शब्द व्यवहार किया। उसने कहा—प्रकाश, छिः, यह क्या ? तुमको नीच मैंने कब कहा ?

सुप्रकाश कुछ न बोला, रूमाल से आंसू पोंछता रहा। बोला—तुम अभिनय देखने जाओ, मेरे सिर में दर्द है, मैं नहीं जा सकता।

—तुमको चलना पड़ेगा, तुम न चलोगे तो मैं भी नहीं जाऊँगी।

सुप्रकाश कुछ देर तक चपला की ओर देखता रहा, फिर बोला—तो फिर भाग चलना तय है न ?

—क्यों नहीं ? ज़रूर, मेरी भी तबियत यहाँ नहीं लगती।

थोड़ी देर में चपला सुप्रकाश का सिर दबाने लगी, सुप्रकाश ने आँखें बन्द कर लीं।

—१८—

नाटक का अभिनय बनारस की एक बड़ी नाट्यशाला में होनेवाला था। पहले पढ़े-लिखे लोग हिन्दी नाटक का नाम सुनते ही नाक-भौं सिकोड़ने लगते थे, किन्तु अब बोलपटों की सफलता के कारण ही हो या बढ़ती हुई मातृभाषाभक्ति के कारण ही हो, लोगों में हिन्दी नाटकों बल्कि भारतीय अभिनय-कला पर श्रद्धा हो चली थी। फिर नाटक लिखने में अरिन्दम की ख्याति दूर-दूर तक फैल गई थी, इसलिये अरिन्दम के इस नाटक के अभिनय के लिये लोगों में उत्सुकता थी। लोगों को इस अभिनय के सम्बन्ध में कुछ धारणा नहीं थी कि वह कैसी रहेगी, किंतु एक विषय में लोगों को पक्का विश्वास था कि यह नाटक अच्छा रहेगा। अभिनेता के रूप में किशोर या रूपकुमारी की कोई ख्याति नहीं थी, किन्तु कुछ पार्टों में कुछ ऐसे व्यक्ति उतरनेवाले थे जिनको प्रांतीय ख्याति का अभिनेता कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त अभिनय के उद्योक्ताओं ने लोगों को आकर्षित करने के लिये एक भारत प्रसिद्ध नृत्यकला विशेषज्ञा को इस मौके के लिये बुलाया था जिससे इस अभिनय की बड़ी धूम थी। फिर अभिनय के देखने में कोई टिकट तो रक्खा ही नहीं गया था। गाँठ से पैसे जब देने पड़ते हैं तभी जनता अधिक बाल की खाल निकालनेवाली बन जाती है।

मूल नाटक में कोई नाच नहीं था, किन्तु यह किशोर के ज़रखेज दिमाग की उपज थी कि उसने इसमें नृत्य भी मिला दिया था। अरि-न्दम ने इस बात पर बड़ी आपत्ति की, और अन्त तक लड़ा, लेकिन किशोर ने एक न सुनी। उसने कहा—आप डरें नहीं, आपकी कला का इसमें अपमान नहीं होगा—इत्यादि-इत्यादि। एक तरह से जबर्दस्ती ही अरिन्दम को यह अनुरोध मानना पड़ा। अरिन्दम चाहता था कि कला की दृष्टि से चीज अच्छी हो, चाहे लोग कम ही आवें लेकिन किशोर चाहता था भीड़ खूब हो, खूब तालियाँ पिटें, अख़-

बारों में खूब चर्चा हो। खैर सारी बात किशोर ही पर छोड़ दी गई थी, इसके अतिरिक्त अरिन्दम को किशोर की कला-बुद्धि पर पूर्ण विश्वास था कि वह एक हद तक ही अपने अन्दर के प्रचारक के साथ रियायत कर उतरेगा।

नाटक का अभिनय नौ बजे से शुरू होनेवाला था, आठ बजे से ही हाल क़रीब-क़रीब भर गया था। किशोर आदि जिनका अभिनय में भाग था वे तो सन्ध्या के पहिले से ही डटे हुए थे। बाहर जो लोग थे, इन्तजाम उनके सिपुर्द था, वे इसी में लगे थे। अरिन्दम के लिये आज का दिन बड़ा महत्त्वपूर्ण था, वह इधर से उधर टहल रहा था, उसके चेहरे पर गहरी बेचैनी थी। किन्तु जरा ध्यान से देखने पर मालूम होता था कि अरिन्दम अभिनय के लिये बेचैन नहीं था, यद्यपि जो लोग उसे ऐसी हालत में देखते थे वे ऐसा ही समझते थे। वह फाटक के पास इधर-उधर टहलता, पीछे देखता, आगे देखता जैसे किसी को इस भीड़ में खोज रहा हो। कोई भी औरत को दूर से आते देखकर वह उसकी ओर ध्यान से देखता, लेकिन जब उसे निश्चय हो जाता कि यह वह नहीं है जिसकी तलाश में वह है तो वह निराश हो जाता। दूसरे मिलनेवालों से वह सूखी हँसी हँसकर संक्षिप्त रूप से मिलता, फिर बात किसी तरह ख़तमकर उसी तरह विक्षिप्त की भाँति टहलता, और प्रतीक्षा करता। अरिन्दम बीच-बीच में ग्रीन रूम में भी हो आता, किन्तु इसलिये नहीं कि अभिनय की क्या-क्या तैयारी हो चुकी है जानें, बल्कि इसलिये कि कहीं चपला किसी तरह उसकी आँख से बचकर ग्रीन रूम में आकर बैठी न हो।

ग्रीन रूम में जब इसी तरह अन्यमनस्क हालत में अरिन्दम एक बार आया तो रूपकुमारी को रानी के वेश में पाया। रूपकुमारी औरों के पास से हटकर अरिन्दम के पास आई और बोली—कहिये मैं अब कैसी मालूम होती हूँ?

उसको सिर से पैर तक पहिले ही दफे देखकर अरिन्दम ने कहा—

बहुत ही अच्छी—, किन्तु साथ ही उसको स्मरण हो आया कि चपला को इस जगह होना चाहिये था, उसीके कहने पर यह नाटक लिखा गया था।

रूपकुमारी ने तृप्ति की हँसी हँसते हुए कहा—तो मैं आपको अच्छी लगती हूँ ?—वह अरिन्दम के और करीब आ गई।

—हाँ। संक्षिप्त रूप में अरिन्दम ने कहा, किन्तु थोड़ी देर सोचकर बोला—किन्तु रूपकुमारी, आज तो तुम्हें मुझे ही अच्छी नहीं लगनी है, आज तो तुम्हें हजारों आदमियों के सामने अच्छी लगनी है...

—हाँ—गंभीरता के साथ रूपकुमारी बोली—किन्तु मेरे लिये शायद यह हजारों आदमी से एक आदमी के सामने अच्छी लगना ही अधिक महत्त्वपूर्ण हो।

अरिन्दम ने अपनी कलाई की घड़ी की ओर देखा, तो देखा नौ बजने में केवल पन्द्रह मिनट थे। वह घबड़ाया, जल्दी से आगे बढ़ा, और रूपकुमारी के कन्धे पर हाथ रखकर बोला—जाओ जाओ, अब तुम रूपकुमारी नहीं हो, रानी मेनका हो—फिर वह अभिनेताओं के गोल में घुस गया, और हरएक से कम से कम बातचीत करके बाहर निकल गया।

फिर से अरिन्दम ने चपला को ढूँढ़ना शुरू किया। वह ऐसी-ऐसी जगह पर उसे ढूँढ़ता रहा जहाँ यदि वह बिलकुल सही दिमाग में होता तो कभी न ढूँढ़ता। भला चपला जाकर मामूली दर्शकों में क्यों बैठती जब उसे विशेष दर्शक का पास मिला हुआ था। लेकिन नहीं अरिन्दम ने हाल को ही नहीं, बल्कि बाहर आस-पास की दूकानों के सामने भी ढूँढ़ डाला कि शायद चपला वहाँ हो। किंतु चपला कहीं नहीं थी।

नौ भी बज गये, और अब अभिनय शुरू हो गया। अरिन्दम आकर धम से उसके लिये निर्दिष्ट कुर्सी पर केवल एक भद्रता या शिष्टाचार के कारण बैठ गया। उसका मन कहीं और था। पहिले ही दृश्य में रूपकुमारी अपनी सखियों के साथ आई, अरिन्दम को शक

हुआ रूपकुमारी ने उसकी ओर देखा, फिर वह अपना निर्दिष्ट पार्ट बड़ी तत्परता के साथ अदा करने लगी। रूपकुमारी आज वाक़ई बड़ी सुन्दर मालूम हो रही थी। अभी अरिन्दम उसे ग्रीन रूम में देखकर आया था, किंतु अब वह रोशनियों के सामने उससे भी सुन्दर मालूम दे रही थी। अरिन्दम ने एकाएक अनुभव किया कि वह, वही इस नाटक का रचयिता है जिसका ये अभिनय कर रहे हैं और उसका हृदय गर्व से भर गया। चपला के न आने का दुःख, बल्कि हार को वह भूल गया, और अभिनय की ओर देखकर उसे जैसे एकाएक यह अनुभव होने लगा कि जीवन उससे कहीं बड़ा है जितना उसने सोचा था। माना कि इसमें एक चीज़ बड़ी महत्त्वपूर्ण है, किंतु यथासाध्य कोशिश करने पर भी जब यह चीज़ प्राप्त नहीं होती तो इसका यह अर्थ नहीं कि जीवन बेकार हो गया। जीवन इससे कहीं बड़ा है, मधुर है, पवित्र है, विस्तृत है। जीवन की इस विशालता की अनुभूति से वह जैसे एक नया आदमी हो गया, उसने जैसे अपनी प्रबल इच्छा शक्ति के ज़ोर पर कहा, नहीं हम दुखी नहीं होंगे, हो नहीं सकते। अपना लिखा हुआ नाटक देखते-देखते जीवन का जैसे उसे एक नया तरीक़ा ही मालूम हो गया।

किंतु जब उसने अभिनय करते हुए किशोर को देखा, उसके बगल की लीलामयी रूपकुमारी को देखा, तथा अपने बग़ल की दो ख़ाली कुर्सियों को देखा, जिनमें से एक में चपला और दूसरे में यदि वह संग में लाती तो सुप्रकाश बैठता, साथ ही जब उसने नाटक की उत्पत्ति को सोचा तो उसका मन दुखी हो गया, और पहिले से अधिक दुखी हो गया। ओह, उसके लिये यह कितने दुःख की बात थी कि चपला वादा करके भी नहीं आई। उसने नाटक को पढ़ा नहीं, उसके अभिनय में भाग नहीं लिया, और अब वह अभिनय के दिन भी उपस्थित नहीं हुई। अरिन्दम का सारा क्रोध सुप्रकाश पर गया। इसीने तो इस दूध की धुली हुई चपला को इस प्रकार गिरा

दिया। अब वह उसके मायाजाल में पड़कर इतनी गिर गई। चपला के वादों पर उसे अब कोई विश्वास नहीं था, वह शायद अब झूठ बोलती थी, किंतु वह सोचते-सोचते ठहर गया। क्या वह सचमुच दूध की धुली है, या रामनारायण की बात ही सच थी? दो से बिगाड़ी गई, दो को बिगाड़ा। सुप्रकाश कहीं तीसरा तो नहीं है? उसका पल्ला छोड़कर वह सुप्रकाश के पल्ले जा गिरी, वह इसलिये तो नहीं कि उसने उस हद तक गिरने से इन्कार किया जिस हद तक वह उसे गिराना चाहती थी? अरिन्दम का दिल धक् से हो गया, और एक हाहाकार से उसका हृदय भर गया।

सामने अभिनय होता रहा। एक के बाद एक दृश्य उसके सामने आता, किंतु वह अपने ही विचारों में मग्न था। यह नहीं कि वह बिल्कुल ही कुछ नहीं देखता था, किंतु वह सिलसिले से कुछ नहीं देखता था।

इस प्रकार अरिन्दम दो नाटकों को एक साथ देख रहा था, एक तो उसके सामने हो रहा था, दूसरा उसके अंदर चल रहा था। एक नाटक का वह स्रष्टा था, किंतु दूसरा नाटक शायद उसीका स्रष्टा था। एक में वह अभिनेता होते-होते रह गया, दूसरे में वह अभिनेता होने के लिये बाध्य था। एक का स्रष्टा होने पर भी वह अब दूर से बैठकर उसको देख रहा था, किंतु बैठे रहते हुए भी दूसरे नाटक में वह बराबर ज़ोरों के साथ अभिनय करता जा रहा था। इन दोनों नाटकों का सम्मिश्रण ही इस समय उसका जीवन था, और यह जीवन बड़ा जटिल था।

एक के बाद एक दृश्य का अभिनय समाप्त होता जाता था। अभिनय अच्छा ही हो रहा था। सभी लोग ऐसा ही कह रहे थे। जब ड्रापसीन होता था उस समय बहुत से लोग उसकी ओर उँगली उठाकर बात करते थे, वह जानता था वे लोग क्या कह रहे हैं। वह

जानता था वे लोग कह रहे होंगे कि यही इस नाटक के लेखक हैं। साथ ही वे लोग उसके सम्बन्ध में प्रिय-अप्रिय हर तरह की चर्चा कर रहे होंगे। ऐसे समय में जब वह जान लेता था कि चारों तरफ के लोग उसके सम्बन्ध में बातचीत कर रहे हैं, तो उसे एक तरह की अनुभूति होती थी जिसे शायद खुशी न कहकर आत्मप्रसाद कहना ही अधिक उपयुक्त होगा, किंतु इस समय उसे एक प्रकार की लज्जा ही मालूम हो रही थी। काश ऐसी मानसिक अवस्था में वह एक ऐसे आदमी की भाँति यहाँ बैठ पाता जिसे कोई नहीं देख रहा है, जिसे कोई नहीं जानता, तो शायद उसे अधिक तृप्ति मिलती। वह इस समय यही चाहता था।

सामने जो यह जगत् था, जिससे हज़ारों व्यक्ति इस समय आनन्द ग्रहण कर रहे थे, वह उसीका बनाया हुआ था। उसीके रचित नाटक के उपलक्ष्य में ही इस जगत् की सृष्टि हुई, किंतु कभी उसे इस प्रकार की बात से खुशी होती हो, आज नहीं हो रही थी। कई हज़ार आदमियों के बीच में बैठकर भी वह अपने को अकेला अनुभव कर रहा था, इतनी भरी हुई कुर्सियाँ उसे नहीं दिखाई दे रही थीं, उसे तो अपने बगल की खाली कुर्सियाँ ही दिखाई दे रही थीं, और वे उसको अखर रही थीं। बार-बार यही प्रश्न उसके मन में आता था, चपला भला क्यों नहीं आई, उसने तो आने का वादा किया था। उसके न आने का जिम्मेदार जरूर वही सुप्रकाश था। उसका सारा क्रोध बार-बार उसी के ऊपर पड़ रहा था। जरूर उसने कोई ऐसा ढोंग रचा होगा जिसके भँवर में फँसकर चपला नाटक देखने भी नहीं आई। शायद सुप्रकाश ने चपला को यह समझा दिया हो कि नाटक का अभिनय स्थगित कर दिया गया, उसकी तरह आदमी के लिये कुछ भी असंभव नहीं है।

यह बात याद आते ही कि चपला इस प्रकार एक नारकीय षड्यंत्र की शिकार होकर यहाँ नहीं आई है वह उठ खड़ा हुआ,

उसका अभिप्राय था कि चपला के पास जाकर वह इस षड्यन्त्र का राज़ फाश कर दे, किन्तु उठ खड़े होते ही सारी परिस्थिति अपनी रूढ़ वास्तविकता में उसके सामने आ गई, और वह धम से अपनी कुर्सी पर असहाय की तरह बैठ गया। नहीं, वह चपला के यहाँ जा नहीं सकता, मिस बैनर्जी क्या कहेगी ? वह तो सामने के ही क्वार्टर में रहती है, और बड़ी संदिग्ध स्वभाव की है। चपला ही क्या सोचेगी ? शायद उसकी इस कमजोरी से चपला के दिल में उसके प्रति जो रही-सही श्रद्धा है वह भी जाती रहे। फिर कहीं सुप्रकाश वहाँ छिपा हुआ बैठा हो तो फिर मन-ही-मन वह कैसा हँसेगा ? नहीं, वह कमजोरी कभी नहीं दिखायेगा, चाहे कुछ भी हो जाय। वह जबर्दस्ती अपना मन अभिनय में लगाने लगा, किन्तु उसका मन अभिनय में न लगकर बराबर भटकता ही रहा।

खेल धीरे-धीरे अपनी परिणति की ओर जा रहा था। जितना ही खेल आगे बढ़ता जा रहा था, उतना ही अरिन्दम पर आतंक-सा छाता गया। हाँ, वह दृश्य जिसमें नायक-नायिका को चूमनेवाला था, वह आ रहा था। इस दृश्य को अरिन्दम ने जान-बूझकर रक्खा था ताकि....। यह दूसरी बात है कि यह चुम्बन का दृश्य अप्रासंगिक नहीं था, बल्कि यह दृश्य नाटक में बिल्कुल फिट बैठता था, किन्तु अरिन्दम ने जिस उद्देश्य से इस दृश्य को रक्खा था वह क्या था यह अरिन्दम ही जानता था। एक चुम्बन के लिये उसने प्रायः एक वर्ष तक अपनी कलात्मिका सृष्टिशक्ति को भयंकर रूप से जोता था। आज वह दिन था जब उसका स्वप्न बिना आत्मप्रकाश किये पूर्ण होता, किन्तु आज चपला कहाँ थी। वह शायद सुप्रकाश के साथ थी। फिर सुप्रकाश के ऊपर उसका सारा क्रोध गया।

अन्त में वह दृश्य भी आया। अरिन्दम ने उसे साहस के साथ सहा जैसे कोई किसी विपत्ति को सहता है, और उसके मन में एक हाहाकारी श्मशान-सा हो गया। हाय, यह मौक़ा जिस पर वह कितनी

आशा बाँधे हुए था, वह तो गया। कभी वह नहीं लौटेगा। कभी नहीं। अरिन्दम ने अनुभव किया कि उसकी ज़िन्दगी घट रही है, वह जैसे बूढ़ा हो रहा है। अब मृत्यु के दिन तक यह मौक़ा कभी नहीं आयेगा। काश चपला इस बात को इस तरीक़े से समझती तो शायद वह ऐसा कभी नहीं करती। यह आशा अभी अरिन्दम के मन में बाक़ी थी, यद्यपि इसका कोई कारण नहीं था।

अभिनय समाप्त होने के बाद अरिन्दम को लोगों ने बधाई दी, अरिन्दम ने भी जाकर किशोर, रूपकुमारी आदि को अभिनय की सफलता के लिये बधाई दी। किशोर ने कहा—नहीं, हमने तो कुछ भी नहीं किया, हमने तो केवल आपके विचारों को मूर्त करने की कोशिश मात्र की।

रूपकुमारी ने बधाई के उत्तर में कहा—मैंने जब-जब आपकी ओर देखा तब-तब आपको कुछ अप्रसन्न पाया। मैं तो समझी कि आपको अभिनय पसन्द नहीं आ रहा है, किन्तु अब आपसे मालूम हुआ कि आपको भी पसन्द आया। यह हमारे लिये बड़ी खुशी की बात है।—थोड़ी देर ठहरकर वह बोली—यह बताइये आपको मेरा अभिनय पसन्द आया कि नहीं?—कहकर वह ज़रा मटक गई।

अरिन्दम ने इस बचपन भरे प्रश्न को सुनकर हँसा, उसने कहा—तुम तो बड़ी साम्यवादिनी बनती थी, अब तुम ऐसे व्यक्तिवादी प्रश्न क्यों पूछ रही हो? तुम्हें तो सामूहिक सफलता को ही अपना लक्ष्य समझना चाहिये।

रूपकुमारी फिर भी नहीं मानी, उसने फिर उसी प्रश्न को दुहराया, और अब की बार और भी आग्रह के साथ पूछा। अरिन्दम ने कहा—छिः रूप! कल यह बातचीत होगी। जाओ अब घर जाओ, सोओ।

इस पर वह मान गई। अरिन्दम थोड़ी देर बाद लुढ़कता हुआ अपने घर पहुँचा। नरेन्द्र उसके साथ था, वह रास्ते भर अभिनय के

बारे में सैकड़ों बातें कहता रहा, लेकिन अरिन्दम ने बातों का हाँ ना के सिवा कोई उत्तर नहीं दिया। वह भयंकर रूप से सोच रहा था।

—१६—

दूसरे दिन के अखबारों में जब चपला ने अभिनय के बारे में पढ़ा तो उसे एकाएक बड़ी ग्लानि हुई, उसका सारा मन उसे धिक्कारने लगा। उसे अनुभव हुआ कि जैसे उसने एक बड़ा भारी विश्वासघात किया है, किन्तु यह आत्मग्लानि जितनी ही बढ़ती गई, अरिन्दम के यहाँ जाने का रास्ता भी उतना ही उसे बन्द होता हुआ मालूम पड़ने लगा। यह इतनी बड़ी भूल थी कि चपला को भी भूल मालूम पड़ने लगी, और उसने देखा कि उसके और अरिन्दम के बीच में इसके फलस्वरूप जो खाई पैदा हो गई वह पाटी नहीं जा सकती। उसे याद हो आया इस दिन को अरिन्दम कितना महत्त्वपूर्ण समझता था, और इस पर कितने दिनों से आशा लगाये हुए था। वह समझ सकती थी अरिन्दम को इस पर कितनी निराशा हुई होगी। वह जानती थी कि अरिन्दम के लिये सारा अभिनय ही नष्ट हो गया होगा। जितना ही वह इन बातों को सोचती, उतना ही वह डरती। नहीं, अब अरिन्दम के यहाँ जाना नहीं हो सकता। किस मुँह से वह जायगी। फिर अरिन्दम तो एक व्यक्ति नहीं है, उसके साथी उसे क्या कहेंगे? किशोर क्या कहेगा, रूपकुमारी क्या कहेगी, राजनारायण, नरेन्द्र आदि क्या कहेंगे? अवश्य ही सभी ने यह बात देखी होगी कि वह अभिनय में नहीं गई।

चपला दो दिन तक इसी पशोपेश में पड़ी रही कि वह जाय या न जाय, अन्त तक उसने निर्णय किया कि वह अरिन्दम के यहाँ नहीं जायगी। सुप्रकाश ने उसके अन्दर चलनेवाले इस द्वन्द्व को ताड़ लिया, वह दिन-रात जहाँ तक हो सके उसके पास रहने लगा। सुप्रकाश

को चपला के शरीर की ज़रूरत नहीं थी, किन्तु अपनी विजय कहीं पराजय में परिणत न हो जाय इसलिये उसने चपला को गिरा दिया। इसके लिये उसे अधिक आयास स्वीकार करना नहीं पड़ा, गत कई महीनों के लगातार आन्तरिक द्वन्द्व के कारण चपला इतनी दुर्बलचित्त हो चुकी थी कि उसमें इच्छाशक्ति प्रायः लुप्त हो चुकी थी। अपनी इस विजय को क़ायम रखना ही सुप्रकाश का ध्येय हो गया, इसलिये उसने बहुत-सी बातें ऐसी करनी शुरू कीं जो साधारण तौर पर उसके स्वभाव के विरुद्ध थीं। उदाहरण-स्वरूप सुप्रकाश कभी किसी को कोई उपहार नहीं देता था, किन्तु अब वह बात-बात पर चपला के लिये उपहार देता था। यह उपहार पुस्तक, खाद्यद्रव्य तथा अन्य अनेक रूप में होता था।

चपला स्कूल में अब भी नियमित रूप से पढ़ाती थी, किन्तु सबेरे से शाम तक उसका ध्यान एक सुप्रकाश ही पर लगा रहता था। सुप्रकाश के साथ के अलावा वह जितना भी समय बिताती थी, वह सब उसकी आँखों में समय का अपव्यय मालूम होता था। इस अपव्यय को वह हृदय के एक-एक तन्तु से अनुभव करती थी। अरिन्दम की बात याद करते ही उसके हृदय में एक अशान्ति सुलग उठती थी, किन्तु सुप्रकाश के साथ होते ही उसके सारे दुःख तथा सारी उधेड़बुनें जाती रहती थीं। चपला के सामने अब प्रश्न यों उपस्थित हुआ था, अरिन्दम या सुप्रकाश; चपला ने इसका उत्तर दिया था सुप्रकाश। किन्तु ऐसा उत्तर देते हुए उसे दुःख हुआ था, इसमें कोई संदेह नहीं। उसका हृदय कभी-कभी बैठने लगता था, किंतु अब लौटने का रास्ता नहीं था। वह पीछे देखता था तो उसे मालूम पड़ता था कि अब लौटने का रास्ता कट चुका है। विशेषकर अभिनय में अनुपस्थिति के बाद से। वह अब अपने क्वार्टर से सीधा स्कूल जाती थी, और वहाँ से सीधा अपने क्वार्टर में जाती थी, कहीं रास्ते में अरिन्दम से या उसके किसी चेले से भेंट न हो जाय इस डर

के मारे वह कहीं नहीं जाती थी। सुप्रकाश मिस बैनर्जी की आँख बचाकर उससे वहीं मिला करता था, और सच बात तो यह है मिस बैनर्जी देखकर भी कुछ नहीं कहती थीं अनिच्छा होते हुए भी चश्मपोशी करती थीं।

उधर अरिन्दम ने भी ज़िद पकड़ ली थी, उसने एक दफे भी कोई सन्देशा या चिट्ठी नहीं भेजी। नाटक का जनता में बहुत स्वागत हुआ था, यश और वित्त दोनों उसकी ओर आ रहे थे, किन्तु वह असुखी था। मजे की बात है कि उसके आसपास के किसी ने भी इसका असली कारण नहीं ताड़ पाया। अरिन्दम को लोगों ने अभिनय के दूसरे दिन से ही बीमार पाया, अरिन्दम ने इसकी वजह बतलाई कि रात जागने से कुछ ठण्ड लग गई है। लोगों ने इसे मान लिया, सब अपने-अपने अभिनय की सफलता पर इतने मुग्ध तथा उल्लसित थे कि उन्होंने इस बीमारी की गहराई तक जाने को ज़रूरत नहीं समझी। इस बीमारी पर रूपकुमारी ने सबसे ज्यादा चिंता प्रकट की, किन्तु जब अरिन्दम ने उसे समझाया यह कोई बात नहीं है तब उसको तसल्ली हुई।

कई ने अरिन्दम से चपला के विषय में पूछा तो अरिन्दम ने कहा—मेरा तो ख्याल है वह कहीं बाहर चली गई होगी, कोई बहुत ज़रूरी काम पड़ गया होगा। भाई बीमार न पड़ गया हो।

इस प्रकार अरिन्दम ने पूछनेवालों का मुँह तो बन्द कर दिया, किन्तु उसने अपने अन्दर उठनेवाले सैकड़ों सन्देहों का इस प्रकार मुँह नहीं दबा पाया। वे उसी प्रकार उठते रहे, और उनके मारे उसका जीवन असहनीय हो गया। अरिन्दम की बीमारी जारी रही, न बढ़ी न घटी। कई बार उसको इच्छा हुई कि चपला को खबर भेजे, किन्तु वह भी ज़िद्दी था। उसने खबर भेजने से इन्कार किया। उसने मन में कहा क्या मैंने कोई क़सूर किया है, उसी ने वादा तोड़ा

है, झूठ बोला है, वही आवे। आख़िर एक बात की हद होती है, मैंने पचासों दफे उसे समझाया, गिड़गिड़ाया, किन्तु कुछ नहीं। सब व्यर्थ हुआ। वह इस लायक है कि उसका मुँह न देखा जाय। आख़िर रूपकुमारी किस बात में उससे कम है?—इस प्रकार की बातें सोचकर वह चपला के विरुद्ध क्रुद्ध होता। इस क्रोध के आवेश में वह उठकर नरेन्द्र के पास जाता। ज़ोर से कहता—नरेन्द्र, अब मैं अच्छा हो गया, लाओ कुछ खाने को है...

नरेन्द्र उसके मुँह की ओर देखता फिर शायद एक परोठा बनाकर थोड़ी मिठाई के साथ उसे देता, अरिन्दम बड़े उत्साह से उसे खाना शुरू करता, और चिल्ला-चिल्लाकर कहता जाता—समझे नरेन्द्र, जीवन में वे लोग टिक नहीं सकते जो एक हानि को लेकर उसी पर वर्षों अफसोस करते रहते हैं। प्रकृति के यौवन तथा नवीनता का रहस्य यह है कि वह अपने अन्दर के अप्रयोजनीय तथा हानिकर अंश को कभी दुलारती नहीं; बल्कि उसे बात की बात में नष्ट कर देती है।

नरेन्द्र कुछ भी नहीं समझता, कहता—थोड़ा अचार दूँ?

अरिन्दम कहता—ज़रूर दोगे—और लगता फिर इसी तरह की बातें हाँकने—जानते हो नरेन्द्र, हमारे जीवन का सबसे बड़ा दोष क्या रहा है कि हम अतिभावुक हैं, हम किसी से अपने को आसानी से अलग नहीं कर पाते। हम इसीलिये दुःख पाते हैं।—इत्यादि।

नरेन्द्र सुनता जाता, स्टोव में फिर से हवा भरता, और एक दूसरा परोठा अरिन्दम के प्लेट पर डाल देता, किन्तु यह क्या डेढ़ परोठा खाने के पहिले ही अरिन्दम गंभीर हो जाता। केवल उसकी बातें ही बन्द नहीं हो जातीं, बल्कि उसका हाथ भी शिथिल हो जाता। अन्त में वह पानी का गिलास हाथ में लेकर कहता—नहीं नरेन्द्र, अब मुझमें यौवन की कर्मशक्ति नहीं रही, कुछ नहीं रहा। जिस

मानसिक शक्ति की बदौलत मैं मध्य एशिया की प्रकृति की कठोरता तथा हर तरह की तकलीफ़ बर्दाश्त कर सका वह अब नष्ट हो गई—उसका स्वर भी अजीब शिथिल हो जाता, उसकी दृष्टि में उदासी आ जाती, एक घूँट, दो घूँट, तीन घूँट पानी पीकर वह एकाएक हाँफता हुआ उठ खड़ा होता और कहता—नहीं, अब खा नहीं सकता, जाने दो, माफ करना—वह चल देता।

नरेन्द्र इसमें माफ करने की कोई बात नहीं पाता, वह अवाक् होकर अरिन्दम की ओर देखता, इस बीच में उसका परोठा जल जाता तो उसे होश आता। अरिन्दम जैसे कुछ बदल गया था, उसे बड़ा आश्चर्य होता। वह फिर अपना काम करता जाता।

किन्तु ऐसा कई बार हुआ। अरिन्दम ने अच्छी तरह कपड़े पहिन-कर नरेन्द्र से पूछा—नरेन्द्र, तुम्हें कुछ काम तो नहीं है?

नरेन्द्र ने आश्चर्य से कहा— नहीं तो।—उसकी समझ में नहीं आया क्या बात है।

अरिन्दम ने नरेन्द्र के हाथ पकड़ते हुए कहा—चलो, हम लोग टहल आवें।

नरेन्द्र को बड़ी खुशी होती, दोनों टहलने निकलते।

गुदौलिया में आकर जिधर एक रास्ता गंगाजी को गया है, दूसरा चपला के स्कूल की तरफ, तीसरा चौक की तरफ़, अरिन्दम एकाएक खड़ा हो जाता, कहता—किधर चलोगे?

—चलिये दशाश्वमेध चलें, वही तो यहाँ एक टहलने की जगह है।

अरिन्दम फिर भी हिचकिचाता, कहता—उधर तो बहुत गये हैं, चलो किसी नई दिशा में चलें।

चौक के रास्ते वे नहीं जाते, अतएव अन्त में वे लकसा की ओर टहल निकलते।

गिर्जे से आगे बढ़कर नरेन्द्र कहता—चलिये उधर चपलाजी का स्कूल पड़ता है, मैं पूछ आऊँगा वह कब बाहर से आयेंगी, आयेंगी या नहीं आयेंगी।

अरिन्दम एकदम रास्ते में अकड़कर खड़ा हो जाता, कहता—देखो तुम्हें अगर यह सब करना है तो जाओ, मैं तुम्हारे साथ नहीं जाता। हम इधर टहलने आये हैं कि किसी के यहाँ मेहमानी करने आये हैं?

क्या करता, बेचारा नरेन्द्र वादा करता कि वह ऐसा नहीं करेगा, किन्तु जिस समय वह उस मकान के पास से जाता उस समय अरिन्दम का सारा अस्तित्व जैसे सुलग उठता, उसकी आँखें नरेन्द्र की आँखों को बचाकर उसकी तलाश करतीं, किन्तु जब कहीं पर चपला दिखाई नहीं देती तो उसका कलेजा धक् से रह जाता। उसकी बातें कम हो जातीं, वह अन्यमनस्क हो जाता, और लौटते समय दोनों एक ऐसे रास्ते से लौटते जिससे यह मकान रास्ते में नहीं पड़ता

इस प्रकार नाटक के अभिनय के बाद दस रोज़ हो गये। अब अरिन्दम कुछ काम नहीं करता था, उसके जीवन का सारा नियम टूट चुका था, एक भयंकर आँधी के बाद एक सुन्दर उद्यान की जो लस्टम-पस्टम हालत होती है वही हालत अरिन्दम की अब थी। सब परिचितों में यह ख़बर हो गई थी कि अरिन्दम बीमार है, क्या बीमारी है किसी को पता नहीं था। रूपकुमारी उसकी सेवा करने का आग्रह करती, किन्तु अरिन्दम उसे पास आने नहीं देता। उसकी घनिष्ठता ज्यों ही वह बढ़ते देखता, त्यों ही वह बीमारी के बहाने आँख मूँदकर पड़ा रहता या नरेन्द्र को बुलाकर बैठालता ताकि रूपा के साथ अकेला न रहे। एक बार उसे अनुभव हुआ कि रूपा को यह उदासीनता खल गई, उसने रूपा को बुलाकर एक बच्ची की तरह पुचकारा।

एक दिन एकाएक सबेरे उठकर उसने नरेन्द्र से कहा—नरेन्द्र, आज मेरा खाना न पके।

—क्यों, कहीं न्यौता है ?

—नहीं, मैं उपवास करूँगा।—अरिन्दम ने कहा।

—दोनों वक्त ?

अरिन्दम हँसा—दोनों वक्त नहीं तो क्या एक वक्त ? क्या पता यह उपवास मुझे कब तक करना पड़े।

नरेन्द्र ने कहा—वाह आपको पता नहीं तो किसको पता ? क्या आप पर उपवास करने की कोई मजबूरी है ?

—नहीं भी और है भी। जब भी हमारी बीमारी हमें महसूस हो फिर। अच्छी हो गई तभी हम उपवास तोड़ देंगे—कहकर अरिन्दम चुप हो गया, फिर बोला—यह एक दिन में भी हो सकता है, दस दिन भी लग सकता है।

अरिन्दम को लोगों ने समझाया कि वह बजाय इस प्रकार के उपवास प्रयोग के किसी डाक्टर से अपनी परीक्षा करावे, किन्तु उसने किसी की नहीं सुनी, और उपवास शुरू हो गया।

सबको अरिन्दम यही कहता रहा कि बीमारी के कारण वह यह उपवास कर रहा है, किन्तु नरेन्द्र से उसने एक असावधान मुहूर्त में कह डाला—उपवास केवल शरीरिक रोगों के लिये ही दवा नहीं है, बल्कि मानसिक अशान्ति के लिये भी अक्सीर है।

नरेन्द्र ने इस पर सन्देह प्रकट किया, तो उसने समझाया—मानसिक कष्ट कितना भी प्रचंड क्यों न हो भूख की ज्वाला के सामने वह धीमा पड़ जाता है। जब शरीर में खलबली मचती है, और क्षुधा की वेदना तीव्र होने लगती है तो भावुकता के लिये गुंजाइश कम होती जाती है।—इसी बात की विशद व्याख्या करते हुए वह बोला—तुमने देखा होगा कि किसी प्रियजन की मृत्यु या वियोग के बाद

लोग शोक में एक दो दिन नहीं खाते, मैं तो समझता हूँ यह अच्छा ही होता है, इस प्रकार भूखे रहने से उन्हें अपना शोक सँभालने में आसानी होती है। इस प्रकार भूखा रहकर मनुष्य अपने अनजान में ही अपने लिये जो सबसे अच्छी बात हो सकती है वह करता है। तुमने यह भी पढ़ा होगा कि भीषण दुर्भिक्ष के दिनों में लोग अपने बच्चों तक को खा गये हैं, तुम कहोगे वे दूसरे किस्म के आदमी थे कि इतने निर्दय हो गये, किन्तु यह बात नहीं। वे साधारण आदमी थे, भूख की भयंकर पीड़ा के कारण सन्तान के लिये उनकी भावुकता जाती रही। बस और कुछ नहीं। यदि उसका पेट भरा होता तो शायद वह उसी सन्तान के लिये मर जाता। "बुभुक्षितः किं न करोति पापं" यह केवल कविता की उड़ान नहीं है, इसकी नींव रोज़मर्रे की हमारी अभिज्ञताओं पर है। सब धर्मों में रिपुओं को दबाने के लिये उपवास बताया गया है, किन्तु इसमें एक ग़लती पैग़म्बरों तथा ऋषियों ने की, वह यह कि भूख की ज्वाला से मनुष्यों की कुप्रवृत्तियाँ जाती रहती हैं तो सुप्रवृत्तियाँ भी जाती रहती हैं।—इस प्रकार वह उपवास पर एक पूरी कहानी ही कह गया।

वह कहता गया—उपवास में खाने की इच्छा प्रबलतर होती जाती है, और सब तरह की इच्छा उसी हिसाब से दुर्बल हो जाती है। एक भूखे व्यक्ति के लिये अच्छे से अच्छा सङ्गीत टीन बजाने से भी बुरा है, वह तो स्वप्न में भी खाने की चीजे ही देखता है—इस प्रकार की और कितनी बातें।

अरिन्दम शायद और भी कुछ कहता, किसी पुस्तक का हवाला देता या किसी वैज्ञानिक की गवाही पेश करता, किन्तु नरेन्द्र ने बीच ही में टोक दिया—तो आपको मानसिक कष्ट है?

अरिन्दम अपने हस्तीदन्तनिर्मित मीनार की उड़ान से जैसे धम से वास्तविकता के समतल पर गिरा, उसको एकाएक ज्ञान हो गया कि

उसने क्या कहा है। इसको अस्वीकार करने का कोई ज़रिया नहीं था, उसने अस्पष्ट तरीके से कहा—हाँ...

उपवास के उपयोग पर वक्तृता देते हुए उसके चेहरे पर जो तृप्ति की आभा आ गई थी, वह एक क्षण में ही जाती रही, और उसके चेहरे पर फिर से पिरामिडों की उदासी छा गई। वह एक अद्भुत दृष्टि से क्षितिज की ओर घूरने लगा, मालूम होता था उसे अपने राज़ खुल जाने पर आश्चर्य है, दुःख या क्षोभ नहीं।

नरेन्द्र इस परम दुर्बल तथा परम सबल व्यक्ति के चरित्र में दिलचस्पी रखता था, उसकी दिलचस्पी और बढ़ गई। उसने एकाएक पूछा—चपलाजी बहुत दिनों से नहीं आईं।

—हाँ—अरिन्दम ने नरेन्द्र के चेहरे को ध्यान से देखा जैसे ताड़ने की कोशिश कर रहा हो कि इसका मतलब क्या है?

नरेन्द्र ने बिना कोई हिचकिचाहट से कहा—चपलाजी जब से कम आती हैं तभी से आपकी तबियत ख़राब है—फिर किसी प्रकार की प्रतीक्षा न करके उसने कहा—अच्छा, मैं आज चपलाजी को बुला लाऊँगा तब तो आप खायेंगे न?

अरिन्दम ने पहले तो कहा कि उसके उपवास से चपला के आने न आने का कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता, फिर उसने स्वीकार कर लिया। जब उसने स्वीकार कर लिया तो सभी बातें साफ-साफ कह दीं। नरेन्द्र सुनकर गंभीर हो गया, उसने कहा—तो चपलाजी को बुला लायें?

अरिन्दम ने इसके उत्तर में एकदम ना कर दिया। वह बोला—देखो नरेन्द्र, मेरे अन्दर यह संघर्ष महीनों से चल रहा है. मैं इसे अब अन्त हीं कर दूंगा। हाँ, इसके अलावा कोई चारा नहीं है। मैंने उपवास किसी पर क्रुद्ध होकर या किसी के हृदय में दया का उद्रेक करने के लिये नहीं किया है। मैंने अपने उपवास का जो उद्देश्य

तुम्हें बतलाया है वही सही है, मैंने मानसिक अशान्ति पर विजय पाने के लिये ही उपवास किया है।

अरिन्दम अपने कमरे में चला गया। उपवास जारी रहा।

उसके उपवास का तीसरा दिन था, नरेन्द्र ने उसको समझाया किन्तु वह न माना। अरिन्दम का चेहरा कुम्हला गया था, किन्तु उसके चेहरे पर दृढ़ता की दीप्ति थी। नरेन्द्र को उसने कहा—डरो मत, मैं अपनी जान उपवास के द्वारा नहीं देना चाहता हूँ, नहीं, मैं इतना नादान नहीं हूँ। कुछ नहीं तो मुझे कला के लिये जीना है। —थोड़ा ठहरकर वह बोला—उपवास का असर अब होने लगा है, धैर्य रक्खो नरेन्द्र!—अन्तिम शब्दों को उसने बड़े प्रेम से कहा।

नरेन्द्र ने कहा—हमें क्या है भैया, हम तो खा रहे हैं, पी रहे हैं, धैर्य तो आपको रखना है—नरेन्द्र ने मुँह से तो ऐसा कहा, किंतु मन ही मन उसने एक दृढ़ निश्चय कर लिया।

अरिन्दम उपवास के दिन से किसी से बोलना भी नहीं पसंद करता, जिससे कि अन्य लोग आकर उसे तंग न करें, इसलिये वह अपने कमरे में ताला डालकर दिनभर मकान के एक दूसरे हिस्से में दिन बिताया करता था। फिर जब रात हुई तो वह अपने कमरे के दालान में एक आराम-कुर्सी डालकर बैठ जाता था। किन्तु रोशनी का बटन नहीं दबाता था। उसके कमरे में भी अंधकार रहता था और मन में भी।

उपवास के तीसरे दिन संध्या के बाद बैठे-बैठे उसकी आँखें बंद हो गईं, किन्तु नींद नहीं आई। तृतीया का चाँद उदित होकर अस्त हो चुका था। आज संध्या समय कोई नहीं आया था, शायद अँधेरा देखकर लोग लौट गये हों। अरिन्दम अकेला बैठा था, वह बिल्कुल हिलडुल नहीं रहा था। वह कोई विशेष बात सोच नहीं रहा था।

उसे शायद जरा झपकी आ गई थी, इतने में किसी ने पुकारा—अरिन्दमजी, अरिन्दमजी!

ऐसे समय में भला कौन पुकारता, अरिन्दम ने कुछ ख्याल नहीं किया। फिर किसी ने पुकारा, अबकी आवाज सामने से आ रही थी। अरिन्दम ने झट से आँख खोली, और सामने चपला को देखकर एकदम खड़ा हो गया, और कुछ न कहकर उसे ऐसे घूरने लगा मानो वह कोई अत्यंत अद्भुत वस्तु हो, मानो कोई अनहोनी बात हो गई हो।

—चपला, तुम ?—अरिन्दम ने पूछा।

चपला ने उसको हाथ पकड़कर बैठाते हुए कहा—बैठिये, आप कमज़ोर हैं, हाँ, मैं हूँ।

—तुम ?—बैठते हुए अरिन्दम ने कहा।

—हाँ-हाँ मैं हूँ, पीछे बातें होंगी, पहिले आप कुछ खा तो लीजिये।

अरिन्दम ने कहा—यह तुमको किसने कहा कि मैंने कुछ नहीं खाया, जिसने भी कहा है मेरे साथ बड़ा विश्वासघात किया है।

चपला ने कुछ उत्तर न दिया, टटोलकर उसने बत्ती जलाई। अरे यह क्या, कोई सात-आठ तरह की मिठाई नमकीन वग़ैरह चपला लाई थी। चपला ने बत्ती जलाकर जल्दी से अरिन्दम के कमरे के घड़े से एक काँच के गिलास में पानी भरा, और सामने मेज़ पर सब चीज़ सजाते हुए बोली—खाइये।

अरिन्दम ने कहा—नहीं चपला, यह हो नहीं सकता, पहिले मुझे समझ लेने दो कि मैं क्या करने जा रहा हूँ।

चपला ने कहा—अच्छी बात है, समझ लीजिये मैं खड़ी हूँ।

अरिन्दम ने चपला की ओर देखा तो अरे वह रो रही थी, उसकी दोनों आँखों से आँसुओं की बड़ी-बड़ी बूँदें टपटप करके जमीन पर गिरी। अरिन्दम ने कहा—चपला लो मैं खाता हूँ, तुम यह रोना बन्द करो।

—मैं रो कहाँ रही हूँ—कहकर चपला ने एक लड्डू उठाकर अरिन्दम के मुँह की ओर बढ़ाकर कहा—खाइये।

अरिन्दम ने मुँह खोल दिया और खाने लगा, जब उसे खा चुका तो बोला—चपला, मैं खा तो चुका, किन्तु यह तो बताओ कि आजकल तुम रहती कहाँ हो, आजकल तुम्हारे रंग-ढङ्ग क्या हैं?

चपला ने कुछ नहीं कहा, किन्तु ज़िद की कि अरिन्दम अच्छी तरह खा ले। अरिन्दम ने चपला से सामान ज्यादा होने के बहाने कुछ खाने को कहा, दोनों खाने लगे। जब अरिन्दम अच्छी तरह खा चुका, याने उसने चपला को विश्वास दिला दिया कि खा चुका, तब बातचीत शुरू हुई।

चपला ने कहा—ज्यों ही मुझे खबर मिली, मैं भागी हुई आई। गोकि इसके लिये मिस बैनर्जी न मालूम क्या-क्या ताना दें।

अरिन्दम के सैकड़ों प्रश्नों के उत्तर में बस चपला ने एक ही बात कही कि आजकल उसे आज़ादी नहीं है, वह क्वार्टर से निकलकर कहीं नहीं जाती। नाटक के अभिनय में न आने की वजह देते हुए उसने कहा—यों ही कोई खास वजह नहीं हुई थी, तबियत ही नहीं हुई इसलिये नहीं आई।

अरिन्दम ने उसके चेहरे की ओर देखा कि यह कह क्या रही है, चपला की भाषा तो ऐसी नहीं थी। यह अद्भुत भाषा कैसी? इसको सुनने का वह अभ्यस्त नहीं था। वह उसके तरफ अद्भुत दृष्टि से घूरने लगा। यही चपला न थोड़ी देर पहिले रो रही थी।

हाँ, बातचीत करते-करते चपला ने रोज़ एक बार आने का वादा किया, किन्तु अब अरिन्दम को उसके वादों पर विश्वास नहीं था। इसके अतिरिक्त एक दफे शब्द से उसे क्रोध आ गया, कभी जो दिन भर रहती थी वह एक दफे? थोड़ी ही देर में जंगम राजा की घड़ी में टन् टन् करके दस बजे, तो चपला हड़बड़ाकर उठी। उसने कहा—रात ज्यादा हो गई अरिन्दमजी, जाती हूँ।

—कल आओगी न ?

—हाँ, क्यों नहीं।

चपला को सड़क तक उसने पहुँचा दिया, और जाकर ऊपर सो गया।

—२०—

दूसरे दिन सुप्रकाश सबेरे ही चपला के क्वार्टर में जा धमका, बोला—चपला, तुम कल वहाँ गई थी ?

—हाँ—चपला को कहना ही पड़ा।

—क्यों ?

—यों ही—चपला ने उपवास की बात बताना उचित न समझा, बल्कि सच बात तो यह है उसे बताने की प्रवृत्ति नहीं हुई।

चपला कुछ देर तक चुप रही, फिर बोली—मेरे वहाँ जाने में तुम्हें कुछ आपत्ति है क्या ?

—है।—सुप्रकाश ने गंभीर होकर कहा।

चपला ने कुछ नहीं कहा, किन्तु स्पष्ट ही उसके चेहरे पर एक प्रश्न और ज़रा-सा विद्रोह था; सुप्रकाश ने जैसे उसका उत्तर देते हुए कहा—इसलिये चपला कि मैं तुम्हारा सोलह आना चाहता हूँ, मैं इसमें से एक पाई भी किसी को देना नहीं चाहता।—सुप्रकाश की आँखों से दो आँसू की बड़ी बूँदें टपटप करके गिरीं, किन्तु ज्योंही चपला इन आँसुओं की बूँदों को देखकर घबड़ाकर उठी त्योंही उसके चेहरे पर फीकी क्षीण हँसी आ गई। सुप्रकाश आजकल बात-बात में इस प्रकार रोने लगता था। चपला की आँखों में भी आँसू आ गये, दोनों आलिङ्गनबद्ध हो गये।

पारस्परिक प्रेम के इस उच्छ्वासित प्रकाश के बाद जब दोनों अलग हुए तो सुप्रकाश ने कहा—चलो हम दोनों कहीं भाग चलें।

—हाँ चलो—चपला ने कहा, वह इस समय किसी प्रस्ताव पर भी राज़ी हो जाती।

सुप्रकाश ने कहा—चलो-चलो तो कहती हो, लेकिन कब?

चपला जैसे चौंक पड़ी, बोली—जब कहो।

दोनों में भागने की संभावना पर बातचीत होने लगी, चपला ने कहा—लेकिन मेरी नौकरी जाती रहेगी, भागकर ख़र्च कैसे चलेगा?

—ओह इसकी परवाह मत करो, मेरे पास एक हज़ार के क़रीब रुपये हैं, आगे देखा जायगा—सुप्रकाश ने कहा।

अब योजना एक व्यवहारिक रूप ले रही थी। चपला ने गंभीर होते हुए कहा—मेरे भी पास कुछ रुपये हैं।

फिर क्या था, योजना तैयार हो गई, किन्तु तारीख़ निश्चित नहीं हुई। सब बातों के बाद सुप्रकाश ने कहा—लेकिन एक बात है।

—वह क्या?—चपला सावधान होती हुई बोली।

—तुम अब अरिन्दम बाबू से न मिला करो।

चपला चुप रही, फिर बोली—मैं मिलती ही कब हूँ?

—ख़ैर न मिला करो।

—नहीं मिलूँगी—चपला ने कहा। यह बात नहीं कि चपला इस वक्त तक भूल चुकी थी कि उसने अरिन्दम से रोज़ आने का वादा किया है, किन्तु अब उसमें इतना नैतिक साहस नहीं बाक़ी था कि वह सुप्रकाश की किसी बात को न माने। इसके साथ ही उसके दिल में अब अरिन्दम के लिये वह स्थान न था जो पहिले था। अरिन्दम अब उसके लिये अनिवार्य ज़रूरत नहीं था।

वह इसके बाद अरिन्दम के यहाँ नहीं गई। कई बार ऐसा हुआ कि वह अरिन्दम के यहाँ चुपके से दस मिनट हो आना तय कर चुकी थी, किन्तु सुप्रकाश के आ जाने से नहीं जा सकी। सुप्रकाश अब

चपला के पास कोई समय ऐसा नहीं छोड़ता था जब वह स्वतंत्र हो कि कहीं आये या जाये ।

—२१—

सुप्रकाश की विजय इस प्रकार कायम रही, चपला के साथ भाग जाने की बात बात ही रही । एक दिन सुप्रकाश रास्ते में घूम रहा था, अकस्मात् कुछ लोगों को अरिन्दम के विषय में बातचीत करते सुनकर वह खड़ा हो गया । अरिन्दम को एक प्रकार से अपना शत्रु समझने पर भी उसे अरिन्दम के विषय में बड़ी दिलचस्पी थी । पूछने पर उसे जो बात ज्ञात हुई उसे सुनकर वह एकदम चौंक पड़ा । अरिन्दमजी आज सबेरे गिरफ़्तार हो गये । पहिले तो उसको सन्देह हुआ कि यह अरिन्दम शायद और कोई अरिन्दम हो, किन्तु जब उसने सुना सुप्रसिद्ध लेखक अरिन्दम बाबू गिरफ़ार हो गये तो उसे कोई सन्देह नहीं रहा कि यह अरिन्दम वही है ।

बहुत चेष्टा करने पर भी लेकिन उसे यह पता नहीं लगा कि अरिन्दम क्यों गिरफ़्तार किये गये । बात करनेवालों ने केवल इतना बतलाया कि अरिन्दम राजनैतिक मामले में गिरफ़ार हुए । इस बात को सुनकर उसे इतना आश्चर्य हुआ कि उसने उसपर अविश्वास किया, क्योंकि अरिन्दम ने राजनीति में कोई व्यवहारिक भाग तो कभी नहीं लिया था ।

सुप्रकाश ने कई तरह से घुमाकर प्रश्न पूछा, किन्तु एक ही उत्तर मिला कि अरिन्दम राजनैतिक मामले में गिरफ़्तार हुए । यह देखकर कि यहाँ इससे अधिक खबर नहीं मिल सकती, वह अरिन्दम के घर पर गया । वहाँ उसे पता लगा कि अरिन्दम अपने सबसे ताजे नाटक के लिये गिरफ़ार हुए हैं । यह नाटक सरकार द्वारा राज-द्रोहात्मक समझा गया है, फलस्वरूप इसकी सब प्रतियाँ जहाँ भी

मिलीं जब्त कर ली गई हैं, और अरिन्दम को गिरफ़ार कर लिया गया है।

नरेन्द्र ने यह खबरें सुप्रकाश को बतलाकर जरा व्यंग भरे स्वर में कहा—अब तो आपको खुशी हुई।

—क्यों खुशी क्यों होती?—सुप्रकाश ने कहा, सचमुच उसे खुशी नहीं हुई थी। बहुत-सी बातें एक साथ उसके दिमाग़ में आईं, ये बातें इतने वेग से आईं कि वह अरिन्दम के घर से लौटने के बाद भी बड़ी देर तक किंकर्त्तव्यविमूढ़ रहा। एक बात उसकी समझ में खूब अच्छी तरह आई कि इस खबर का असर चपला पर बहुत बुरा होगा। इस दृष्टि से अरिन्दम की गिरफ़ारी सुप्रकाश के लिये जो सबसे बुरी बात हो सकती थी वह थी। इस समय जल्दी काम करना जरूरी था। सुप्रकाश ने घड़ी देखी। दो बजे थे। वह सीधा बैंक में गया; और वहाँ जो पाँच-छै सौ रुपये उसके नाम से थे वह सब निकालकर लौटा। फिर वह चपला के क्वार्टर में पहुँचा, और थोड़ी देर तक देखता रहा कि यह खबर चपला के कानों तक पहुँची है कि नहीं। जब उसे थोड़ी देर इधर-उधर बातचीत के बाद सम्पूर्ण विश्वास हो गया कि चपला ने यह खबर नहीं सुनी, तो उसने भाग चलने का प्रस्ताव एकाएक चपला के सामने रक्खा, बोला—चलो, चपला आज हम लोग रवाना हो जायँ।

चपला को बड़ा आश्चर्य हुआ, उसने कहा—आज क्यों?

—यों ही, एक न एक दिन तो जाना है फिर आज ही क्यों नहीं—सुप्रकाश ने क्षीण स्वर में कहा।

मैं इतना जल्दी तैयार नहीं हो सकती—चपला ने कहा—सामान बाँधने में भी तो कुछ समय लगेगा।

सुप्रकाश चपला की ओर कुछ देर देखता रहा, फिर गंभीर हो गया, बोला—देखो चपला, मुझसे पिताजी से इस बात पर लड़ाई हो गई कि मैंने शादी करने से इन्कार किया, इस पर उन्होंने कहा

फिर घर पर न आना। मैंने कहा अच्छी बात है। अब मैं तुम्हारे पास आया हूँ, तुम्हारी इच्छा हो चलो या न चलो। तुम मेरी विवाहिता पत्नी नहीं हो, कोई तुम पर जोर मेरा नहीं है, चलना हो चलो नहीं तो आज मैं जाकर पटरी पर जान दे देता हूँ। आखिर इस जीने से क्या फायदा मेरे लिये इसके बाद जिन्दगी का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता ...—वह कड़वेपन के साथ कमरे पर बिछी हुई दरी की ओर देखने लगा।

याने ?—चपला ने भौंहें चढ़ाते हुए पूछा।

सुप्रकाश ने उसी प्रकार गंभीर स्वर में उत्तर दिया। उसकी बातें ऐसी मालूम दीं जैसे कोई मुर्दे पर मन्त्र पढ़ रहा हो—याने वाने कुछ नहीं है चपला, या तो मैं जाता हूँ, और जीता हूँ, नहीं तो मैं नहीं जीने का।

चपला ने निराश होकर कहा—लेकिन मेरी पन्द्रह दिन की तनख्वाह जो बाकी रह जायगी।

सुप्रकाश ने कहा—जाय—उसने जेब से निकालकर छै सौ रुपये के नोट दिखाये।

फिर भी चपला ने कहा—तो तुम मुझे कोई मौका नहीं देना चाहते ?

—यह सवाल तो मैं तुमसे पूछता हूँ चपला, और मेरे प्रश्न में तुमसे कहीं अधिक अर्थ है—सुप्रकाश ने जिद के साथ कहा।

अन्त में चपला को राजी होना पड़ा। उसी रात को दोनों कलकत्ता के लिये रवाना हो गये। चपला जब स्टेशन पर पहुँची, और सामने तैयार गाड़ी देखी तो उस पर सारी वास्तविकता अपनी भयंकरता के साथ खुल गई, एक बार उसकी इच्छा हुई कि सुप्रकाश से लौट चलने के लिये कहे, किन्तु जब उसने सुप्रकाश के खिले हुए चेहरे की ओर देखा तो उसे हिम्मत न हुई कि वह अपनी बात कहे। ऐसी बात कहना उसकी समझ में कमजोरी दिखाना होता, और वह

सुप्रकाश के सामने कमजोरी दिखाना नहीं चाहती थी। एक बात उसको बुरी मालूम हुई कि सुप्रकाश इतना प्रफुल्ल क्यों है, सुप्रकाश की इस असामयिक प्रफुल्लता से चपला को करीब-करीब क्रोध आ रहा था। सुप्रकाश ने एक के बाद एक खाने की चीजों तथा अखबार और पत्रिकाओं का चपला के सामने ढेर लगा दिया, किन्तु चपला ने एक भी चीज उठाकर नहीं देखी। वह जैसे पुतले की तरह आँखों में एक अभिव्यक्तिहीन दृष्टि लेकर बैठी थी वैसी ही बैठी रही। जब गाड़ी ने सीटी दी तो सुप्रकाश उसके बगल में आकर बैठ गया, गाड़ी धीरे-धीरे चलने लगी। चपला बनारस के प्लैटफार्म को ओर देख रही थी। अब वह समझ रही थी कि उसने क्या किया है, सुप्रकाश के लिये उसने क्या किया वह अब उसकी समझ में आ रहा था। एक तरफ सुप्रकाश था, दूसरी तरफ चपला को सारी दुनिया। इलाहाबाद में रहनेवाला उसका भाई, उसका स्कूल, छात्रियाँ, अरिन्दम, किशोर, तथा अन्य साथी एक तरफ; दूसरी तरफ केवल सुप्रकाश। इस समय उसे मिस बैनर्जी भी एक सुन्दर रूप में मालूम दे रही थीं। इस भागने के बारे में लोग जब सुनेंगे तो क्या कहेंगे? उसकी नाड़ी बन्द-सी हो गई, वह सन्न हो गई, वह जानती थी क्या लोग कहेंगे। राजघाट स्टेशन भी आया फिर डफरिन पुल, पुल पर से चपला ने बनारस के अँधेरे घाटों की ओर देखा, फिर उसने मुँह भीतर कर लिया। गाड़ी अब तीर की तरह अँधेरे की छाती को चीरते हुए जा रही थी। एक इकरस खटखट घटघट आवाज से चारों दिशा गूँज रही थी। खटखट घटघट प्राणहीन उपादानों के संघर्ष का कोलाहल। इसमें न कहीं दया थी न रहम, हृदयहीन। कोई पिस जाय बला से, कोई पीछे रह जाय परवाह नहीं। इसे तो केवल अपना रास्ता तय करने से मतलब है। न अन्धकार इसके लिये कोई बाधा है, न जङ्गल या पहाड़। ऐसे ही यह चलती है, हृदयहीन, पाषाण, निष्ठुर? ओह?

सुप्रकाश भी चुप बैठा था, उसकी प्रफुल्लता जाने कहाँ काफूर हो गई थी, किन्तु सुप्रकाश न अपने बारे में सोच रहा था, न चपला के बारे में, न इस बारे में कि भागकर वह बेवकूफी कर रहा था। वह सोच रहा था जेल में बन्द अरिन्दम की बात, जितना ही वह उस आदमी की बात सोचता था उतना ही वह गंभीर होता जाता था। एक अव्यक्त वेदना उसके हृदय में धीरे-धीरे उठ रही थी, एक आँधी की तरह। आज उसे कुछ वैसा ही मालूम हो रहा था जैसे पहिले उसे सभी औरतों के सम्बन्ध में मालूम होता था। यह औरत उसे उसकी इच्छा के विरुद्ध पथभ्रष्ट कर रही है। उसने और अधिक न सोचा सोचना एक ऐसी चीज थी जिससे दुनिया में वह सबसे ज्यादा डरता था। उसने ज़ोर से अपने को झकझोरते हुए जैसे चिंता के पंजों से छुड़ाते हुए पुकारा —चपला !

—हाँ कहो।—चपला ने एक अखबार उठा लिया।

—क्या पछता रही हो ? हाः हाः !—सुप्रकाश कहकहा लगाकर हँसा।

चपला ने रुखाई के साथ कहा—अभी बात करने को जी नहीं चाहता।

सुप्रकाश ने इतनी कड़ी बात कभी नहीं सुनी थी, एक मिनट के लिये उसका तेवर चढ़ गया, उसने कहा – तो क्या अब मुझे भी रामनारायण और अरिन्दम की श्रेणी में डाल दिया

इन बातों में अत्यन्त तीव्र व्यंग था, चपला ने अखबार को डाल दिया, बोली—तुम हो तो इसी काबिल—फिर एकदम से फूट-फूटकर रोने लगी, रोते-रोते उसने कहा—मैं तुम्हारे लिये सब कुछ छोड़कर बदनामी, निन्दा उठाकर जा रही हूँ प्रकाश, और तुम अब इस तरह मेरी खिल्लियाँ उड़ा रहे हो—वह और भी रोने लगी, खैररियत यह थी कि उस डेवढ़े दरजे के कमरे में कोई नहीं था।

सुप्रकाश को इस पर बड़ा अफ़सोस हुआ, वह माफी माँगने लगा। चपला ने कहा—हाँ, अब मैं तुम्हारे क़ब्जे में हूँ, तुम इस बात को जानते हो, अब तो तुम मेरे साथ ऐसा व्यवहार करोगे ही, यह पुरुषों का स्वभाव है। तुमने बनारस में कभी ऐसा व्यवहार किया था ?

सुप्रकाश और नरम पड़ा, पैर पकड़ने लगा। मुग़लसराय आते आते चपला और सुप्रकाश में फिर से प्रेमिक-प्रेमिका का मधुर सम्बन्ध स्थापित हो गया था। मुगलसराय स्टेशन पर चपला एक सद्गृहिणी की तरह सुप्रकाश से कह रही थी—फ़जूल पैसे मत खर्च करो, आगे चलकर हमें पैसों की ज़रूरत पड़ेगी।

—२२—

यथासमय अरिन्दम पर मुक़दमा चला, और उसे एक साल की सज़ा हुई। इतनी सजा अरिन्दम को नहीं होती अगर वह वकील की सलाह मानता, किन्तु उसने ऐसा जोशीला ब्यान दिया कि मैजिस्ट्रेट के लिये इस प्रकार की सज़ा देना ज़रूरी हो गया। अरिन्दम ने ब्यान में कहा—"मैंने जो कुछ लिखा है वह ठीक ही लिखा है। एक लेखक के कुछ कर्त्तव्य तथा कुछ अधिकार होते हैं, मैंने उन्हीं के मुताबिक लिखा है। मैं अपने पाठक वर्ग के प्रति उत्तरदायी हूँ न कि सरकार के प्रति। सरकार द्वारा इस प्रकार कला तथा साहित्य के क्षेत्र में हस्तक्षेप को मैं बेजा तथा पशुशक्ति का दुरुपयोग समझता हूँ। केवल एक ही हालत में मैं मानता हूँ साहित्य के बाहर के अधिकारियों का साहित्य के ऊपर हस्तक्षेप करने का अधिकार है, वह तब जब कि साहित्य प्रतिसामाजिक हो। उस हालत में मेरी राय में साहित्य साहित्य ही नहीं है। मैंने नाटक को जान-बूझकर सरकार विरोधी नहीं बनाया, मेरे कलाकार मन में युगमन जिस प्रकार प्रतिफलित हुआ मैं उसी

प्रकार लिखता गया। यदि मेरी रचना राजद्रोही हो गई तो मुझे इसका जरा भी अफसोस नहीं है। यह बात मेरे विरुद्ध दलील न होकर उस सरकार के विरुद्ध दलील है जो यहाँ मौजूद है।" इत्यादि

मैजिस्ट्रेट ने सजा सुनाई तो अरिन्दम पर उसका कुछ भी असर न पड़ा। वह जैसे अदालत के प्रति उदासीन था उसी प्रकार उदासीन बैठा रहा। जिस दिन वह अदालत में पहले-पहल पेश किया गया था उसी दिन उसे किशोर से मालूम हो गया था कि चपला एकाएक स्कूल के क्वार्टर से ग़ायब हो गई है और उसके साथ ही सुप्रकाश गायब है। इस बात को सुनकर मुहूर्त के लिये अरिन्दम चौंक पड़ा, किन्तु फौरन ही सँभल गया। फिर उसने इस सम्बन्ध में एक भी प्रश्न नहीं पूछा, यद्यपि बराबर वह मन से चपला की ख़बर जानने के लिये उत्सुक रहता था। उसके मुक़दमे की केवल चार पेशी हुई, चारों दिन वह जेल से आते ही अदालत के इधर-उधर देख लेता था, उसको कुछ ऐसा विश्वास था कि न मालूम किस तरह चपला किसी दिन उसे अदालत में मौजूद मिलेगी। बेचारे को मालूम न था कि चपला सैकड़ों मील दूर है। एक बार से अधिक यह बात अरिन्दम के दिमाग़ में आ चुकी थी कि यह नाटक चपला के कहने पर ही लिखा गया था, इस बात को सोचकर उसे एक प्रकार का आनन्द ही होता था।

किशोर ने जेल में मिलकर कई बार उससे ज़मानत पर छूटने की बात कही थी, किन्तु अरिन्दम ने कहा—नहीं किशोर, यह बात मत करो, जो हो रहा है उसे होने दो।

किशोर ने कहा—ख़ैर जो होगा सो तो होगा ही, इस तरह हवालात में सड़ने से फायदा क्या?

किन्तु अरिन्दम ने नहीं माना। पहली पेशी के दिन सरकारी वकील ने स्वयं अरिन्दम के वकील से चुपके से कहा—हम इनकी ज़मानत का विरोध नहीं करेंगे—किन्तु फिर भी अरिन्दम ने ज़मानत

पर छूटने से इनकार किया। किशोर जानता था कि अरिन्दम जिद्दी आदमी है, उससे अनुरोध करना फ़जूल है, इसलिये उसने फिर कुछ न कहा।

जिस दिन अरिन्दम को चपला के भागने की ख़बर मालूम हुई, उस दिन से तो उसने वकील का परामर्श एक नहीं माना। वकील के अनुसार वह हर मौके पर अपना मुक़दमा ख़राब कर रहा था, किन्तु वह किसी की बात मानता ही नहीं था। वकील एक मौके पर अपने मुवक्किल के इस आचरण से इतने दुखी हुए कि वे अगले दिन आये ही नहीं, और बुलाने पर भी आने से इनकार किया।

अरिन्दम को सज़ा हो गई। उसके इर्द-गिर्द जो कुछ साहित्यिक तथा भक्त इकट्ठे हुए थे वे सबके सब सजा के दिन अदालत में मौजूद थे। अरिन्दम को ज्यों ही सजा सुनाई गई, त्यों ही रूपकुमारी फूट-फूटकर रोने लगी। अरिन्दम ने उसकी ओर देखा, कहा—छिः रूपा, कौन-सी मुझे फाँसी हो रही है—और साथ ही उसे चपला की बात याद आई। फिर वह सीधा जाकर पुलिस की मोटर में बैठ गया, न इधर देखा न उधर।

फिर क्या था, जेल में एक-एक करके अरिन्दम के दिन बीतने लगे। किशोर और रूपकुमारी बराबर उससे मिलती, कभी वे उसके लिये कुछ ले आते कभी कुछ। जेल के दफ़्तर में अरिन्दम से किशोर हर बार पूछता—क्यों अरिन्दमजी, कुछ तकलीफ तो नहीं है?

—नहीं—अरिन्दम बहुत जल्दी में कहता, और दफ़्तर के छड़-दार जँगलों से दुनिया की एक झाँकी देख लेने की चेष्टा करता।

जेल की तकलीफ़ तथा अभावों का करीब-करीब अरिन्दम पर कोई असर नहीं पड़ा। वह अपनी जिन्दगी में बहुत-सी तकलीफें तथा कठिनाइयाँ झेले हुए था। केवल इस जीवन का इकरसपना उसे अखरता था। यह भला किस कैदी को नहीं अखरता। फिर भी दिन बीत

ही रहा था। रात आती, दिन जाते, इसी तरह क़ैद कटती जा रही थी।

—२३—

कलकत्ते में बालीगञ्ज की तरफ एक छोटा-सा मकान लेकर सुप्रकाश और चपला रह रहे थे। वे दोनों पति-पत्नी की तरह ही रहते थे, और लोग भी उन्हें यही जानते थे। सुप्रकाश को बार-बार चपला ने कहा कि कोई काम खोजे, किन्तु उसने बराबर इसे टाल दिया। भविष्य के विषय में सुप्रकाश जिस प्रकार निश्चिन्त था उसे देखकर कभी-कभी चपला चौंक पड़ती थी। फिर चपला को यह भी डर था कि लड़के हो सकते हैं। जब भी चपला सुप्रकाश को भविष्य के विषय में याद दिलाती थी, तभी वह एक विशेष तरीक़े से हँस पड़ता था, कहता था—क्या हमने अब तक जो कुछ किया है वह भविष्य को सोचकर ही किया है चपला?

चपला इस बात को सुनकर नाराज हो जाती, वह कहती—फिर भी भविष्य है तो।

सुप्रकाश सन्देह-कम्पित स्वर में कहता—हो भी सकता है, नहीं भी हो सकता है—और दूर क्षितिज की ओर देखता।

चपला को डर-सा लगता, वह निरुत्तर हो जाती, किन्तु फिर भी भविष्य की चिन्तायें उसे कुछ कहने को मजबूर करतीं, वह कहती—तो ये रुपये कुछ अनन्त काल तक तो नहीं चल सकते, कहो तो कुछ मैं ही कर लूँ?

इसके उत्तर में सुप्रकाश उसके मुँह की ओर देखता रहता, फिर दूर आकाश में उड़ने वाले पक्षियों की पंक्ति की ओर देखता।

इस प्रकार यह प्रस्ताव जहाँ का तहाँ रह जाता। चपला को अब सुप्रकाश पर कुछ-कुछ सन्देह हो चला था। उसके तरफ से न

तो वह प्यार था, न वह मिलने की तड़पन। मालूम होता था अब सुप्रकाश उसमें दिलचस्पी खो रहा है। वह कभी-कभी इतना क्रुद्ध हो जाता था जितना पहले कभी नहीं हुआ था। झगड़ों में वह अब हमेशा यह उम्मीद रखता था कि चपला ही आकर उसकी खुशामद करेगी। चपला पहले-पहल ऐसा ही करती थी, किन्तु अब वह भी अकड़ जाती थी। फलस्वरूप तीन-तीन, चार-चार दिन दोनों में बातचीत बन्द रहती थी। फिर कोई ऐसी बात होती जैसे चपला को बुख़ार आ जाता या ऐसी ही कोई बात तो दोनों में सुलह हो जाती।

कलकत्ता एक महानगरी है। जीवन की गति यहाँ बनारस वगैरह की तुलना में हजार गुनी है। द्रष्टव्य, ज्ञातव्य चीजों की यहाँ भरमार है। पहले दो महीने तो कलकत्ते को रोज आविष्कार करने में बीत गये थे। आज चिड़ियाखाना, कल फिर चिड़ियाखाना, आज विक्टोरिया मेमोरियल कल कुछ नहीं तो सड़कों पर ही घूम रहे हैं, या जहाज़-घाट में जहाज़ों का आना-जाना देख रहे हैं। कलकत्ते की अनन्त संभावनाओं के आविष्कार करते-करते वे भी थक गये। कलकत्ते के साथ-साथ वे एक दूसरे की सम्भावनाओं की भी खोज करते जाते थे, किन्तु इसमें भी चपला को जल्दी मालूम हुआ कि सुप्रकाश को अधिक दिलचस्पी नहीं है। बात यह है कि सुप्रकाश को चपला में तभी तक तीव्र दिलचस्पी थी, जब तक अरिन्दम के रूप में एक प्रबल प्रतिद्वन्दी उसकी नज़रों में मौजूद था, किन्तु ज्यों ही वह प्रतिद्वन्दी दूर रह गया, प्रतिद्वन्दिता की बात केवल इतिहास-मात्र रह गई, केवल यही नहीं वह जेलखाने पहुँच गया, और उसे सज़ा हो गई, (यह बात सुप्रकाश को मालूम थी, किन्तु उसने इस बात को चपला से छिपाया था), चपला केवल उसी की हो गई, उसको कहीं और जाने का ठौर नहीं रहा, तो सुप्रकाश की उसमें दिलचस्पी कम हो गई। चपला के प्यार में उसे जो संघर्ष और विजय का आनन्द बनारस में प्राप्त था, वह अब जाता रहा था। अब

चपला उसकी आँखों में एक साधारण औरत थी, जिसमें उसे कुछ पाना नहीं था, और साधारण औरतों में सुप्रकाश को कोई विशेष दिलचस्पी नहीं थी, कम के कम वह दिलचस्पी ऐसी नहीं थी कि अपने शैशव, किशोर, यौवन के केन्द्र से छै सौ मील दूर पर एक कोने में अज्ञातवास करे।

सुप्रकाश अब बैठे-बैठे बहुत सोचा करता था, न मालूम क्या सोचा करता था। वह अतीतकाल के बारे में बहुत कम बात करता था, किन्तु अतीत को भूला नहीं था यह साफ ज़ाहिर हो जाता था क्योंकि उसने चपला से एक दिन कह डाला—हो कलकत्ते के जीवन में ज्यादा गति, लेकिन हमेशा रहने के लिये हमारा बनारस ही अच्छा है। जिसे दफ़्तर को देर हो गई है वह मुन्शी जैसे खाना खाता है, कलकत्ते का जीवन वैसा ही है। मुझे तो यही अच्छा लगता है चाकोलेट का प्याला पीते-पीते एक पूरी कहानी ही कह डाले—आँख उठाकर जब उसने देखा कि यह सुनकर चपला का चेहरा परेशान हो गया है तब उसने कहा—इसीलिये तो हमने बालीगञ्ज के तरफ मकान लिया है, यहाँ कुछ-कुछ बनारस की तरह है, जीवन को हम यहाँ उसी तरह चुस्कियों से पी सकते हैं।

चपला भी देखादेखी चिन्तित रहने लगी। उसके मन में एक अस्पष्ट-सा भय रहने लगा जिसको वह कुछ समझ नहीं पाती थी। अब सुप्रकाश अक्सर बाहर भी चला जाता, चपला उसके साथ नहीं जाती। एक दिन सुप्रकाश के आने में कुछ देरी हो रही थी, चपला खाना तैयार किये बैठी रही, किन्तु सुप्रकाश का कहीं पता नहीं था। शायद ही कभी ऐसा हुआ हो कि वह सन्ध्या के बाद अकेला बाहर रहा हो, किन्तु आज तो आठ बज चुके थे। चपला चिन्तित हो गई। तरह-तरह की बातें उसके मन में आने लगीं। कहीं सुप्रकाश चला तो नहीं गया? हाँ, सात बजे पश्चिम को जाने वाली एक गाड़ी है। यह बात याद आते ही उसका दिल धक् से हो गया, और सिर पर पसीने

की बूँदें आ गईं। इन दिनों वह कुछ चिन्तित भी तो रहता था। चपला ने सोचा देखना चाहिये कुछ रुपये ले गया है या नहीं, झट से उसने जहाँ रुपये रहते थे वहाँ देखा तो उसमें कुछ पता नहीं लगा। पता तो तब लगता जब चपला को मालूम होता कि पहिले कितने रुपये थे। चपला ने इधर-उधर खोजा कि कोई चिट्ठी तो नहीं छोड़ गया है, लेकिन देखा कहीं कोई चिट्ठी नहीं है। चपला को अब महसूस हो रहा था कि उसने इस प्रकार कलकत्ता भाग आकर ग़लती की। सुप्रकाश की तरह झक्की आदमी पर अपना जीवन सम्पूर्ण रूप से छोड़कर उसे अनुभव हो रहा था उसने ग़लती की। एकाएक उसने सोचा कि क्या उसके लिये बनारस लौट जाकर फिर उसी जीवन को पाना सम्भव है? उसने मन ही मन बड़े जोर से इस प्रश्न का उत्तर ना में दिया। सुप्रकाश का क्या है, वह पुरुष है। उसको दो-चार दिन लोग बुरी निगाह से देखेंगे, फिर लोग भूल जायेंगे। किन्तु वह? उसके इस भाग जाने को कोई नहीं भूलेगा, किसी स्कूल में वह कभी रक्खी तो जायगी ही नहीं, उसके लिये जीवन के सब सम्मान-जनक रास्ते बन्द हैं।

किस आशा से वह सुप्रकाश के साथ मझधार में कूद पड़ी थी और उसका नतीजा क्या हुआ था? वह तो अकेली पड़ी है, और सुप्रकाश इस समय कहाँ होगा। वह तो धड़धड़ाता हुआ बर्दवान से आगे निकल गया होगा। ओह! इस प्रकार सोचते-सोचते कब वह रोने लगी उसे पता भी नहीं लगा, वह आज एक आठ वर्ष की लड़की की तरह असहाय हो रही थी। रोते-रोते वह सो गई।

सुप्रकाश कोई रात के ग्यारह बजे आया। चपला ने जब उसे पूछा तो उसने किसी पार्क का नाम बताया जहाँ वह यों ही सो गया था। चपला सुप्रकाश के प्यार के कारण सारी दुनिया को तिलांजलि देकर यहाँ आई थी, किन्तु चाहे किसी तरह से हो वह कभी भी सुप्रकाश को झूठ से परे नहीं समझती थी। आज तो उसने सुप्रकाश

की यह पार्क वाली बात को एकदम मनगढ़न्त समझा। आख़िर एक पार्क में सो जाने की वजह क्या हो सकती थी? कौन-सा सुप्रकाश ने दिन भर पुर चलाया था, या हल जोता था कि इस तरह बेतरीके नींद आ गई? नहीं, इस बात पर कोई एतबार नहीं किया जा सकता। जो कुछ भी हो सुप्रकाश के लौट आने से उसको बड़ी खुशी हुई, सुप्रकाश झूठ बोले इसकी उसे परवाह नहीं थी, बस वह छोड़कर चला न जाय।

इसके कई रोज़ के अन्दर ही एक दिन चपला ने कहा—हम लोगों को कलकत्ता आये कितने दिन हुए?

सुप्रकाश ने हिसाब लगाकर चौंकते हुए कहा—एक साल से ज्यादा हो गये।

—हाँ, हम लोग नवम्बर में आये थे और यह दिसम्बर चल रहा है, एक साल से कुछ ऊपर हुआ—चपला ने कहा।

सुप्रकाश सुनकर चिन्तित हो गया। वह बोला—और रुपये क़रीब-क़रीब ख़त्म होने पर हैं।

—हाँ—चपला ने धीरे से कह दिया, फिर जैसे उसे एक बात को कहने का मौक़ा मिल गया, उसने कहा—तो फिर तुम जो कहा करते थे सिविल मैरेज, सो करा क्यों न लिया जाय?

सुप्रकाश ने यन्त्रचालितवत् कहा—हाँ, कर लिया जाय—किन्तु फिर रुखाई के साथ कहा—क्या कोई जल्दी है?

चपला खिन्न होकर बोली—एक साल से ऊपर हो गया और तुम्हें अभी जल्दी ही मालूम दे रहा है।

—तुम तो विवाह-प्रथा में विश्वास ही नहीं रखती?—सुप्रकाश ने कहा।

—ठीक है मैं नहीं रखती, किन्तु दुनिया तो रखती है। मैं तो समझती हूँ सिक्कों की कोई ज़रूरत नहीं, हरेक अपनी शक्ति भर

उत्पादन करे और जिसको जो ज़रूरत हो वह उसको ले जाय, तो इससे वर्तमान युग में सिक्कों की अव्यवहारिकता तो नहीं प्रमाणित होती। जब तक सिक्के हैं तब तक मुझे भी सिक्के इस्तेमाल करने पड़ते ही हैं।

सुप्रकाश ने हँसकर कहा—तुमसे तर्क में जीतना मुश्किल है चपला, तुम अरिन्दम की शिष्या हो न—कहने को तो वह अरिन्दम पर फब्ती कस गया जो चपला पर और भी तीव्रतर फब्ती थी, किन्तु उसके मनमें अफसोस हो रहा था कि अनर्थक ही अरिन्दम को वह इस बातचीत में घसीट लाया, और इस प्रकार ताना कसा। उसके मन ने कहा यह उचित नहीं, नहीं यह उचित नहीं।

चपला इस पर बहुत नाराज़ हो गई, उसने कहा—उनकी शिष्या होती तो तुम्हारे साथ नहीं आती।

एक मुहूर्त में सुप्रकाश का अफसोस जाता रहा। उसने बिना सोचे ही हँसते हुए कहा—हाः हाः तो तुम उन्हीं के साथ रहती न? —रहती शब्द पर एक विशेष तरीके से ज़ोर दिया गया था।

—जी नहीं, उनको और भी काम है, आपकी तरह उनका काम मासूम स्त्रियों की जिन्दगी नष्ट करना नहीं है, उनको और भी काम है।—घृणा के साथ चपला ने हा।

—याने?

—......

—याने मैंने तुम्हारी जिन्दगी नष्ट की।

इस पर चपला ने और भी बुरा-भला कहा, और बड़ी देर तक दोनों में झगड़ा होता रहा। चपला ने कहा - तो तुम सिविल मैरेज नहीं करोगे?

—नहीं।

चपला ने फिर प्रश्न दुहराया, तो सुप्रकाश ने कहा—नहीं, नहीं, नहीं।

चपला स्तंभित होकर चुप हो गई, फिर एकाएक चिल्ला पड़ी—नीच, लम्पट, बदमाश—और बड़े ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी।

थोड़ी देर तक तो सुप्रकाश रोना चुपचाप देखता रहा, फिर वह समझाने लगा, और माफी माँगने लगा।

आधे घंटे बाद दोनों एक साथ बैठे खाना खा रहे थे। जैसे दो कपोत-कपोती। सुप्रकाश कह रहा था—बस तुम अरिन्दमजी की तारीफ मेरे सामने मत किया करो।

चपला ने इसके उत्तर में कहा—तुम फ़जूल ही उनसे डाह रखते हो। यक़ीन मानो ऐसे हज़ारों अरिन्दमजी तुम पर न्यौछावर हैं। मैंने तो यों ही कह डाला था।

इस प्रकार इन दिनों बड़े भयंकर-भयंकर झगड़े इनमें होते, और इनसे भी और आश्चर्यजनक तरीके से इनके झगड़े कभी एक दिन, कभी दो दिन, कभी तीन दिन में मिट जाते। जब पहला बड़ा झगड़ा हुआ तो वे दोनों समझते थे कि यह झगड़ा न मालूम कैसे हो गया, किन्तु जब ऐसा कई-कई बार हुआ तो हरेक सन्धि के बाद दोनों पक्ष समझ लेते फिर झगड़ा जरूर होगा।

—२४—

जेल में रहते-रहते अरिन्दम का मन शांत हो गया। चपला के मामले में जो पराजय की ग्लानि उसे हुई थी वह धीरे-धीरे मिटने लगी। उसने जब अपने चारों ओर सैकड़ों आदमियों को क़रीब-क़रीब नङ्गा तथा सब तरह की शिक्षा तथा नैतिकता से दूर देखा तो वह अपने को और अपनी छोटी-छोटी तकलीफ़ों को भूल गया। इन लोगों के जीवन का वृत्त कितना छोटा है। ये अपराधी हैं, किन्तु अरिन्दम ने सोचा क्या देश की आम जनता शिक्षा में इन पकड़े गये अपराधियों से अग्रसर है? आश्चर्य है कि इस आम जनता के विषय में

अरिन्दम इतना कम जानता है, और वह साहित्यिक है ? अरिन्दम को बड़ा दुःख हुआ अपनी इस न्यूनता पर, उसने अपने को लिखने का अधिकारी ही नहीं समझा और बात की बात में उसने लिखना छोड़ दिया। किशोर जब हर बार मिलने आकर पूछता—कुछ लिखा ? —तो इसके उत्तर में अरिन्दम कहता—नहीं, लिखना ही बड़ा काम नहीं है, हमारे चारों तरफ जो उथल-पुथल हो रहा है, जो शोषित महामानव का अँगड़ाई लेकर उत्थान हो रहा है उसमें हमारा क्या भाग है ?

किशोर ने आश्चर्य के साथ अरिन्दम की बातें सुनीं, किन्तु तर्क करने की स्पृहा उसमें नहीं थी। यह बात तो उसके निकट भी स्पष्ट हो गई कि अरिन्दम में एक महान् परिवर्तन हो रहा है, यह परिवर्तन अच्छाई के लिये हो रहा है या बुराई के लिये यह समझना किशोर के लिये मुश्किल था। किशोर ने इसकी ज़रूरत भी नहीं समझी कि अभी से इसका तख़मीना लगाये।

दस महीने में ही अरिन्दम अपनी सज़ा काटकर छूट गया। अरिन्दम ने छूटकर देखा दुनिया उसी रफ़्तार से चल रही है जैसे वह पहले चला करती थी। फिर भी उसको छूटने में ख़ुशी ही हुई, एक ख़ुशी जो कि उसकी समझ में नहीं आई क्यों हुई; किन्तु उसके पास इतना समय नहीं था कि वह इस पर सोचे क्यों और कैसे। जेल में रहते समय अरिन्दम ने देश-दर्शन किया था याने उसका आरम्भ, और आत्मदर्शन, अब वह इस नई रोशनी के मुताबिक़ काम करना चाहता था। लेखक से वह अब एक कर्मी होना चाहता था, वह उस संघर्ष में भाग लेना चाहता था जो हर समय ब्रिटिश साम्राज्यवाद में और भारत में चला आ रहा है। वह जानता था इस संघर्ष में विपत्तियाँ हैं, किन्तु तभी तो वह ख़ुशी से उसमें कूद पड़ना चाहता था। ये विपत्तियाँ उसे निवृत्त नहीं करती थीं, बल्कि लुभाती थीं। अब अरिन्दम केवल लेखक रहने के लिये तैयार नहीं था। किशोर से

उसने कहा—इस जीवन में दो ही चीज़ में आनन्द है, संघर्ष में और प्रेम में, प्रेम हरेक को नहीं मिल सकता किन्तु संघर्ष का द्वार विशेष-कर हमारी तरह पराधीन देश में हरेक के लिये खुला है।

किशोर ने पूछा—तो आपने लिखना छोड़ दिया? यह हमारे लिये बड़ा भारी दुर्भाग्य होगा।

अरिन्दम ने कहा—नहीं—किन्तु वह दूसरी ही बात सोच रहा था, वह सोच रहा था संघर्ष तो उसने सारी ज़िन्दगी किया, हाँ, उस संघर्ष का दायरा व्यक्तिगत था, किन्तु यह प्रेम का सिंहद्वार उसके लिये क्यों एकदम बन्द रहे? यह बात उसे बुरी मालूम हुई। प्रेम की बात स्मरण आते ही उसे न मालूम क्यों चपला की बात याद आई। जेल में रहते समय उसने न चपला के सम्बन्ध में कुछ पूछा था न किसी ने कुछ कहा था। भला वह कहाँ है? एकदम अप्रासंगिक तौर पर अरिन्दम ने किशोर से पूछा—चपला आजकल कहाँ है?

—जब से भाग गई तब से कुछ पता नहीं।

—सुप्रकाश का कुछ पता है?—फिर भी अरिन्दम ने पूछा यद्यपि वह जानता था कि दोनों एक साथ भागे हैं।

—हाँ, उसको किसी ने दो-तीन महीने पहले कलकत्ते में देखा था, वह शायद वहीं है। उसके घरवालों ने उसकी बड़ी तलाश कर-वाई, लेकिन कलकत्ते में कुछ पता नहीं चला।

अरिन्दम ने कुछ नहीं कहा, किन्तु उसने अब तक जितनी योज-नायें अपने सम्बन्ध में बनाई थीं कि वह जाकर किसी गाँव में रहेगा वह सब गड़बड़ा गईं।

किशोर ने कहा—सुप्रकाश कोई सात सौ के क़रीब रुपये ले गया है, संभव है उसने कुछ काम भी कर लिया हो, इसलिये वे जल्दी लौटेंगे ऐसी उम्मीद नहीं।

—अच्छा तो है दोनों सुख से रहें, लौटें या न लौटें—कहने को तो अरिन्दम ने यह कह तो दिया, किन्तु उसका चेहरा फक् पड़ गया।

हँसने की क्षीण चेष्टा करते हुए अरिन्दम ने कहा—इसके माने हैं कि चपला ने उसे सुधार लिया।

—या ख़ुद भी उसके साथ गिर गई—किशोर ने ज़रा रुखाई के साथ कहा।

—गिर क्या गई, किसी न किसी पुरुष को उसे जीवनसङ्गी बनाना था, उसने उसे बनाया, इसमें बेजा क्या है किशोर ? और जब सुप्रकाश सुधर गया है, और एक भले आदमी की तरह कामधन्धा भी कर रहा है तो उसको बुरा पात्र क्यों समझा जाय—अरिन्दम ने जैसे अपने से ही तर्क किया।

किशोर ने कहा—आप जो कुछ भी कहें मुझे उस पर एतबार नहीं है, वह कुछ न कुछ गुल खिलाकर ही रहेगा।

अरिन्दम को किशोर की बात पर पूर्ण विश्वास था, किन्तु फिर भी उसने कहा—यह तुम्हारा अन्याय है, किशोर ! इसका अर्थ है कि तुम मनुष्य की स्वाभाविक भलाई में विश्वास नहीं करते। मेरी तो धारणा है बिगड़ा हुआ आदमी जल्दी सुधर सकता है।

—किन्तु उस में फिर बिगड़ने की याने relapse की सम्भावना है। सम्भव है उसने अब तक चपला को छोड़ दिया हो, और कहीं और ही जाकर पड़ा हो।

अरिन्दम के दिल में भी कुछ ऐसा डर था, किशोर के मुँह से सुनकर उसे उसकी वास्तविकता की सम्भावना में और भी विश्वास हो गया। किशोर ने और भी कहा—रामनारायण तो कहता था सुप्रकाश चपला को बेच लेगा।

अरिन्दम ने कहा—रामनारायण बदमाश है—और क़हक़हा लगाकर हँस पड़ा।

जो कुछ भी हो इसके बाद से अरिन्दम ने गाँव में जाने का कार्यक्रम छोड़-सा दिया और शहर की विभिन्न राजनैतिक संस्थाओं में

ज़ोरदार तरीके से भाग लेने लगा। हाँ, इनके सिलसिले में उसे अक्सर गाँव भी जाना पड़ता। रोज़ सबेरे वह इस आशा को लेकर उठता था कि कोई अनहोनी बात होगी, और चपला की या तो उसे ख़बर मिलेगी या चपला ही उसके सामने उपस्थित होगी, किन्तु न ख़बर ही मिली न चपला ही लौटी। दिन के बाद हफ़्ते, और हफ़्ते के बाद महीने बीतने लगे। अरिन्दम ने देखा जेल में उसका जीवन जैसे निःसङ्ग था अब भी वैसा है। इस बात को सोचकर उसे ख़ुशी नहीं हुई।

—२५—

सुप्रकाश और चपला को कलकत्ता आये हुए सवा साल हो गया था। रुपये क़रीब-क़रीब ख़तम हो चुके थे, किन्तु सुप्रकाश न तो ख़ुद ही कुछ कर रहा था न चपला को ही कुछ करने दे रहा था। जब-जब उसके सामने यह प्रश्न पेश किया जाता था वह टाल जाता था। सुप्रकाश के रुपये पहले ही ख़तम हो चुके थे, अब चपला के भी रुपये ख़तम हो रहे थे। केवल सौ रुपये के नोट और कुछ फुटकर रुपये बचे थे। चपला इस बात से बहुत परेशान थी। अन्त में एक दिन उसने गम्भोरता के साथ यह बात सुप्रकाश के सामने रक्खी। सुप्रकाश गम्भीर हो गया, किन्तु फिर टाल गया।

चपला ने देखा सुप्रकाश टाल तो गया, किन्तु बराबर गम्भीर बना रहा। दूसरी बार की तरह बिल्कुल निश्चिन्त नहीं हो गया। दूसरे दिनों की तरह उसने सारा सबेरा जासूसी उपन्यास पढ़ने में नहीं बिताया, बल्कि वह कुछ सोचता रहा। मालूम होता था वह किसी भयंकर उधेड़बुन में पड़ा है, और कोई कठिन प्रश्न के समाधान पर पहुँचना चाहता है। बिछौने पर लेटे-लेटे वह कुछ पुराने पत्रों को पढ़ता रहा। ये पत्र दो-तीन साल के पुराने थे। चपला ने इनको पढ़ा था, इनमें कोई ऐसी बात नहीं थी। एक दोस्त से दूसरे

दोस्त को लिखे हुए मामूली भावुकता भरे पत्र थे। चपला इन पत्रों की हरेक पंक्ति से परिचित थी, किन्तु आज सुप्रकाश को इन पत्रों को पढ़ते देखकर उसके मन में एक अस्पष्ट आशंका होने लगी। दुपहर के खाने के समय भी सुप्रकाश अधिकतर अन्यमनस्क ही रहा। खाने के बाद वह रोज़ सोया करता था, कम से कम दो घंटा सोता, किन्तु आज वह सोया नहीं। लेटकर वह छत की ओर शून्य दृष्टि से देखता रहा। कोई दो बजे के समय चपला ने देखा कि एकाएक सुप्रकाश की यह अन्यमनस्कता दूर हो गई, और वह सीटो देते हुए लेटे-लेटे आधा पढ़ा हुआ जासूसी उपन्यास पढ़ने लगा। ख़ैर अधिक देर वह उपन्यास भी न पढ़ सका, और उठकर दाढ़ी बनाने लगा। इन दिनों सुप्रकाश अपने चेहरे पर क़रीब-क़रीब कोई ध्यान नहीं देता था, दाढ़ी बनाये कई-कई दिन हो जाते थे। आज लेकिन उसने बड़े यत्न के साथ दाढ़ी बनाई, और यद्यपि उसका कपड़ा केवल परसों का ही पहिना हुआ था, (आजकल के उसके मानदंड से पाँच दिन से पहले कपड़े बदलना शौकीनी और फ़ज़ूलखर्ची थी) फिर भी कपड़े निकालकर बदले। चपला को आश्चर्य हो रहा था, पूछ बैठी—क्या बात है प्रकाश, आज मुझसे शादी करोगे क्या ?

सुप्रकाश टाल गया, बोला—तुम स्त्रियाँ रोज़-रोज़ सजती हो, एक दिन अगर हम लोग सजें तो बस अनर्थ हो गया। हम पुरुषों ने तुम लोगों को इतना सिर पर चढ़ा दिया कि तुम लोग समझती हो कि दुनिया की सब अच्छी चीज़ों पर तुम लोगों का ही अधिकार है।

—तो यही इतनी देर से सोच रहे थे ? तो क्या अब सिर पर चढ़ाई हुई को सिर से उतारने जा रहे हो ?—चपला ने इस बात को व्यंग से कहीं अधिक गम्भीरता से कहा।

सुप्रकाश ने ध्यान से चपला के मुँह की ओर देखा, फिर एकाएक हँस पड़ा, बोला—तुम्हारे ही अनुसार चलने की तैयारी है महारानी ! आज से मैं नौकरी खोजने निकलूँगा।

चपला को इस बात से दुःख हुआ, वह पछताई कि अब तक वह सुप्रकाश को कितना ग़लत समझ रही थी।

पाँच बजे के क़रीब सुप्रकाश घर से नौकरी खोजने निकला। जब सुप्रकाश को गये कोई एक घंटा हो चुका, और क़रीब-क़रीब अँधेरा हो चला, रास्ते में तथा मकानों में बिजली की बत्तियाँ जल गईं, तब चपला के दिमाग़ में यह बात आई कि भला शाम को कौन से दफ़्तर खुले रहते हैं कि सुप्रकाश नौकरी खोजने गया। कहीं ऐसा न हो कि वह उसे छोड़कर बनारस भाग जा रहा हो। यह बात उसके दिमाग़ में आते ही उसने उसे सच मान लिया। हाँ, तभी उसने रात में सर्दी से बचने के लिये उस दूसरे कोट को पहना, नौकरी खोजना सब ढोंग-मात्र था। उसने रुपये भी ज़रूर लिये होंगे। चपला ने अपने रुपये गिने, सब ठीक थे। क्या पता उसके अपने ही पास कुछ रुपये थे जिनका उसे पता न हुआ हो। फिर सुप्रकाश बिना टिकट के भी तो जा सकता है, पहले कई बार वह ऐसा कर चुका है।

चपला ने घड़ी की ओर देखा छै बजकर दस मिनट थे। बनारस की ओर गाड़ी सात बजकर कई मिनट पर जाती है। अब भी समय है। उसने झटपट नोट, रुपये और जो कुछ बहुमूल्य चीज़ थी उनको समेटा, मकान में ताला लगाया और पहली टैक्सी जो मिली उस पर चढ़ बैठी, और बोली—हावड़ा स्टेशन।

टैक्सी हवा से बातें करने लगी। चित्रपट की तस्वीरों की तरह कलकत्ता का आधा उसकी आँखों के सामने से निकल गया। सात बजने के बीस मिनट पहले वह हावड़ा स्टेशन के प्लैटफार्म पर टहल रही थी। हावड़ा स्टेशन एक बहुत ही बड़ी चीज है, किन्तु जिस प्लैटफार्म पर बनारस के लिये गाड़ी छूटती है उस पर देख-रेख रखना कोई बड़ी बात नहीं। चपला उसी पर इधर से उधर टहलती रही, कोई पन्द्रह मिनट उसे टहलते हुए हो गए थे, किन्तु कहीं पर सुप्रकाश

की छाया भी नहीं दिखाई पड़ी। वह मन ही मन पछता रही थी कि किस तरह उसने बात की बात में तीन रुपये पर पानी फेर दिया। इस समय एक-एक पैसा उसके लिये मूल्यवान है। बेचारा सुप्रकाश तो नौकरी की तलाश में कलकत्ते की ख़ाक छान रहा होगा, और वह इस तरह एक व्यर्थ के सन्देह में पड़कर परेशान हो रही है और मुहरों से ज्यादा मूल्यवान रुपयों को पानी में डाल रही है। चपला ने तय किया कि जाते समय वह पैदल तथा ट्राम से जायगी जिससे पैसों की बचत हो।

गाड़ी का समय हो रहा था। ख़ाली प्लेटफार्म बात की बात में कोलाहल का केन्द्र हो गया। खोञ्चेवाले, कुली सब इधर से उधर बड़े जोर से आने-जाने लगे। चपला का दम घुट रहा था, उसने तय किया अब चला जाय, तदनुसार वह अन्यमनस्क हालत में लौट रही थी। हाथ में उसका एक नन्हासा बैग था। वह इधर-उधर बिना देखे ही सीधी लौट रही थी। एकाएक एक महाशय से उसको धक्का लग गया, चपला ने कहा Excuse me sir, और उसकी ओर देखा। अरे आश्चर्य, यह तो सुप्रकाश था। चपला ने घूमकर कहा—अरे! प्रकाश तुम?

—हाँ—सुप्रकाश का ऐसा हाल था कि काटो तो लहू नहीं, किन्तु वह सँभल गया, बोला—तुम यहाँ कैसे?

चपला के माथे पर पसीने की बूँदें आ गई थीं, उसने कहा—पहले बताओ तुम यहाँ कैसे?

सुप्रकाश ने बिल्कुल स्वाभाविक तौर पर कहा—ख़ूब प्रश्न रहा, मैं नौकरी खोजने निकला था, सो सुना रेल में एक नौकरी खाली है उसीके लिये दौड़कर यहाँ आया।

चपला उलाहना के तौर पर कुछ कहने जा रही थी, किन्तु रुक गई, बोली—मैंने भी सोचा तुम्हारी नौकरी मिलने पर तुम्हें बधाई देनेवाली मैं ही होऊँ इसलिये मैं चली आई......

—ओह ! सुप्रकाश ने कहा, क्रोध से उसका चेहरा तमतमा रहा था, किन्तु उसने हँसते हुए कहा—चपला, तुम मेरी बेकारी और ग़रीबी का मज़ाक उड़ा रही हो ?

चपला ने ध्यान से सुप्रकाश के चेहरे को देखा जैसे उसके हृदय की सारी बातों को पढ़ने की चेष्टा कर रही हो। उसने कहा—अब तो नौकरी खोज चुके, अब घर चलो।

—मतलब ?—क्रोध को रोकने में असमर्थ होकर सुप्रकाश ने क़रीब-क़रीब चिल्लाकर कहा।

चारों तरफ लोग आ-जा रहे थे। गाड़ी प्लेटफार्म पर आकर लगी थी। बातचीत करने के लिये यह कोई अच्छी जगह नहीं थी, हर मिनट किसी से धक्का लगता था, किसी से धक्का बच जाता था। चपला ने कहा—घर चलो तो मतलब बताऊँगी।

सुप्रकाश फिर भी नहीं सँभला, उसने कहा—क्या मतलब बताओगी ? तुम समझती हो मैं भाग जा रहा हूँ, तभी तुम मेरे पीछे-पीछे आई, किन्तु यह बताओ यदि मैं अभी चला जाना चाहूँ कोई मुझे रोक सकता है ?—प्लेटफार्म पर खड़ी गाड़ी की ओर एक क़दम बढ़ाते हुए उसने कहा—अगर मैं इस गाड़ी पर चढ़ना चाहूँ तो कोई मुझे रोक सकता है ? तुम मुझे रोक सकती हो ?

—नहीं—गंभीर शान्त स्वर में चपला ने कहा।

—फिर क्यों तुम मेरे पीछे-पीछे आई ?

—मैं तुम्हें रोकने नहीं आई, मैं तुम्हारे साथ जाने के लिये आई। तुम्हारे साथ जाने का मेरा अधिकार है यह तो तुम मानते हो न ?—चपला ने और भी अधिक शान्ति से किन्तु दृढ़ता से कहा।

सुप्रकाश ने आश्चर्य के साथ कहा—तुम मेरे साथ कहाँ जाती ?

—जहाँ भी तुम जाते। बनारस जाती।

सुप्रकाश हक्काबक्का हो गया। उसने देखा हेकड़ी से काम न बनेगा,

—चलो अब घर चलें, मालूम हुआ कि तुम बड़ी पतिव्रता हो, चलो अब लौटें।

चपला और सुप्रकाश रवाना हो गये, किन्तु रवाना होने के पहले चपला ने कह दिया—मुझे पतिव्रता क्यों कहते हो? तुम मेरे पति नहीं हो।

सुप्रकाश हँसा, आजकल वह इस तरह बहुत हँसा करता था, बोला—फिर कौन तुम्हारा पति है?

चपला चुप रही, फिर बोली—प्रकाश तुम इतना समझ लो, तुम किसी स्त्री के पति होने लायक़ ही नहीं हो।

दोनों चुपचाप घर लौट गये। दोनों साथ थे, किन्तु एक दूसरे से क़रीब-क़रीब अपरिचित हो गये थे।

चपला अब उसे घर से कहीं अकेला जाने नहीं देती थी। सुप्रकाश कहता था ऐसा करोगी तो नौकरी कैसे तलाश करूँगा, किन्तु चपला एक नहीं सुनती थी—चिल्लाने लगती थी। सुप्रकाश परेशान हो गया था, उसकी कुछ समझ में नहीं आता था कि क्या होने वाला है।

सुप्रकाश किसी तरह से इस झगड़े से छूटना चाहता था। अब उसे रात को नींद नहीं आती थी, भूख नहीं लगती थी, जो खाता वह हज़म नहीं होता था। चपला उसकी ऐसी कड़ी निगरानी करती थी कि एक मिनट वह उससे बचकर नहीं जा सकता था। वह भागना नहीं चाहता था, क्योंकि उसे विश्वास हो गया था कि चपला ज़रूर उसका पीछा करके पहुँच जायगी। सुप्रकाश को कभी-कभी आत्म-हत्या तक की इच्छा होती थी। इस तरह कुछ दिन गये। सुप्रकाश बैठा रहता, और बैठे-बैठे चाय का प्याले पर प्याला चढ़ाता।

एक दिन सुप्रकाश ने कहा—चाय पीते-पीते थक गया, कोको कुछ बचा है? बड़ा पीने का जी चाहता है—आज सुप्रकाश और चपला में रात से बातचीत हो रही थी। कई दिन बाद आज इनका सम्बन्ध हुआ था।

चपला ने कहा—इस गर्मी में कोको ? पिओ मैं तो नहीं पिऊँगी।

सुप्रकाश बोला—ख़ैर मैं पिऊँगा, बनाओ।—सुप्रकाश ने मुँह ऐसा बना लिया जैसे उसके हृदय को बड़ी ठेस लगी हो।

चपला को इससे दुःख हुआ, चोट पहुँचाना उसका उद्देश्य नहीं था। उसने कहा—ख़ैर लो मैं पिऊँगी, लेकिन बनाओ तुम ही, मुझे तो इसका बनाना कभी आया ही नहीं।

सुप्रकाश उठा और बड़ी तैयारी से उसको बनाया, पन्द्रह मिनट बाद दो प्याले तैयार हुए। कोको क्या था कोको की खीर थी। प्यालों को मेज़ पर रखते हुए सुप्रकाश ने एक प्याला चपला की ओर बढ़ाते हुए कहा—लो पिओ।

चपला ने कहा—नहीं, मैं इतना नहीं पिऊँगी, मुझे वह प्याला लाओ।

सुप्रकाश ने कोको बनाने में मिहनत की थी यह उसके सिर पर आए हुए पसीने से ही ज़ाहिर था। सुप्रकाश ने कहा—ज्यादा कहाँ है, उतना ही है, पिओ।—कहकर उसने उसी प्याले को बढ़ा दिया, किन्तु चपला ने माना नहीं। वह कहती रही, उसके प्याले में ज्यादा है, मजबूरन प्याला बदलना पड़ा। चपला और सुप्रकाश दोनों कोको पीने लगे। चपला धीरे-धीरे पीती रही, किन्तु सुप्रकाश अपने स्वभाव के प्रतिकूल एक ही दफे में पूरा प्याला चढ़ा डाला।

चपला कोको पीकर उठने लगी, सुप्रकाश ने गंभीर होकर उसे उठने से मना किया—बैठो।

सुप्रकाश का चेहरा गंभीर था, चपला बैठती हुई व्यग्रता के साथ बोली—क्यों ? क्यों ?

—बैठो, बताता हूँ। अब से दो घंटे के अन्दर ही मैं मर जाऊँगा—सुप्रकाश ने कहा।

चपला समझ नहीं पाई कि यह कोई दिल्लगी है या सच बात।

सुप्रकाश का चेहरा पहले से अधिक गंभीर हो गया था, ज़रूर कुछ है। चपला एकाएक उठकर बोली—क्यों कुछ तबियत खराब है ?

—तबियत ख़राब की गई है। मैंने अपने हाथ से अभी ज़हर पिया है—अपने प्याले को उठाकर सुप्रकाश ने कहा—इस प्याले में ज़हर था, मैं तुमको देना चाहता था, लेकिन कुछ घटनाक्रम ऐसा पड़ा कि वह मेरे ही हिस्से में आया। बैठो, जब तक मैं एक चिट्ठी लिख लूँ—उसने पास से एक काग़ज उठाया, और जल्दी से कुछ लिखकर जेब में डाल लिया।

चपला बैठी नहीं, उसको जैसे मूर्छा आ रही थी। सुप्रकाश कहता गया—मैंने यह तय कर लिया था कि तुम रहोगी या मैं, भाग्य ने चाहा मैं न रहूँ। यह अच्छा ही हुआ। बैठो, इस तरह ताको मत जैसे मैं कोई भूत हूँ। मैं अभी भूत नहीं हूँ, किन्तु दो घंटे में हो जाऊँगा। बैठ जाओ। अच्छा, पहले एक गिलास पानी पिलाओ, फिर बैठो।

चपला ने जल्दी से एक गिलास पानी सुप्रकाश को दिया, वह फूट-फूटकर रोने लगी।

पानी को सड़ से पीते हुए सुप्रकाश ने कहा—तुम बहुत अच्छी हो चपला, तुम मेरे लिये रो रही हो, किन्तु तुम भूली जा रही हो कि मैंने तुम्हें जहर देने के लियेही कोको का स्वाँग रचा। चपला, तुम बहुत अच्छी हो, किन्तु तुम्हारी अच्छाई ने ही मेरा सत्यानाश कर दिया। काश तुम मेरी चालों में न आती। तुमसे मुझसे परिचय पुराना था, तुम मुझसे दोस्ती चाहती थी, किन्तु मैं तुम्हें नहीं चाहता था। काश मैं अन्त तक अपने निश्चय पर डटा रहता। लड़कपन से ही मैं बिगड़ चुका था, किसी भी लड़की से मिलने से मैं डरता था। तुमसे भी। तब तुमने मेरा परिचय अरिन्दमजी से कराया।

बीच में बात काटकर चपला ने ड़ाक्टर बुलाने की बात कही, किन्तु सुप्रकाश ने कहा—नहीं, डाक्टर कुछ नहीं कर सकता, कहने

दो। अरिन्दमजी वाकई एक अत्यन्त महान् व्यक्ति थे, बुरा न मानना, न आश्चर्य करना, किन्तु जीवन में मैंने केवल एक आदमी को सम्मान या प्रेम की दृष्टि से देखा, वे अरिन्दमजी हैं—चपला और जोर से फूट-फूटकर रोने लगी—चुप रहो! मुझे उनके पास आते ही यह उम्मीद हो गई कि अब मैं फिर से एक आदमी हो सकूँगा। चपला तुम मुझे उनके पास लाई जरूर, किन्तु तुमने मुझे उनके अधिक पास जाने नहीं दिया। तुम बराबर हम दोनों के बीच आगई। तुम्हें अरिन्दमजी चाहते थे, तुम उन्हें जो चाहे सो समझा सकती थी। हाः हाः तुम मुझे सुधारना चाहती थी, किन्तु तुमने मुझ गिरे को और गिराया, खुद गिरी, और तुमने अरिन्दमजी को भी गिराया। खैरियत यह है कि वे जेल चले गये।

जेल चले गये?—चपला ने आश्चर्य से पूछा।

—हाँ, जेल चले गये, उस आखरी नाटक के बारे में उनको सजा हुई थी। जिस दिन वे गिरफ़्तार हुए थे उसी दिन मैं तुम्हें लेकर भाग आया था। यह भी मेरा एक ख़ब्त था, किन्तु मैं उसके लिये दाम दे रहा हूँ—उसका चेहरा कड़वा हो गया—जब मैं अरिन्दमजी के अधिक पास न जा सका, तब मेरे दिमाग में यह ख़्याल आया कि मैं उनको तुमसे अलग कर दूँ। याद रखना मैंने तुमको एक मिनट भी प्यार नहीं किया। फिर भी मैं तुमको खींचता रहा। तुमको मैंने झूठ बोलकर अरिन्दमजी के नाटक के अभिनय में जाने नहीं दिया, मुझे स्वयं अरिन्दमजी का लिखा हुआ निमन्त्रणपत्र मिला था। वह आदमी शरीफ था, काश वह इतना शरीफ न होता।

वह ठहर गया, जैसे थक गया हो। उसके अन्दर विष की क्रिया आरम्भ हो चुकी थी। चपला उसी तरह रोती हुई सुप्रकाश के पास आ गई। सुप्रकाश ने फिर कहना शुरू किया—मेरे मरने से जिससे कि तुम्हें पुलिस आदि से कोई परेशानी न हो इसलिये मैंने आत्महत्या

की है यह बात एक पुर्जे में लिखकर जेब में रख छोड़ा है। तुमसे कोई अधिक न पूछेगा। एक काम मेरे तरफ से करना। वह यह कि मेरे तरफ से पैर छूकर अरिन्दमजी से माफी माँग लेना। आज मुझे तुम्हारा अफसोस नहीं है, अपने मरने का भी अफसोस नहीं है, मुझे अफसोस है तो यही कि अरिन्दमजी को पाकर भी मैंने नहीं पाया। मैं बड़ा अभागा हूँ। मैंने उस महान् आत्मा को अनर्थक कष्ट दिया, जलील किया, गिराया। मुझे इसीका अफसोस है, किन्तु अब क्या हो सकता है...

सुप्रकाश चुप हो गया, विष की क्रिया तीव्र हो चुकी थी। उसके मुँह पर मृत्यु की छाया थी। वह बेहोश हो गया, उसके मुँह से फेन निकलने लगा। चपला ने डाक्टर बुलवाया, शायद कोई आशा हो, किन्तु डाक्टर आने के पहले ही वह मर चुका था। चपला कुछ देर रोती रही, फिर उसको अपने रोने की आवाज अपने को ही बुरी मालूम पड़ी, उसे मृतक की अन्य क्रियाओं की व्यवस्था करनी थी। जीवन के इस अध्याय का अन्त हो चुका था। कोई हिचकिचाहट या उधेड़बुन न थी, अब आगे जो होगा, देखा जायगा।

—२६—

अरिन्दम जिस तेजी से राजनैतिक कामों में कूद पड़ा, उससे सब लोग चकित हो गये। वह अब भी लिखता था, किन्तु कम। अब अरिन्दम कहता था— साहित्य से जीवन बड़ा है, जीवन का कुछ अंश लेकर ही साहित्य बड़ा होता है, मैं जीवन चाहता हूँ, जीवन।

इबसन, शा, रोम्याँ रोलाँ, अनातोल फ्राँस, रवीन्द्रनाथ, शरत्चन्द्र आदि को छोड़कर अब अरिन्दम मार्क्स, लेनिन, गांधी को पढ़ता था, थोड़े ही दिनों में वह इनमें पारंगत हो गया। किसानों, मजदूरों,

छात्रों, साहित्यिकों सबमें अरिन्दम का प्रभाव था। विशेषकर साहित्यिकों में वह एक नई दृष्टि का प्रतिपादक था। अब भी अरिन्दम के इर्दगिर्द एक बड़ी गोष्ठी है, किन्तु अब वह गोष्ठी मुख्यत: साहित्यिक नहीं थी। किशोर और रूपकुमारी की शादी हो चुकी थी, अरिन्दम इनको बेटा-बेटी की तरह मानता था। जिस दिन किशोर की शादी हुई थी उस रात को अरिन्दम को नींद नहीं आई, उसे मालूम हुआ जैसे वह जी रहा है, किन्तु उसे जीने का कोई कारण नहीं। उसे मालूम हुआ था कोई अभाव उसका है जो उसके सारे कामों पर पानी फेर देता है।

अरिन्दम को यह मालूम होता था कि जो काम वह करता था वह सिर्फ अपने अन्दर के हाहाकार को छिपाने के लिये, अपने अन्दर के अभाव को भूल जाने के लिये। जिस संघर्ष को अरिन्दम जीवन की सबसे उपयोगी चीज समझता था, जिसको वह जीवन रूपी व्यंजना का नमक समझता था, वह संघर्ष इस रोजमर्रे की राजनीति में कहाँ है। वहाँ तो जो संघर्ष है वह चुनाव नौकरी नाम पैदा करने का झगड़ा है, उसमें अरिन्दम को कोई दिलचस्पी नहीं थी, बल्कि इन बातों से उसको राजनीति में वितृष्ण हो रही थी।

फिर भी वह राजनीति में काम करता था, क्योंकि काम करने में उसे आनन्द नहीं तो शान्ति मिलती थी। अक्सर समय को वह किशोर के यहाँ बिताता था। किशोर का द्वार उसके लिये बराबर खुला रहता था। रूपकुमारी उसकी ऐसी कद्र करती थी जैसे वह उसकी बेटी हो।

अरिन्दम जानता था कि केवल किशोर और रूपकुमारी ही नहीं सैकड़ों लोग उसको चाहते हैं, कद्र करते हैं, किन्तु जिस तृप्ति की तलाश में उसने राजनीति में प्रवेश किया था वह उसे प्राप्त नहीं हुई। अरिन्दम को मालूम होता था वह एक तीव्र अशान्ति में है,

किन्तु उसे ताज्जुब होता था जो लोग उसके इर्दगिर्द रहते हैं वे भी उसे नहीं समझते हैं। अरिन्दम यह भी समझता था वह बुड्ढा होता जा रहा है। उसने अब कसरत भी करना छोड़ दिया और बीमार पड़ गया। पहले बीमारी मामूली थी, कभी सिर दर्द तो कभी हाजमे का बिगड़ना, किन्तु धीरे-धीरे वह कमजोर होने लगा, और बिछौना ले लिया। नरेन्द्र के यहाँ ही वह रहा, किन्तु किशोर और रूपकुमारी की जिद के कारण वह उन्हीं के घर जाकर रहने लगा। रूपकुमारी उसकी इतनी सेवा करती थी कि अरिन्दम बीच-बीच में कह उठता था—लिखना मैंने छोड़ दिया, नहीं तो तुम पर एक शाहनामा लिखता।

एक दिन किशोर ने आकर कहा—बड़ी अच्छी खबर है।

रूपकुमारी और अरिन्दम दोनों ने एक साथ कहा—क्या ?

कांग्रेस मंत्रीमंडलों ने इस्तीफा दे दिया, जल्दी ही आन्दोलन छिड़नेवाला है, सारे देश में फिर से उथल-पुथल मचेगी और चूँकि पश्चिम में भयानक लड़ाई छिड़ी हुई है संभव है भारत स्वाधीन ही हो जाय।—किशोर ने १९३९ के आखीर का सब हाल सुना दिया।

अरिन्दम एकाएक उठ बैठा—मुझे विश्वास नहीं है। ऐसा होगा, किन्तु यदि आन्दोलन छिड़ जाय तो मैं जी जाऊँगा ! संघर्ष ही मुझे जिला सकता है, प्रेम तो मेरे भाग्य में रहा ही नहीं...... मालूम होता था अरिन्दम सब बातों को पूर्ण हृदय ढालकर कह रहा है। अरिन्दम फिर लेट गया, किंतु उसकी आँखें जल रही थीं। लेटे ही लेटे अरिन्दम ने कहा—रूपा, कल से मुझे सबेरे जगा देना, मैं कसरत करूँगा।

इस बीच में नरेन्द्र आकर खड़ा हुआ था, किसीने उसे नहीं देखा था। वह अरिन्दम के पास गया, और उसने उसके कान में कुछ कहा। अरिन्दम के स्नायुओं की परिश्रान्त बैटरियों में जैसे किसी ने फिर से बिजली भर दी। वह एकदम खड़ा हो गया, और नरेन्द्र के साथ चलने

को तैयार हो गया। रूपा देखकर घबड़ाई, किशोर भी हाँ हाँ करके उठा जैसे अनर्थ हो गया, किंतु नरेन्द्र हँसा। उसने धीरे से कहा—चपलाजी आई हैं—बस सब शान्त हो गये। नरेन्द्र ने ही अरिन्दम से कहा—आप बैठें न, उन्हें मैं दो मिनट में ऊपर लाता हूँ।

अरिन्दम बैठ गया। रूपा नरेन्द्र के साथ नीचे गई, किशोर वहीं बैठा रहा।

नरेन्द्र के साथ-साथ चपला जब कमरे में दाखिल हुई तो किशोर के मुँह से एक अरे सा निकला। चपला बहुत दुबली हो गई थी, किंतु इस दुबलेपन की राख के नीचे से उसके रूप की आग किसी से छिपी नहीं रह सकती थी। अरिन्दम ने खड़े होकर कहा—आओ चपला,—उसके व्यवहार में न क्रोध था, न क्षोभ था, न दुःख। चपला ने कहा—मैं जानती थी मेरे लिये आपका द्वार कभी बन्द नहीं होगा, इसी आशा से मैं आई ....

अरिन्दम कुछ कहने जा रहा था, किन्तु नरेन्द्र ने कहा—सुप्रकाश जी मर गये।

अरिन्दम जो कुछ कहने जा रहा था, भूल गया, बोला—कब? कब? क्या बीमारी थी?

—बीमारी नहीं थी, आत्महत्या कर ली। मरते समय आपकी बड़ी तारीफ करता था, आपसे हाथ जोड़कर माफी माँगने के लिये कह गया है—चपला ने कहा।

अरिन्दम की आँखों में आँसू आ गये, उसने कहा—समझी चपला, जब तुम उसे पहिले-पहल मेरे यहाँ लाई थी तो मेरे दिल ने कहा कि हम दोनो अच्छे दोस्त हो जायेंगे। कितना बुद्धिमान वह था, मुझी से शतरंज सीखकर मुझे हराने लगा था। लेकिन न मालूम क्या हो गया, उसके मेरे अन्दर एक खाईं पैदा हो गई, और रोज़ बरोज़ वह बढ़ती ही गई।......

बीच में बात काटकर चपला ने कहा—और वह खाई मैं ही थी, मैं उसको सुधारने के नाम से ले आई थी और मैंने ही उसे मार डाला।

अरिन्दम बोला—कोई किसी को मार नहीं सकता चपला, आदमी क्यों मरता है यह कोई नहीं जानता।

चपला बोली—मैंने ही उसे आपसे अलग रक्खा, क्योंकि मैं जानती थी कि वह यदि आपके पास आयेगा तो मेरे पंजे में नहीं आयेगा—चपला की आँखों में आँसू थे।

किशोर ने देखा बातचीत बहुत व्यक्तिगत हो रही है, उसको कौतूहल तो बहुत था, किन्तु भद्रता के तक़ाज़े के कारण उसने समझा आगे नहीं सुनना चाहिये। उसने अर्थपूर्ण दृष्टि से रूपकुमारी की ओर देखा, रूपकुमारी ने सबको सम्बोधन करके कहा—बातें फिर भी होती रहेंगी, आप लोग पहले खाने-पीने की तैयारी करें। चपलाजी मालूम होता है आज आई हैं।

—नहीं मैं कल आई। नरेन्द्र ने धीरज बँधाया तभी मैं साहस कर यहाँ आई नहीं तो नहीं आती। मैं अब अपने को इस योग्य नहीं समझती हूँ कि अरिन्दमजी के सामने आ सकूँ।

अरिन्दम ने पहले के दिनों की तरह कहा—होगा, होगा, जाने दो, मैं कोई फरिश्ता नहीं हूँ।

नहाने-खाने के बाद अरिन्दम के कमरे में बैठकर चपला ने सारी कहानी कह सुनाई। कहानी कहने में उसनें अपने हिस्से को सबसे काले रंग में चित्रित किया। अरिन्दम कहीं-कहीं एक छोटा प्रश्न पूछता, कहीं कह देता तो क्या हुआ—कहीं सान्त्वना देता—हममें से कौन दूध का धुला है ?

सब कहानी सुनकर अरिन्दम बड़ी देर तक चुप रहा, फिर बोला—तुम अपने सिर पर नाहक सबका दोष थोप रही हो। तुम्हारी

ग़लती इतनी थी कि तुमने समझा तुम सुधारने जा रही हो जबकि तुम्हारा उद्देश्य केवल उसे अपनाना था। सुधार का काम इस प्रकार नहीं हो सकता। मैंने पहले ही कहा रामनारायण को सुधारने की इच्छा तुममें क्यों नहीं हुई। यहीं पर सारी ग़लती थी। हम एक तो यह गुस्ताख़ी करें कि हम सुधार रहे हैं, फिर दूसरी यह करें कि किसे सुधारेंगे यह चुनें। ऐसा नहीं हो सकता। फिर सुधार का काम एक-एक व्यक्ति को लेकर नहीं हो सकता। इसमें करोड़ों वर्ष लग जायेंगे। हम इसके बजाय जड़ के कारणों को दूर करें, यही हमारा कर्त्तव्य है। सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिये समाज के ढाँचे का आमूल परिवर्तन करने की ज़रूरत है। देश के सामने इसका मौका आ रहा है। आओ हम इसमें भाग लें, साम्यवाद ही वह दवा है। मैंने जेल में देखा अपराधी समाज की उपज हैं। सुप्रकाश अगर बुरा था तो इसके लिये ज़िम्मेदार समाज है। मैं पहले भी कहा करता था पाप को घृणा करो पापी को नहीं, किन्तु अब मैंने ईसा के इस वाक्य को मार्क्स और लेनिन से मिलाकर पढ़ा तो पाया कि समाज को बदलना है। चपला अब तक मैं एक साहित्यिक के रूप में यह समझता था कि समाज की व्याख्या करना मेरा काम है, किन्तु अब मैंने पाया कि उसे बदलना ही मेरा काम है। आओ हम इसमें काम करें।

चपला ने उस दिन से साम्यवाद के अध्ययन में तथा मज़दूरों, किसानों में काम करने में सारा समय लगा दिया। अरिन्दम की तन्दुरुस्ती फिर ठीक हो गई। राजनैतिक-सामाजिक कामों के बारे में व्यस्तता के कारण दोनों कम मिल पाते हैं, किन्तु जब भी मिलते हैं तो वे सुप्रकाश को ज़रूर याद करते हैं। सुप्रकाश लोगों की आँखों में चाहे जो कुछ हो, किन्तु वह अरिन्दम की गोष्ठी की आँखों में सामाजिक अन्याय का एक बलिदान है। ऐसे कितने हैं। सुप्रकाश की बात यादकर इस गोष्ठी के लोगों को काम करने की अनुप्रेरणा मिलती है।

इतना लिखने पर भी साधारण पाठक के लिये उपन्यास ख़तम नहीं होता, वे पूछेंगे क्या चपला और अरिन्दम की शादी हुई या उनमें पति-पत्नी का सम्बन्ध हुआ; इस प्रश्न का उत्तर है, नहीं। दोनों के बीच में अब सुप्रकाश की लाश थी। चपला को इस शादी की ज़रूरत नहीं थी, अरिन्दम को इससे डर लगता था।

लेखक की अन्य रचनाएँ

१—ज़िच (उपन्यास)
२—सेक्स से सुख और जीवन
३—आधुनिक बंगला साहित्य
४—शरत्चंद्र : एक अध्ययन
५—अपराध
६—राष्ट्र और निर्माण

————